प्रगति के बढ़ते चरण

सयुक्त राज्य अमेरिका की अर्थ-व्यवस्था का
गौरवपूर्ण इतिहास

(सचित्र)

अनुवादक
कृष्णचन्द्र

1964
आत्माराम एण्ड संस
दिल्ली-6

PRAGATI KE BADHTE CHARAN

(Hindi edition of *The Permanent Frontiers*)

By the Staff of Institute of Economic Affairs

New York University

Translated by

Krishna Chandra

Rs 3 75

प्रकाशक
रामलाल पुरी, सचालक
आत्माराम एण्ड सस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

शाखाएँ
हौज खास, नई दिल्ली
चौड़ा रास्ता, जयपुर
विश्वविद्यालय क्षेत्र, चण्डीगढ़
महानगर, लखनऊ-६
रामकोट, हैदराबाद

मूल्य : तीन रुपया पचहत्तर पैसे
हिन्दी सस्करण 1964

मुद्रक
हिन्दी प्रिटिंग प्रेस
दिल्ली

प्रकाशक का निवेदन

यूरोप से जब पहले-पहल लोग नई दुनिया मे आबाद होने के लिए गए थे, तब उन्होने वहाँ जीवन के अपरिहार्य कष्टो और विपत्तियो की कोई परवाह नही की थी। पुरानी दुनिया के बन्धनो से मुक्त होकर स्वतन्त्र जीवन यापन कर और सतत् रूप से प्रगति कर अपने भविष्य का नव-निर्माण करने की अदम्य आकाक्षा उन्हे निरन्तर नये-नये क्षेत्रो मे आगे लिये जा रही थी।

इस भौगोलिक सीमा का एक दिन अन्त हो गया, किन्तु बराबर प्रगति करते जाने की साहसी प्रवृत्ति अमेरिकन स्वभाव का अग बन गई। इसीलिए अपने इतिहास के पिछले चार सौ वर्षो मे अमेरिकन लोगो ने भौगोलिक दृष्टि से ही नित्य नये क्षेत्रो मे प्रवेश नही किया, अर्थ-व्यवस्था सामाजिक प्रणाली और राजनीति के भी नये-नये क्षेत्रो मे वे नित्य प्रवेश करते रहे है। उनकी हर पीढी ने भविष्य की चुनौती को खम ठोककर स्वीकार किया और अपने सामने पडे अधूरे कामो को ही पूरा नही किया, बल्कि आने वाली नई पीढी के लिए नई मजिल और नया क्षितिज भी खोल दिया।

प्रगति की इस अविच्छिन्न धारा का ही यह परिणाम है कि आज सयुक्त राज्य अमेरिका ससार का सबसे समृद्ध देश है। आज उसके सामने देशवासियो के अभावो को पूरा करने की समस्या नही है, वरन् उनके पूर्ण जीवन को पूर्णतर बनाने की समस्या है।

भारत और सयुक्त राष्ट्र अमेरिका दोनो आज ससार के दो महानतम लोकतन्त्रीय देश है। दोनो स्वतन्त्र लोकतन्त्र की पद्धति पर चलकर अपने भविष्य का निर्माण कर रहे है। आज भारत जिन कठिनाइयो और समस्याओ मे से गुजर रहा है, प्राय उन सबमे से सयुक्त राज्य पिछले चार सौ वर्षो के इतिहास मे गुजर चुका है। दोनो देशो के आर्थिक विकास के इतिहास को बहुत कुछ एक ही धरातल पर रखा जा सकता है। अमेरिकन अर्थ-व्यवस्था का यह इतिहास, इस दृष्टि से पाठको को देश की इन समस्याओ का समाधान खोजने मे सहायता दे सकता है।

भूमिका

हमारी इतिहास की पुस्तको मे अमेरिका की उन्नति के लिए अमेरिकन लोगो की नये-नये क्षेत्रो मे प्रवेश की साहसी वृत्ति की विरासत को आम तौर पर जितना श्रेय दिया जाता है, वास्तव मे वह उससे अधिक श्रेय की अधिकारिणी है। सयुक्त राज्य के स्कूलो मे हर लडके-लडकी को बताया जाता है कि अमेरिकन लोग आजादी से प्यार करते है, स्वतन्त्र वृत्ति को मूल्यवान् समझते है, व्यक्तिगत उपक्रम और उद्यम को महत्त्व देते है और आम तौर पर एक ऐसे समाज के निर्माण का प्रयत्न करते है जिसमे प्रतिभाशाली लोग बिना किसी बन्धन के चाहे जहाँ जा सकते है—सिर्फ इसलिए कि हमारे इतिहास के चार सौ प्रारम्भिक निर्माणात्मक वर्षो मे नये नये गैर-आबाद क्षेत्रो को आबाद करने की साहसपूर्ण प्रवृत्ति प्रबल रही है। यह सब सच अवश्य है किन्तु इसमे नये-नये क्षेत्रो मे प्रवेश की साहसी वृत्ति के एक अग के लिए श्रेय का बहुत अधिक दावा किया गया है, जबकि अन्य क्षेत्रो मे विद्यमान इस प्रवृत्ति को उतना महत्त्व नही दिया गया।

यदि केवल भौगोलिक दृष्टि से नये-नये क्षेत्रो मे प्रवेश की प्रवृत्ति ही अमेरिका के महान् अद्वितीय राष्ट्रीय चरित्र-प्रेरणा-स्रोत होती तो हमे यह स्वीकार करना पडता कि उन्नीसवी शताब्दी मे नये भौगोलिक क्षेत्रो मे प्रवेश के अवसर समाप्त हो जाने के बाद उसका पतन प्रारम्भ हो गया होगा।

लेकिन नये-नय क्षेत्रो मे प्रवेश की उद्यमी वृत्ति को जब भौगोलिक जगत् मे अपनी चरितार्थता का अवसर मिलना बन्द हो गया, तब उसे मानसिक जगत् के नये नये क्षेत्रो मे प्रवेश के द्वारा अभिव्यक्ति के लिए प्रचुर अवसर मिलने लगे। इसलिए जब हम कहते है कि अमेरिकन लोगो मे अभिनव क्षेत्रो मे प्रवेश की साहसपूर्ण वृत्ति स्थायी रूप से विद्यमान है तो उससे हमारा अभिप्राय यही होता है कि हर पीढी के सामने कुछ ऐसे अधूरे काम होते है जिन्हे उसे पूरा करना पडता है। सयुक्त राज्य सिर्फ इसलिए

महान् राष्ट्र नही बना कि उसकी प्रारम्भिक परिस्थितियो ने उसे अत्यधिक सर्वयोग्य और मूल्यवान् परम्पराएँ प्रदान की है, और सिर्फ इतने से ही वह भविष्य मे भी महान् राष्ट्र नही बना रह सकेगा। वास्तव मे अतीत की फसलो के बीज को वर्तमान परिस्थितियो की मिट्टी मे बोने की स्थायी क्षमता ही सयुक्त राज्य को अविच्छिन्न रूप से महानता के साधन प्रदान करती रही है।

यह बात हमारी पुरानी प्रथाओ और प्रणालियो की परिवर्तनशीलता और अभीष्ट उद्देश्यो की प्राप्ति के हमारे प्रयत्नो मे स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। हमारे देश मे एक ओर अतीत की विरासत और उसका अविच्छिन्न सातत्य विद्यमान है और दूसरी ओर आगे प्रगति करने की अटूट आकाक्षा भी कायम है। इसमे सन्देह नही कि इस अविच्छिन्न प्रक्रिया मे कोई क्रान्ति-कारीपन नही है, किन्तु साथ ही यह भी सत्य है कि वह आगे वढने की आकाक्षा को रोकती या पथभ्रष्ट नही करती।

पहले-पहल अधिवासियो ने अमेरिका मे आकर यहाँ के जगलो को काटने के लिए जो कुल्हाडा चलाया उसका वार कोई ऐसा क्रान्तिकारी वार नही था कि उसने रातो-रात जगल मे मगल कर दिया, सूने वन प्रदेश को मकानो के झुरमुटो मे परिणत कर दिया, खाली जमीन को खेतो मे वदल दिया और विशाल औद्योगिक कारखाने खडे कर दिये। यह सारा परिवर्तन आहिस्ता-आहिस्ता हुआ और वह इसलिए हो सका, क्योकि जहाँ-कही कोई नया क्षेत्र दिखाई पडा या दिखाई पड सकता है, अमेरिकन लोग खिचकर उसकी ओर चले जाते है।

अमेरिका के राजनीतिक और आर्थिक इतिहास को पढने वाला कोई भी व्यक्ति यह अनुभव किये विना नही रहेगा कि नाजुक क्षणो मे जैसे ही अमेरिकनो को कोई नया क्षेत्र दिखाई पडा, उन्होने तत्काल ही उसमे प्रवेश करने और उसे खोजने का उद्योग किया। यह दुर्भाग्य की वात है कि आज इस बारे मे हमारी जानकारी वहुत कम है कि राष्ट्र के जीवन मे नये मोड आने पर अमेरिका के आम लोग क्या महसूस करते और कहते थे। किन्तु उन लोगो के बारे मे हम वहुत कुछ जानते है जो अपने जमाने मे किसी क्षेत्र मे नेतृत्व करते थे। उनकी उक्तियो और कामो से हमे पुरानी परम्परा का नये

परिवर्तन के साथ गठजोड करने वाली विकास की प्रक्रिया का एक सिलसिलेवार विवरण मिलता है।

टामस पेन का स्वतन्त्रेच्छावाद, सेम्युअल ऐडम्स का जनता की इच्छा के सम्मान पर वल, जार्ज वाशिंगटन की उद्देश्य की पवित्रता, वेन फ्रैंकलिन की विशिष्ट अमेरिकन विचक्षणता, टामस जैफर्सन की सामन्तवर्गीय दुनियादारी, अलेग्जेंडर हेमिल्टन का रचनात्मक यथार्थवाद, ऐंड्रयू जैक्सन का पॉपुलिस्ट पार्टी की नीतियो का सम्मिश्रण (पॉपुलिस्ट पार्टी अमेरिका मे 1892 मे वनी थी और रेल-परिवहन आदि पर सरकार के स्वामित्त्व और क्रमिक आय-कर आदि की समर्थक थी), अव्राहम लिंकन की आत्मीयतापूर्ण और कर्मनिष्ठ वुद्धिमत्ता, थ्योडर रूजवेल्ट की गतिमान् अनुक्रियाशीलता, वुडरो विल्सन की व्यापक दूरदर्शिता, फ्रैंकलिन रूज़वेल्ट की साहसपूर्ण प्रयोगवादी वृत्ति, ड्वाइट आइसनहोवर की सन्तुलन और उत्तरदायित्व की भावना—इन सव ने ही नही, वल्कि आर्थिक, सामाजिक और वैज्ञानिक क्षेत्रो मे उन्ही के समान काम करने वाले अन्य लोगो के कार्य-कलापो ने भी अपने जमाने मे नये-नये क्षेत्रो मे प्रवेश करने की साहसी वृत्ति और प्रगति के चरणो को आगे वढाने मे योग दिया। और अव 1960 के दशक के प्रारम्भ मे राष्ट्रपति कैनेडी ने नवीन क्षेत्रो मे प्रवेश की चुनौती का सामना करने के लिए जो आह्वान किया है, वह भी सिलसिलेवार हुई इस प्रगति की सर्वोत्तम परम्पराओ के अनुरूप ही है।

इस प्रकार वर्तमान की सीमाओ के उस पार नये-नये क्षेत्रो मे प्रवेश का आह्वान अमेरिकन लोगो के लिए एक स्थायी, किन्तु साथ ही परिवर्तनशील चुनौती वना हुआ है। हमे आशा है कि सयुक्त राज्य के इस आर्थिक इतिहास मे हम नये-नये भौगोलिक और अन्य क्षेत्रो मे प्रवेश के द्वारा हुए राष्ट्र के आर्थिक विकास का विवरण दे सकेंगे और यह वता सकेंगे कि वाधाओ को अमेरिकन लोगो ने किस प्रकार अपने लिए उन्नति के नये अवसरो मे परिणत कर दिया।

विषय-सूची

पहला भाग

महाद्वीप की खोज से लोकप्रिय जनतंत्र तक

दूसरा भाग

युवा राष्ट्र का संघर्ष

तीसरा भाग

शक्ति और उत्तरदायित्व

पहला भाग

महाद्वीप की खोज से लोकप्रिय जनतंत्र तक

अन्वेषण का युग

मानव-विज्ञानवेत्ताओ के अनुसार अमेरिकन महाद्वीप अब से कोई 25,000 से 40,000 वर्ष पूर्व आबाद हुआ। उनका ख़याल है कि सबसे पहले मगोलिया के गोबी मरुस्थल के लोग बेरिग स्थल डमरूमध्य से होकर अलास्का मे आए। ये जन-जातियाँ बाद मे धीरे-धीरे सारे अमेरिकन महाद्वीप मे फैल गई। समय आने पर ये जातियाँ राष्ट्रो मे बँट गई और उन्होने अपनी अनेक प्रकार की सस्कृतियो का विकास किया। उन्होने रुई कातना और बुनना, मक्का बोना, किश्तियाँ बनाना और शिकार मे मारे हुए जानवरो की खालो को सुरक्षित रखना सीखा।

कुछ जन-जातियो ने काफी उन्नत राजनैतिक सगठनो का भी विकास कर लिया था। इण्डियन लोगो के कम-से-कम तीन राष्ट्र—मय, आजतेक और इन्का—ऐसे थे जिनकी सभ्यता कुछ दृष्टियो से यूरोप से आकर बसने वाले अधिवासियो की सभ्यता से अधिक ऊँचे स्तर की थी।

लेकिन फिर भी हमारी स्कूली किताबो का यह कथन तत्वत सही है कि नई दुनिया का इतिहास 1942 मे कोलम्बस द्वारा अमेरिका की खोज से प्रारम्भ होता है। कारण, इस खोज के बाद अमेरिका मे जो कुछ हुआ उसे अमेरिका के मूल निवासियो की सस्कृति ने कुछ विशेष प्रभावित नही किया। यह ठीक है कि यूरोपियनो ने अमेरिका के आदिवासियो से तम्बाकू पीना (इसमे सन्देह है कि यह उनके लिए वरदान था), मक्का बोना और आलू खाना सीखा। लेकिन और बातो मे यूरोपियन 'आक्रमणकारियो' पर मूल निवासियो की आदतो, विश्वासो और प्रथाओ का प्राय कुछ भी असर नही पडा। वास्तव मे, इससे पूर्व इतिहास मे शायद ही कभी ऐसा हुआ हो कि किसी विजयी जाति पर विजित जाति की सस्कृति का इतना कम असर पडा हो।

इस प्रकार वर्तमान अमेरिकन समाज के निर्माण मे योग देने वाले कुछ

विचारो और आदर्शों को भली-भाँति समझने के लिए हमे यूरोप के इतिहास की ओर लौटना होगा। कारण, आज जिन राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक प्रणालियो और सस्थाओ को हम अमेरिकन प्रणालियाँ और सस्थाएँ मानते हैं, उनका मूल उद्भव यूरोप मे ही हुआ था।

यूरोप से सबसे पहले नार्वे के लोग नई दुनिया मे आए। ग्यारहवी शताब्दी मे वे पश्चिम की ओर ग्रीनलैंड जाने के लिए निकले और बाद मे खोजते-खोजते कनाडा के तट पर जा पहुँचे। इस तट के साथ-साथ यात्रा करते हुए वे सेंट लॉरेन्स खाडी तक गए। किन्तु उनकी इन यात्राओ का कोई स्थायी परिणाम नही हुआ। नार्वे के लोग अपने देश मे लौट गए और बहुत जल्दी ही अपनी इन खोजो के बारे मे सब-कुछ भूल गए।

यही बात 1492 की खोज के बारे मे क्यो नही हुई? उस समय खोज और अनुसन्धान की यात्राओ मे लोगो की दिलचस्पी इतनी प्रबल और उत्कट क्यो थी? यह जाहिर है कि इन प्रश्नो का कोई सीधा-सादा उत्तर नही दिया जा सकता। हम सिर्फ इतना ही बता सकते है कि अधिकतर इतिहासकारो की दृष्टि मे इसका सबसे महत्त्वपूर्ण कारण क्या है। वह कारण यह है कि उस समय **यूरोप के लोगो के मन और हृदय मे नए-नए क्षेत्रो मे प्रवेश करने की उत्कट और तीव्र आकाक्षा हिलोरे ले रही थी।**

इतिहासकारो ने इस आकाक्षा के उदय को 'नव जागरण' या 'नए जन्म' का नाम दिया है। वास्तव मे यह 'नए जन्म' या 'नव जागरण' से भी कुछ अधिक ही था। पन्द्रहवी शताब्दी से सत्रहवी शताब्दी के प्रारम्भ तक यूरोपियन लोगो की जीवन-पद्धति मे और इन आदर्शो और आकाक्षाओ मे, जिनके लिए इन्सान उद्योग करता है, एक विशाल और उग्र परिवर्तन हुआ। इस अवधि मे सामन्त-प्रणाली, जिसका आधार सर्वथा आत्मनिर्भर जागीरे और सुनिश्चित वशानुगत और सोपानक्रमिक (हायराकिकल) सामाजिक रचना थी, टूटने लगी और उसका स्थान एक ऐसी विनिमयात्मक आर्थिक व्यवस्था ने ले लिया, जिसमे दस्तकारी का सामान तैयार करने वाले कारीगर और व्यापारिक मध्यवित्त वर्ग अधिकाधिक महत्त्वपूर्ण भाग अदा करने लगे।

इन मध्यवर्गों का अपने इर्द-गिर्द के ससार के प्रति बिल्कुल नया रवैया

था। उनके लिए जीवन एक महान् साहसपूर्ण अभियान था जिसमें उपक्रम और उद्यम करने से उनके फल के रूप मे मनुष्य-जीवन की अच्छी चीजे पा सकता था—और 'अच्छी चीजो' से उनका अभिप्राय ऐसी वस्तुएँ था जिन्हे पैसा खरीद सकता है। मध्य युग के सासारिक सुखो के परित्याग और वैराग्य के द्वारा मृत्यु के बाद अनन्त आनन्द और मुक्ति के आदर्श उनके लिए कुछ नही थे। ये नए मध्यवर्ग बहुत-कुछ इसी ससार और इसी लोक के वर्ग थे। वे अपने सासारिक भौतिक अस्तित्व से उपलब्ध होने वाले सारे सुखो को भोग डालने के लिए अधीर थे।

इस नई मनोवृत्ति का ही यह परिणाम था कि पुनर्जागरण के साथ-ही-साथ वाणिज्य व्यवसाय और अन्वेषण का युग आया और इस युग के बाद नए उपनिवेश और बस्तियाँ बसाने का जमाना आया। मध्ययुगीन समाज के सामन्तवादी सगठनो के स्थान पर राजाओ द्वारा शासित और उभरते हुए मध्यवर्ग द्वारा समर्थित नये राज्यो की स्थापना होने पर सामाजिक सगठनो के आकार और उनकी प्रभावकारिता का एक बार फिर विस्तार हुआ। इन नए राज्यो मे मध्यवर्ग सार्वजनिक (राज्य का) हित और अपना हित, दोनो को एक ही समझते थे।

तत्कालीन वाणिज्यवादी सिद्धान्त के अनुसार वाणिज्य का मुख्य काम था राज्य की शक्ति को और उसके द्वारा राज्य की प्रजा की, खासकर व्यापारी वर्ग की शक्ति को बढाना। इस प्रकार वाणिज्यवादियो का यह विश्वास था कि व्यापार-सन्तुलन को अनुकूल, यानी अपने पक्ष मे रखना, (अर्थात् आयात की अपेक्षा निर्यात अधिक करना) आवश्यक है क्योंकि उन का यह खयाल था कि देश से जितना सोना बाहर जाए उससे अधिक सोना बाहर से देश के भीतर आना चाहिए। इस नीति को कायम रखने का प्रयत्न किया जाता था, भले ही उसमे व्यक्तिगत वाणिज्य-व्यवसाय पर प्रतिबन्ध लगाना पडे।

इस सिद्धान्त के अनुसार, लाभ के लिए उत्सुक व्यापारियो को राज्य द्वारा महासागरो के उस पार ऐसे अज्ञात और अछूत प्रदेशो की खोज के लिए प्रोत्साहन दिया जाता था, जहाँ से सोना प्राप्त किया जा सके। वास्तव मे बडे-बडे व्यवसायी राजाओ और राजनीतिज्ञो के दिवास्वप्नो मे सोने

के तरीके इतने क्रूर और अत्याचारपूर्ण थे कि उसका नाम अत्याचार और क्रूरता का पर्यावाची वन गया।

यद्यपि इन सब व्यक्तियो और इनके पीछे आने वाले उपनिवेशवादियो के व्यक्तित्व और सामान्य दृष्टिकोण मे वहुत अन्तर था, फिर भी उनमे एक वात की समानता थी, वह थी पुरानी दुनिया की सीमाओ को तोडकर नये क्षेत्रो मे प्रवेश करने, अपने भाग्य को सुधारने और अपने सकीर्ण घरौंदे से वाहर निकलने की आकाक्षा।

ये यूरोपियन कौन-सी दक्षताएँ, ज्ञान और दृष्टिकोण अपने साथ लाए ? कई लिहाज से अमेरिकन उपनिवेश-सस्थापक विल्कुल भिन्न किस्म के थे। ब्रिटेन या गॉल मे उपनिवेशो की स्थापना करने वाले रोमन लोगो की भाँति ये आम तौर पर किसी सेना के अग नही थे, वल्कि अक्सर वे किसी सरकार के प्रतिनिधि भी नही थे।

विल्कुल प्रारम्भ के कुछ लोगो को छोडकर अमेरिका मे आवाद होने के लिए आए इन यूरोपियनो की स्वदेश लौटने की भी कोई इच्छा नही थी। आम तौर पर नया महाद्वीप ही उनका घर और स्वदेश था और एक विशाल महासागर ने उन्हे उनकी पहले की जिन्दगी से अलहदा कर दिया था। यह वात नही कि वे इस स्थिति से किसी भी कदर असन्तुष्ट थे। वास्तव मे इनमे से वहुत-से लोग यहाँ आए ही इसलिए थे कि पुरानी दुनिया के अत्याचारो से वच सकें।

कुछ लोग, जैसे कि अग्रेज़ प्योरिटन (शुद्धाचारवादी), इच्छानुसार धार्मिक पूजा करने की स्वतन्त्रता पाने के लिए यहाँ आए थे, किन्तु जैसे ही एक वार उन्हे यह स्वतन्त्रता मिली और उन्होने अपने निज के धार्मिक सम्प्रदायो की स्थापना की, वैसे ही उन्होने भिन्न धार्मिक विश्वास रखने वालो को इस स्वतन्त्रता से वचित करना प्रारम्भ कर दिया।

कुछ लोग इसलिए यहाँ आए थे कि वे अपने पुराने समाज की नज़रो से गिर गए थे और अपने पडौसियो और मित्रो की अवज्ञा से दूर भाग जाना चाहते थे। प्रारम्भिक अभियानकारियो मे से कुछ लोग सोने की खोज मे आए थे। सिर्फ वही लोग यह आशा करते थे कि वे सोने का भडार साथ ले जाकर अपने पुराने देश मे फिर से शेष जीवन विलासिता और आराम के

साथ बिताएँगे ।

लेकिन अधिकतर लोग ज़मीन की लालसा से आए थे । वे अनुभव करते थे कि इस नये विशाल महाद्वीप मे अपने देश की अपेक्षा अधिक समृद्धिमय और पूर्णतर जीवन बिताने का अवसर मिलेगा । वास्तव मे उनके आव्रजन का कारण बाद मे आने वाले आव्रजको के आगमन के कारणो से बहुत भिन्न नही था ।

महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इन नर-नारियो का श्रम, सम्पत्ति और वैयक्तिक अभिव्यक्ति के सम्बन्ध मे जो रुख था, उसके कारण उन्होने अत्यन्त स्वल्प काल मे ही काफी नवीन और आधुनिक ढग की आर्थिक प्रणाली की स्थापना कर ली । इसके अलावा, जैसा कि हम आगे चलकर देखेगे, जब-जब सरकार ने उन्हे अधिक स्वतन्त्रता और छूट दी, वे अधिक सफल सिद्ध हुए । यह स्वतन्त्रता मिलने पर यूरोपियन लोगो की विचक्षणता और कौशल इस नये अक्षत महाद्वीप की कठोर और दु सह परिस्थितियो के साथ अपने-आप को ढालने मे बहुत सफल साबित हुआ ।

इसलिए इसमे जरा भी आश्चर्य की बात नही कि व्यक्तिगत अभिक्रम औपनिवेशिक जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अग बन गया और अमेरिकन समाज ने जैसे ही सर्वप्रथम इस नये क्षेत्र मे प्रवेश किया, इसने उस पर इतना अधिक प्रभाव डाला कि यह समाज निरन्तर पश्चिम की ओर अग्रसर होता गया ।

उत्तरी अमेरिका के मुख्य अन्वेषक (1492-1609)

अन्वेषक	राष्ट्रीयता	प्रेषक देश	अन्वेषण यात्रा का काल	खोजा गया प्रदेश	उद्देश्य
क्रिस्टोफर कोलम्बस	इटालियन	स्पेन	1492,1493, 1498-1500	वेस्ट इंडीज	सुदूर पूर्व की ओर जाने के मार्ग की खोज
जॉन कैबट	इटालियन	इंग्लैंड	1497-98	लैब्रेडोर	उत्तरी अमेरिकन तट की खोज
जुआन पोंसे द लियोन	स्पेनिश	स्पेन	1513	फ्लोरिडा	विजय और मुनाफा
जियोवानी द वेराजानो	इटालियन	फ्रांस	1524	अटलांटिक-तट व न्यूयार्क बंदरगाह	सुदूर पूर्व की ओर जाने के मार्ग की खोज
जाक कार्तिये	फ्रेंच	फ्रांस	1534	सेंट लॉरेन्स नदी	वाणिज्य और उत्तर-पश्चिमी मार्ग की खोज
हरनाडो डि सोटो	स्पेनिश	स्पेन	1539-41	मिसीसिपी	सोने की खोज
फ्रांसिस्को डि कोरोनाडो	स्पेनिश	स्पेन	1540	दक्षिण-पश्चिमी संयुक्त राज्य	सोने की खोज
फ्रांसिस ड्रेक	अंग्रेज	इंग्लैंड	1577-80	कैलिफोर्निया-तट	विजय और मुनाफा
सेमुअल द शाम्प्लें	फ्रेंच	फ्रांस	1607-9	क्वेबेक, उत्तरी न्यूयार्क	समूर का व्यापार और उपनिवेश-स्थापना
हेनरी हडसन	अंग्रेज	नीदरलैंड्स	1609	हडसन नदी	सुदूर पूर्व के मार्ग की खोज

नई दुनिया की स्थापना

पश्चिमी गोलार्ध की खोज का पुरानी दुनिया की तत्कालीन व्यवस्था पर गहरा असर पडना नितान्त अनिवार्य था। दूसरी ओर पहले से ही सस्थापित इस पुरानी व्यवस्था के प्रभाव से उत्तरी अमेरिका मे अग्रेजो द्वारा एक महत्त्वपूर्ण और सबसे प्रधान भूमिका अदा करना भी स्वाभाविक था।

सोलहवी शताब्दी के यूरोप के इतिहास का अध्ययन करते हुए कुछ इतिहासकारोने यूरोपियन महाद्वीप के मामलो मे राजघरानो की पारस्परिक प्रतिस्पर्धाओ पर सबसे अधिक बल दिया है। कुछ इतिहासकारो का कहना है कि यूरोप मे शक्ति-सघर्ष के जमाने मे भूमध्यसागर पर नियन्त्रण ही शक्ति की सबसे बडी कसौटी था। कुछ इतिहासकार ऐसे भी है जिनका कहना है कि यूरोप के देशो के इस सघर्ष की बुनियाद मे धार्मिक, आर्थिक या राजनैतिक कारण थे। यूरोपियन इतिहास की इन सभी व्याख्याओ मे एक बात अपरिहार्य रूप से घूम-घूमकर आती है जिसकी उपेक्षा नही की जा सकती। वह यह कि यद्यपि अग्रेजो की यूरोप के मामलो मे सीधी दिलचस्पी थी, फिर भी वहाँ घटित होने वाली बडी-बडी घटनाओ और परिवर्तनो मे उसका भाग अप्रत्यक्ष ही होता था। प्रत्यक्ष भाग उनमे स्पेनिश, फ्रेंच, आस्ट्रियन हाप्सबुर्ग और तुर्क ऑटोमन राजघराने ही लेते थे।

इग्लैड को यूरोपियन महाद्वीप से इगलिश चैनल और भूमध्य क्षेत्र से और भी बडी भौगोलिक और सास्कृतिक बाधाओ ने अलग कर रखा था। वहाँ जिस राजघराने का शासन था, सिहासन पर उसका अधिकार बहुत पुराना नही था। इग्लैड जिस धार्मिक विश्वास का अपने-आपको रक्षक कहता था, पोप ने उसकी निन्दा की थी। इस प्रकार अग्रेज लोग सभी दृष्टियो से बिलकुल अलग-थलग और दृढ व्यक्तिवादी थे, खासकर उस जमाने मे उनका व्यक्तिवादिता का यह गुण समुद्र-पार के अभियानो मे उनके लिए बहुत लाभकारी सिद्ध हो सकता था।

सोलहवी शताब्दी मे अग्रेजो का यूरोपियन महाद्वीप मे राजनैतिक सत्ता के सघर्ष की ओर न कोई झुकाव था और न किसी विशेष पक्ष को उन्होने कोई बडे वचन दे रखे थे और न उनके कोई खास दावे थे। इस प्रकार यूरोप के मामलो के प्रति उनकी अनासक्ति का एक बडा लाभ भी था और वह यह कि जहाँ यूरोप के अन्य देश आपस मे उलझे रहते, इग्लैड यूरोप से बाहर अन्यत्र नये अवसरो का लाभ उठाने के लिए सजग रहा।

नई दुनिया की खोज उसके लिए एक ऐसा ही अवसर था। उसने तुरन्त ही एक ऐसा अखाडा खोल दिया जिसमे इग्लैड दूसरो का बराबरी से मुकाबला कर सकता था। कारण, कोलम्बस के जमाने के बाद के सौ वर्षो मे, न तो स्पेनिश लोग और न बाद मे फ्रेंच लोग ही, नई दुनिया के विशाल भूखड की पूरी तरह खोज कर सके थे, उसे आबाद करने का तो सवाल ही नही।

यूरोपीय महाद्वीप के बडे राष्ट्रो के लिए नई दुनिया अन्यत्र खेले जा रहे अधिक बडे और घटनापूर्ण नाटक का सिर्फ एक अप्रासगिक विष्कम्भक थी, किन्तु समुद्र के तट पर पलने वाले और सागर की चचल लहरो से खेलने वाले अग्रेजो के लिए पश्चिम की ओर समुद्र-यात्रा करने का विचार तत्काल ही एक प्रधान आकर्षण बन गया। इग्लैड के खेतिहरो, साहसी अभियान-कारियो और व्यापारियो, सभी ने जल्दी ही यह महसूस कर लिया कि उन्हे व्यक्तिगत लाभ उठाने के लिए एक अपूर्व अवसर मिला है। अग्रेज राजाओ का यह मत था कि जिस चीज से अग्रेज नागरिको को लाभ हो सकता है, उससे राजवश को भी लाभ होगा। नये प्रदेशो पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए इग्लैड का व्यापारी वर्ग स्पेनिश विजयाकाक्षियो और फ्रेच मिशनरियो या समूर की खोज करने वालो की अपेक्षा अधिक उपयुक्त और समर्थ था।

सौभाग्य से इग्लैड के समुद्र का अवगाहन करने वाले नाविको को अपनी युवती रानी एलिज़ाबेथ ट्यूडर के रूप मे, जो 1558 मे राजसिंहासन पर बैठी थी, एक अत्यन्त साहसी और उत्साही सरक्षक मिल गया। उसका शासन-काल समाप्त होने तक सभी यह महसूस करने लगे थे कि समुद्र पर नियन्त्रण करना विशाल स्थलीय राष्ट्रो की शक्ति से परे है। इस सीधे-सादे

सत्य ने अगले साढे तीन सौ वर्ष तक यूरोप के इतिहास को प्रभावित किया और यह उचित ही था कि वह नई दुनिया के उस भाग के इतिहास को भी प्रभावित करता जिसे हम आज सयुक्त राज्य कहते है।

नई दुनिया मे अंग्रेजो के उपनिवेशो की स्थापना का वास्तविक श्रीगणेश एलिजाबेथ के उत्तराधिकारी राजा जेम्स प्रथम के जमाने मे हुआ। 20 अप्रैल, 1606 को इस स्टुअर्ट राजा ने लन्दन कम्पनी को, जो नई दुनिया मे लाभदायक उपनिवेशो की स्थापना के लिए बनाई गई प्राइवेट कम्पनी थी, अधिकार-पत्र प्रदान किया। आठ मास बाद कम्पनी के बहुत से शेयर-होल्डरो ने सागर के तट पर खडे होकर नई दुनिया को आबाद करने के लिए प्रस्थान करने वाले 144 व्यक्तियो को सफलता की शुभकामना के साथ विदाई दी। इन लोगो ने जेम्सटाउन, वर्जीनिया की बस्ती बसाई, जो उत्तरी अमेरिका मे सबसे पहली स्थायी अंग्रेज बस्ती थी।

इससे पूर्व अंग्रेजो के उपनिवेश बसाने के प्रयत्न असफल रहे थे। सर वाल्टर रैले ने 1585 मे रोआनोक द्वीप मे उपनिवेश बसाने का जो प्रयत्न किया था उसका क्या परिणाम हुआ, यह आज तक ज्ञात नही हो सका। रैले के सौतेले भाई सर हम्फ्रे गिल्बर्ट का तो न्यू फाउडलैण्ड मे उपनिवेश बसाने के प्रयत्न मे दिवाला ही निकल गया। मई, 1607 मे जेम्सटाउन की बस्ती आबाद होने से पहले सिर्फ स्पेनिश और फ्रेच लोगो के ही उपनिवेश नई दुनिया मे स्थापित हुए थे।

स्पेनिश लोगो ने मैक्सिको और पेरू की खनिज सम्पदा के खनन के साथ दुनिया को आबाद करने का काम अंग्रेजो से पहले ही प्रारम्भ कर दिया था। फ्रेच लोगो ने, जो अंग्रेजो से कुछ ही वर्ष आगे थे, अपने प्रयत्नो को उत्तर-पूर्वी कनाडा मे और ओहायो और मिसीसिपी नदियो की घाटियो मे अपने समूर के व्यापार को बढाने पर ही केन्द्रित रखा। इन गैर-अंग्रेज उपनिवेशो के एक खास ढग से आबाद होने मे भौगोलिक और मौसम-सम्बन्धी कारणो ने भी योग दिया। स्पेनिश लोगो ने दक्षिण-पश्चिम के गर्म इलाके मे अपनी खानो के साथ-साथ व्यापक पैमाने पर खेती भी आरम्भ की। खेती की इन जमीनो पर धनी और शक्तिशाली जमीदारो का अधिकार था। किन्तु उत्तर के फ्रेच इलाके व्यापारियो, समूर के लिए जगली जानवरो का

शिकार करने वालो और धर्म-प्रचारको के कार्यक्षेत्र के रूप मे खुले हुए थे। फ्रेंच इलाके मे जगह-जगह व्यापारिक केन्द्र और किले वने हुए थे।

स्पेन और फ्रास की औपनिवेशिक नीतियाँ एकतन्त्रीय और अत्यधिक सरक्षणात्मक थी। उन्होने पुरानी दुनिया के वहुत-से वर्गभेद कायम रखे थे और वे वर्गभेद की इन दीवारो को तोडकर लोगो को व्यक्तिगत उद्यम और उपक्रम का साहस करने मे निरुत्साहित करते थे। इसीलिए इन उपनिवेशो मे आकर वसे गरीव लोगो की हालत आम तौर पर गुलामो से वेहतर नही थी। जिन लोगो के पास जमीने मिल्कियत के रूप मे थी, उन्हे वे प्राय सामन्तवादी शासन से अनुदान के रूप मे मिली थी। स्पेनिश और फ्रेंच जमीदार अपनी जमीने साधारण किसानो को अग्रेजो की भाँति मुफ्त या सस्ती दर पर नही देते थे। इसी तरह जेम्सटाउन के कुछ वर्ष वाद स्थापित डच और स्वीडिश उपनिवेशो मे भी सारा नया उद्यम और व्यवसाय प्राइवेट व्यापारिक कम्पनियो की ही इजारेदारी वन गया था।

इस प्रकार इन देशो के नई दुनिया मे स्थापित उपनिवेश वहुत छोटे ही रहे, क्योकि उनमे यूरोप से आकर आवाद होने के लिए लोगो को कोई अवसर नही दिये जाते थे। फ्रेंच वस्तियो मे आवादी की विरलता का परिणाम यह हुआ कि पश्चिमी गोलार्ध मे अठारहवी शताब्दी मे फ्रास का प्रभाव और महत्त्व वहुत घट गया। इसी तरह न्यू ऐम्सटर्डम की छोटी-सी डच वस्ती भी अग्रेज़ो के सामने नही टिक सकी और 1664 मे विना किसी सघर्ष के उन्होने उस पर कब्जा कर लिया।

कैरीवियन क्षेत्र मे स्पेनिश उपनिवेशो के लिए आकार कोई वडी समस्या नही था। लेकिन वहाँ स्पेनिश लोगो ने व्यापार पर जो कठोर एकाधिकार कर रखा था, उसने धीरे-धीरे उनका गला घोटना प्रारम्भ किया। इस एकाधिकार के परिणामस्वरूप अग्रेज और फ्रेंच डाकू उनका माल लूटने लगे और तस्कर-व्यापार वढने लगा।

इसमे सन्देह नही कि जेम्सटाउन के वाद अटलाटिक के तट पर एक के वाद एक जो वहुत-से अग्रेज़ उपनिवेश स्थापित हुए उनमे भी इनमे से वहुत-सी कमजोरियाँ थी। लेकिन इग्लैड के शासन के सामने इसके सिवाय दूसरा चारा भी कोई नही था कि वह अपने स्वार्थ की पूर्ति के साथ-साथ प्राइवेट

उद्यम के प्रति भी स्वार्थपूर्ण, किन्तु उदार, रुख अपनाता। फ्रेंच और स्पेनिश उपनिवेशो और अंग्रेज उपनिवेशो मे एक बडा अन्तर यह था कि अंग्रेज उपनिवेश पूर्णत शेयरो की बिक्री से गठित की गई प्राइवेट कम्पनियो की पूंजी पर ही निर्भर थे। अंग्रेज राजघराने के पास कभी भी धन बहुत अधिक नही रहा। इसीलिए उसने स्वय कोई उपनिवेश नही बसाया और न ही उसने उनकी स्थापना मे धन से कोई योग दिया। इसके विपरीत उसने उन लोगो को, जो अपनी पूंजी को खतरे मे डालने के लिए तैयार थे, इसके लिए अधिकार-पत्र ही प्रदान किये।

सौभाग्य से सत्रहवी शताब्दी के इंग्लैंड मे परिस्थितियाँ साम्राज्य-निर्माण के लिए बहुत अनुकूल थी। ट्यूडर राजाओ ने चर्च की सम्पत्ति छीन ली थी, जिससे इंग्लैंड के सामन्तवर्ग के हाथ मे प्रचुर धन-दौलत आ गई थी। वाणिज्य और उद्योग उन्नति कर रहे थे। शहरो के व्यापारी और साहूकार इंग्लैंड के कारखानो का पेट भरने के लिए कच्चे माल के स्रोतो और नये-नये बाजारो की खोज कर रहे थे।

इसके अलावा ऊनी कपडे के कारखानो की उन्नति, खेती की शामिलात जमीनो की भेडे चराने के लिए घेराबन्दी और ईसाई मठो के उन्मूलन ने हजारो आदमियो को आजीविका से वचित कर दिया था। इन बेकार व्यक्तियो, कर्जदारो और अन्य अपराधियो मे से बहुतों ने यह महसूस किया कि नये उपनिवेशो मे चले जाने से उनकी तमाम समस्याएँ हल हो जाएँगी। हर अंग्रेज अधिवासी ने, चाहे उसने अपना सर्वस्व बेचकर इन उपनिवेशो मे जाने के लिए किराये के पैसे का जुगाड किया हो और चाहे किराये का प्रबंध न होने पर मजदूरी के लिए करार किया हो, यह अनुभव किया कि उपनिवेशो मे जाकर वह नये सिरे से जिन्दगी शुरू कर सकेगा और वर्ग-भेद की उन बाधाओ को काट सकेगा, जिन्होने अपनी मातृभूमि मे उसके लिए उन्नति के सब द्वार बन्द कर रखे है।

उपनिवेशो की स्थापना मुख्यत प्राइवेट पूंजी-निवेशको के प्रयत्नो का ही परिणाम थी। गिल्बर्ट और रैले आदि की असफलताओ ने यह सिद्ध कर दिया था कि किसी एक व्यक्ति के लिए उपनिवेशो की स्थापना के लायक विशाल धनराशि का जुगाड कर सकना सम्भव नहीं है। इसलिए ज्वायंट

स्टाक कम्पनियाँ स्थापित की गई और उन्होने मुनाफे के लिए उपनिवेश बसाने या फार्म और बागान स्थापित करने के वास्ते सरकार से अधिकार-पत्र प्राप्त किये। अधिकार-पत्र प्राप्त करने वाली कम्पनियो को अनुदान के रूप मे उपनिवेश दिये गए और साथ ही भविष्य मे उनमे आकर बसने वालो पर प्रभुसत्ता भी प्रदान की गई। कुछ थोडे-से अपवादो को छोडकर, जिनमे न्यू प्लाइमाउथ उपनिवेश मुख्य था, अधिकतर अग्रेज उपनिवेश प्रारम्भ मे उनके सस्थापको की जागीरदारी मिल्कियत थे। उपनिवेश का मालिक, चाहे वह व्यक्ति हो, जैसे लार्ड बाल्टीमोर, विलियम पैन, जॉन कार्टरेट या ड्यूक ऑफ यार्क (जो बाद मे राजा जेम्स द्वितीय बन गया) और चाहे कम्पनी, सारी जमीन का मालिक होता था और उसमे आबाद लोगो पर शासन करता था।

प्रारम्भ मे इन उपनिवेशो मे आबाद अधिवासियो के अधिकारो मे मत देने या पदाधिकारी बनने के अधिकार शामिल नही थे, क्योकि स्वय इग्लैड मे भी सब लोगो को ये अधिकार प्राप्त नही थे। लेकिन जैसे-जैसे इग्लैड मे लोगो के अधिकारो का विस्तार होता गया, वैसे-वैसे उपनिवेशो के लोगो के अधिकार भी बढते गए। इतिहासकार एडवर्ड चैनिग ने लिखा है "अन्य राष्ट्रो के उपनिवेशो के अधिवासियो के भाग्य मे यही बदा था कि वे उन राष्ट्रो के निवासियो को प्राप्त अधिकारो और कानूनी सुविधाओ से बाहर समझे जाएँ। लेकिन दूसरी ओर अग्रेजो के उपनिवेश इग्लैड के लोगो को प्राप्त कानून के सरक्षणो (जूरी द्वारा मुकदमे की सुनवाई, बन्दी-प्रत्यक्षीकरण अधिकार और वाणी की स्वतन्त्रता) का समान रूप से उपभोग करते थे। उन्हे ये समानाधिकार देने से उपनिवेशो की स्थापना के एक नये युग का आरम्भ हुआ।" अनजाने मे ही इससे अन्तत इन उपनिवेशो के अपने मूल देशो से अलग और स्वतन्त्र हो जाने के लिए भी मार्ग प्रशस्त हो गया।

सत्रहवी और अठारहवी शताब्दियो मे प्रचलित विचारधाराओ के अनुसार उपनिवेशो का अपने मूल देशो के समान अधिकारो की माँग करना न केवल असह्य समझा जाता था, बल्कि वह अयुक्तियुक्त भी था। उपनिवेश-स्थापना के पीछे इग्लैड की भावना वाणिज्यवाद (मर्केटाइलिज्म) नामक राजनैतिक आर्थिक सिद्धान्त पर आधारित थी। इस सिद्धान्त के अनुसार कोई भी राष्ट्र शक्तिशाली और दौलतमन्द तभी हो सकता है जबकि आर्थिक

दृष्टि से वह स्वतन्त्र हो। और आर्थिक स्वतन्त्रता तभी प्राप्त की जा सकती है जबकि उस राष्ट्र का व्यापार-सन्तुलन उसके पक्ष मे हो, अर्थात् उसका निर्यात आयात से अधिक हो। लेकिन यहाँ 'अनुकूल' शब्द की तह मे एक सर्वथा सीमित और स्वार्थपूर्ण भावना निहित है, क्योंकि इसमे यह मान लिया जाता है कि एक राष्ट्र का लाभ निश्चित रूप से दूसरे का नुकसान होगा। वाणिज्यवादी यह आशा करते थे कि अपने देश की कृषि और उद्योगो को सहायता और सरक्षण देकर, आयात से अधिक निर्यात करके, और देश के भीतर ही यथासम्भव अधिकतम सोना-चाँदी एकत्र कर वे अपनी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को बलवान और समृद्ध बना सकेगे।

वाणिज्यवादियो की दृष्टि मे उपनिवेश मूल देशो की अर्थव्यवस्था को सुदृढ बनाने के लिए ही स्थापित किये गए थे। वे उन देशो के कारखानो के लिए कच्चे माल के स्रोत और उनके कारखानो के तैयार माल के लिए बाजार थे। इग्लैंड का औपनिवेशिक कानून इस बात को दृष्टि मे रखकर ही बनाया गया था।

व्यापारी इस नाटक के रगमच पर सबसे प्रमुख अभिनेता था, क्योंकि उसी को वाणिज्य-व्यवसाय सम्बन्धी नीति को अमल मे लाने की भूमिका अदा करनी थी। किन्तु स्वय उसका हित भी गौण था, क्योंकि उसका प्रधान उद्देश्य ब्रिटिश ताज के हितो को समुन्नत करना था और ब्रिटिश ताज (शासन) राजनीति और आर्थिक नीतियो को अधिकाधिक समन्वित और राजकोष मे सोना-चाँदी के प्रवाह को विनियमित करता था।

यद्यपि ये नीतयाँ स्वार्थपूर्ण थी तो भी वे उपनिवेशो की अर्थव्यवस्थाओ को नष्ट करने वाली कदापि नही थी। वास्तव मे, उपनिवेशो के हित आम तौर पर इग्लैड के हितो के समानान्तर यानी विरोधी होते थे। अनेक मर्तबा इग्लैंड ने उपनिवेशो को स्वय इग्लैड के लाभ के लिए जो उदार अधिदान (बाउटी) दिए उनसे सचमुच ही उपनिवेशो के आर्थिक विकास को सहायता मिली। इसके अलावा उपनिवेशो मे तैयार माल के लिए इग्लैड के बाजार बन्द कर दिए जाने पर उपनिवेशो ने उनके लिए वेस्ट इडीज या दक्षिणी यूरोप मे नये बाजार खोज लिये। क्योंकि वास्तव मे इग्लैड के उपनिवेशो के अधिवासी अग्रेज इग्लैंड मे विद्यमान अपने भाई-बदो से किसी भी कदर कम साहसी, हिम्मती, चतुर और प्रगतिशील नही थे।

अमेरिका का पूर्वी तटवर्ती प्रदेश कैसे आबाद हुआ

उपनिवेश	स्थापना का काल	नेता	राष्ट्रीयता	धर्म	प्रयोजन
जेम्सटाउन	1607	जॉन स्मिथ	अंग्रेज	ऐंग्लिकन	व्यवसाय
प्लाइमाउथ	1620	विलियम ब्रैडफोर्ड	अंग्रेज	पिलग्रिम	धार्मिक अत्याचार से मुक्ति
न्यू ऐम्सटर्डम	1626	पीटर मिनुइट	डच	प्रोटेस्टैंट	व्यवसाय
मैसाचुसैट्स बे	1629	जॉन विनथ्रोप	अंग्रेज	प्योरिटन	धार्मिक अत्याचार से मुक्ति
मेरीलैंड	1632	लार्ड बाल्टीमोर	अंग्रेज	कैथोलिक	धार्मिक अत्याचार से मुक्ति
कनैक्टिकट	1635	टामस हुकर	अंग्रेज	प्योरिटन	धार्मिक अत्याचार से मुक्ति
रोड आइलैंड	1636	रोजर विलियम्स	अंग्रेज	प्योरिटन	धार्मिक अत्याचार से मुक्ति
न्यू स्वीडन	1637	पीटर मिनुइट	स्वीडिश	प्रोटेस्टैंट	व्यवसाय
न्यू जर्सी	1665	बर्कले और कार्टरेट	अंग्रेज	ऐंग्लिकन	व्यवसाय
कैरोलिना	1670	लार्ड शैफ्ट्सबरी	अंग्रेज	ऐंग्लिकन	व्यवसाय
पेनसिलवेनिया	1681	विलियम पैन	अंग्रेज	क्वेकर	धर्म-प्रचार और व्यवसाय
जॉर्जिया	1732	जेम्स ओगलथोर्प	अंग्रेज	ऐंग्लिकन	कर्ज के तकाजों से मुक्ति

उपनिवेश : एकता की ओर

सन् 1607 मे जेम्सटाउन की स्थापना से 1733 में जॉर्जिया कालोनी के आबाद होने तक अमेरिका मे तेरह अग्रेज-उपनिवेशो की सस्थापना मे 126 वर्ष लग गए। ये उपनिवेश अपने देश मे अपराध करने वाले और कर्ज मे डूबे हुए अग्रेजो के लिए आश्रय-स्थल थे। सन् 1630 से 1642 तक, जो सबसे अधिक आव्रजको के आगमन के वर्ष थे, मैसाचुसैट्स के उपनिवेश मे कुल 16,000 नए व्यक्ति आए। यह सख्या इतनी कम थी और इन उपनिवेशो का जीवन इतना कष्टपूर्ण था कि 1650 तक भी यह सन्देह का विषय था कि उस समय मौजूद आठ उपनिवेश बचे भी रहेगे या नही।

इन अधिवासी लोगो का मूल मातृदेश एक खतरनाक महासागर के उस पार तीन हजार मील दूर था। इन उपनिवेशो मे अधिवासियो के सामने मूल निवासी इण्डियनो की ओर से तो खतरा हमेशा बना ही रहता था, साथ ही उनके सामने यह भी आशका थी कि कही उन्हे ऐसी लडाइयो मे न पडना पडे, जिनके वास्तविक कारण सुदूर यूरोप मे होने पर भी उत्तरी अमेरिका के इन उपनिवेशो को प्रभावित करते रहते थे। इसके अलावा इन उपनिवेशो का राजनैतिक सगठन बहुत अस्थिर था। सन् 1655 मे डच लोगो ने पीटर स्टुइवेसैण्ट के नेतृत्व मे न्यू स्वीडन उपनिवेश को जीता। लेकिन नौ वर्ष बाद इन्ही डच लोगो को अपना उपनिवेश न्यू ऐम्सटर्डम अग्रेजो से हारकर उनके सुपुर्द करना पडा।

सन् 1650 से 1750 तक सौ वर्षों मे इन उपनिवेशो का गर्भावस्था से विकास शुरू हुआ और वे निश्चित राजनैतिक इकाइयाँ बन गए। फिर भी उनके इस विकास से यह सकेत नही मिलता था कि भविष्य मे ये उपनिवेश मिलकर एक और स्वतन्त्र हो जाएँगे। विचारधारा की दृष्टि से ये उपनिवेश एक-दूसरे से बहुत अलग थे, क्योकि उनके धर्म और राजनैतिक सगठन अलग-अलग किस्मो के थे। भौतिक दृष्टि से भी वे एक-दूसरे से अलग

थे, क्योकि उनके बीच मार्ग और सचार के साधन बहुत अपर्याप्त और खराब थे। उनके आर्थिक कारबार मे और भी ज्यादा अन्तर था। तीन स्पष्ट और एक-दूसरे से भिन्न क्षेत्र बन गए थे—न्यू इग्लैड, मध्य अटलाटिक और दक्षिण—और इस भिन्नता का कारण उनके प्राकृतिक साधनो और आर्थिक गतिविधि की भिन्नता था।

सन् 1650 मे न्यू इग्लैड विभिन्न कृषि-जीवी इलाको और समुदायो का एक समूह था। कठोर मौसम, घटिया जमीन और भूमि-सम्बन्धी कानूनो से, जिनमे जमीन को अनेक उत्तराधिकारियो मे बॉटने की अनुमति दे दी गई थी, बडी जमीदारियॉ नही बन पा रही थी। फार्म छोटे-छोटे और व्यक्तिगत मिल्कियत थे। उनका आकार दस एकड से सौ एकड तक था। सन् 1700 तक यह हालत थी कि इस प्रदेश की निकम्मी पथरीली जमीन मे थोडी-सी भी व्यापारिक फसल नही होती थी।

लेकिन जैसे-जैसे समय गुजरता गया, न्यू इग्लैड के लोगो ने, जिनकी दक्षता हमेशा प्रसिद्ध रही है, अनेक प्रकार के लाभकारी उद्योग-धन्धे विकसित कर लिये। यूरोपियन अधिवासियो ने जब यह महसूस कर लिया कि इडियन शिकारियो से शराब के बदले मे जानवरो की खाले और बाल प्राप्त किये जा सकते है, तो समूर के व्यापार का महत्त्व भी बढ गया। जहाजो का निर्माण, मछलियॉ पकडना और ह्वेल का शिकार करना भी न्यू इग्लैड के लोगो की विशेषता बन गया।

उपजाऊ कनैक्टिकट घाटी मे आटा-चक्कियो का व्यवसाय फलने-फूलने लगा। फिर भी फालतू उत्पादन बहुत अधिक नही था और न्यू इग्लैड के लोगो को कारखानो मे निर्मित वस्तुएँ अधिकतर इग्लैड से मॅगानी पडती थी। लेकिन इस प्रदेश ने कुछ कामो मे जो विशेषता प्राप्त कर ली थी, उससे उसकी जडे मजबूत हो गई।

मध्य अटलाटिक उपनिवेशो—न्यूयार्क, न्यूजर्सी और पेनसिलवेनिया—मे अन्य उपनिवेशो की अपेक्षा गैर-अग्रेज लोगो की सख्या कुछ अधिक थी। इसलिए डच, स्वीडिश, जर्मन, आयरिश और स्कॉच आयरिश लोगो के सम्मिश्रण ने इन उपनिवेशो की सभ्यता को अधिक विविधतापूर्ण बना दिया था। नगरो के प्रशासन अधिवासियो को जमीन दे, इसके बजाय

बडी-बडी जमीनो के मालिक ही उन्हे अपनी जमीने बेचते या दान मे देते थे। लेकिन इसके बदले मे वे उनसे थोडा-सा किराया अपने लिए बाँध लेते थे। परन्तु यह किराया (लगान) अधिवासियो को पसन्द नही था, इसलिए उनसे इसे वसूल करना बहुत कठिन होता था।

इन उपनिवेशो मे जमीन न्यू इग्लैड की अपेक्षा अधिक उपजाऊ थी, इसलिए यहाँ कृषि-अर्थ-व्यवस्था मे अधिक विविधता सम्भव थी। यहाँ की मुख्य उपज गेहूँ थी, लेकिन पशु-पालन का व्यवसाय भी यहाँ चलता था। गेहूँ और पशु देकर ये अधिवासी लोग वेस्ट इडीज से ब्राडी, शर्बत, चीनी और नमक आयात करते थे। अन्य सभी उपनिवेशो की भाँति यहाँ भी समूर का निर्यात की जाने वाली वस्तुओ मे एक महत्त्वपूर्ण स्थान था।

यद्यपि मध्य अटलाटिक उपनिवेशो मे न्यू इग्लैड की अपेक्षा व्यापारिक फसलो का अधिक महत्त्व था, तो भी दोनो जगह आम चीजो की भी खेती की जाती थी। इन दोनो क्षेत्रो मे घरो पर ही फरनीचर, कपडा, साबुन और मोमबत्ती आदि तैयार करना भी ज़रूरी था।

लेकिन धीरे-धीरे वहाँ कारखानो को सगठित रीति से स्थापित करने और चलाने का काम भी शुरू हो गया, जिसका एक अच्छा उदाहरण पेनसिलवेनिया का लोहे का कारखाना था, जो मध्य अटलाटिक क्षेत्र की प्रमुख औद्योगिक गतिविधि था। इस उद्योग से मुख्यत. घरेलू उपयोग के लिए बर्तन, कढाइयाँ और खेती के लिए कुल्हाडे, कुदालियाँ और फावड़े आदि बनाने का लोहा तैयार किया जाता था।

यह कारख़ाना शहर मे नही, बल्कि देहाती इलाके के बीच मे, जहाँ खेती होती थी, खडा किया गया था। लोहे की खाने, मजदूरो के मकान, पिसाई की चक्कियाँ, आरे, भट्टियाँ और ढलाईघर हजारो एकड ज़मीन मे फैले हुए थे। पूँजी की कमी के कारण कारख़ाने के मालिक आमतौर पर मज़दूरो को खाद्य-पदार्थ और रिहायश के स्थान की शक्ल मे मजदूरी देते थे। इसका अर्थ यह था कि लोहे के कारख़ाने के साथ-साथ अनाज और कपास आदि कृषि-पदार्थो का उत्पादन भी जारी रखना पड़ता था। श्रमिको की स्थिति खुले बाजार और सामन्तवादी प्रणाली के मिश्रण का परिणाम थी।

दक्षिण के उपनिवेशो की परिस्थितियाँ अन्य दोनो क्षेत्रो के उपनिवेशो की परिस्थितियो से सर्वथा भिन्न थी। यहाँ व्यावसायिक कृषि और व्यापारिक फसलो का महत्त्व अन्य दोनो क्षेत्रो से अधिक था। मेरीलैंड और वर्जीनिया के तम्बाकू और दक्षिणी कैरोलिना के चावल के लिए बडे पैमाने

वर्जीनिया, पेनसिलवेनिया, न्यूयार्क और न्यू इग्लैंड के निवासी का भेद अब नही रहा। मै अब वर्जीनियन नहीं हूँ, बल्कि एक अमेरिकन हूँ।

पैट्रिक हेनरी, 1774

पर खेती की आवश्यकता होती थी। इसलिए दक्षिणी राज्यो के खेत सैकडो एकड के नही, हजारो एकड के होते थे। इन खेतो मे काम करने के लिए बहुत बडी सख्या मे ऐसे मजदूरो की आवश्यकता होती थी जो तपते हुए सूर्य की धूप मे भी काम कर सके। कुछ तो मजदूरो की कमी के कारण और कुछ गोरे लोगो के अर्ध-उष्ण परिस्थितियो मे काम करने के अनिच्छुक होने से दक्षिणी राज्यो को मजबूरन गुलाम मजदूरो को बाहर से लाना पडा। यद्यपि मध्य अटलाटिक उपनिवेशो मे भी जमीदारियाँ और जागीरे थी और न्यू इग्लैड मे भी बडे-बडे दौलतमन्द व्यापारी थे, फिर भी दक्षिण के उपनिवेशो मे ही एक अभिजात-तन्त्र की स्थापना हो सकी। इस अभिजात-तन्त्र की बुनियाद बडी बडी कृषि-जागीरो और गुलाम मजदूरो पर खडी थी।

सस्ती जमीन, सरल भूमि-कानून और तम्बाकू, चावल या नील-जैसी व्यापारिक फसलो का उत्पादन—इन तीनो ने मिलकर इन उपनिवेशो की समृद्धि मे योग दिया। किन्तु दूसरी ओर एक ही फसल के उत्पादन और कृषि की किस्म की अर्थव्यवस्था ने निर्माण उद्योगो के विकास को निरुत्साहित भी किया। आबादी सारे क्षेत्र मे काफी व्यापक रूप मे फैली हुई थी। छोटे-छोटे और जिस किसी तरह कठिनाई से निर्वाह करने वाले किसानो की सख्या फार्मों के मालिको से कही अधिक थी, लेकिन हर फार्म या बागान का बहुत से करार से बँधे मजदूरो और गुलामो पर नियन्त्रण था। यद्यपि दक्षिणी उपनिवेशो की अर्थव्यवस्था आत्म-निर्भर नही थी तो भी वह सबसे

अधिक लाभदायक थी।

दक्षिण के अभिजातवर्गीय जमीदारो, न्यू इग्लैंड के व्यापारियो और मध्य अटलाटिक और उत्तरी उपनिवेशो के स्वतन्त्र किसानो के हितो मे कही कोई साम्य नजर नही आता था। दक्षिणी उपनिवेशो की फालतू उपज के लिए यूरोप ही स्वाभाविक बाजार था, क्योकि शेष उपनिवेश न तो उन्हे खरीदकर खपा सकते थे और न उनके बदले मे दक्षिण के उपनिवेशो की कारखानो मे निर्मित वस्तुओ की जरूरत पूरी कर सकते थे।

सामाजिक आचार-विचार और आर्थिक हित विभिन्न क्षेत्रो को एक-दूसरे से अलग करते थे। दक्षिण के ऐग्लिकन लोग उत्तर के प्योरिटन लोगो के निरानन्द जीवन की कभी प्रशसा नही कर सकते थे और प्योरिटन लोग दक्षिण के विलासी अभिजात-वर्ग की क्षुद्र विलासिता और नास्तिकता की निन्दा करते थे।

जीवन-पद्धतियाँ, आर्थिक हित, जलवायु और राजनैतिक सगठन उपनिवेशो को परस्पर एक करने के बजाय उनमे विभेद पैदा करते थे। फिर भी 1750 के बाद की पीढी मे तेरहो उपनिवेशो मे काफी हद तक एकता स्थापित हो गई और उन्होने सगठित होकर एक सर्वसामान्य शत्रु के खिलाफ विद्रोह किया। वह क्या चीज थी जिसने उन सबको सगठित किया और इग्लैंड को अपना दुश्मन समझने के लिए मजबूर किया?

इन प्रश्नो के उत्तर अशत आर्थिक है। दक्षिण और उत्तर दोनो को इग्लैंड की नीति मे अनेक बाते सामान्य रूप से असन्तोषजनक लगी। यद्यपि दक्षिण की फालतू उपज की बिक्री के लिए यूरोप उत्तम बाजार था तो भी इग्लैंड का आग्रह यह था कि यह फालतू उपज यूरोपियन महाद्वीप के बजाय इग्लैंड मे ही बेची जाए। इससे दक्षिणी उपनिवेशो के उत्पादको का बहुत-सा मुनाफा खटाई मे पड जाता था। इसके अलावा दक्षिणी उपनिवेशो के लोग इग्लैंड से जो निर्मित वस्तुएँ मँगाते थे, उनकी कीमते बहुत ज्यादा होती थी। दक्षिणी उपनिवेशो के लोग दूसरे देशो के लोगो का आतिथ्य करने और उनकी बातो को ज्यो-का-त्यो मान लेने के लिए विख्यात थे और व्यापारिक हिसाब-किताब मे कच्चे थे, इसलिए व इग्लैंड के व्यापारियो के कर्जदार बन गए।

उत्तर के लोगो को इग्लैड से जो शिकायते थी उनकी सूची और भी लम्बी थी। उन्हे ब्रिटेन के वाणिज्यवाद से, जिसका आधार उपनिवेशो को इग्लैड के उद्योगो के लिए कच्चे माल का स्रोत और इग्लैड के तैयार माल का बाजार बनाना था, बहुत शिकायत थी। समूचे औपनिवेशिक युग मे ब्रिटिश पार्लमेट ने वाणिज्य-सम्बन्धी जो भी नीतियाँ अपनाई, उनका उद्देश्य उपनिवेशो मे कारखानो की स्थापना और उनके निर्यात-व्यापार को सीमित कर इग्लैड और उपनिवेशो के उपर्युक्त सम्बन्ध को सुदृढ बनाना ही था। इस एक दृष्टिकोण से अगर हम सत्रहवी और अठारहवी शताब्दियो के इतिहास को देखे तो हमे मालूम होगा कि अग्रेजो ने लगातार वाणिज्यवादी नीतियो को कार्यान्वित करने की चेष्टा की और अमेरिकनो ने उनसे बचने का प्रयत्न किया।

लेकिन अमेरिकन निर्माण-उद्योगो के सौभाग्य से इग्लैड ने अपनी नीतियो को बहुत दृढता से क्रियान्वित नही किया, कभी वह इस सम्बन्ध मे कुछ दृढता दिखाता और कभी फिर ढील दे देता। सन् 1651 से 1674 तक दो दशक से भी अधिक समय तक इग्लैड ने इन नीतियो पर दृढता दिखाई। इस अवधि मे ब्रिटिश पार्लमेट ने जो कानून पास किये उनमे यह निर्धारित कर दिया गया था कि अमेरिकन उपनिवेश किन-किन वस्तुओ का निर्यात कर सकते है। उनमे यह व्यवस्था भी की गई थी कि ये वस्तुएँ इग्लैड के जहाज़ो मे ही इग्लैड भेजी जाएँ और उपनिवेशो को यूरोप से यदि कोई सामान मँगाना हो तो वह इग्लैड से ही मँगाया जाए। सन् 1673 के कानून ने उपनिवेशो के व्यापार को बहुत अस्त-व्यस्त किया, क्योकि इस कानून मे उनके चीनी, तम्बाकू और अन्य उत्पादनो के पारस्परिक निर्यात पर शुल्क लगा दिया गया था। इस कानून का प्रयोजन स्पष्टत यह था कि उपनिवेशो मे परस्पर व्यापारिक सम्बन्ध न बढे और वे एक-दूसरे से अलग-अलग रहे।

सन् 1733 का शीरा कानून (मोलैसेज ऐक्ट) न्यू इग्लैड के एक महत्त्वपूर्ण व्यापारिक कारबार को ठप्प करने का जबर्दस्त प्रयत्न था। सन् 1715 के बाद फ्रेच और डच वेस्ट इडीज़ मे चीनी का उत्पादन बढ गया और फलत इन उपनिवेशो मे चीनी के भाव गिर गए। इसलिए न्यू इग्लैड के व्यापारियो को स्वभावत ऐसा लगा कि उन्हे अपने निर्मित माल के बदले

ब्रिटेन की वैदेशिक नीति की दृष्टि से यह रक्षा करना आवश्यक होगा।

अमेरिका के राजनैतिक चिन्तन मे हमेशा पृथक्तावाद का जो तत्त्व विद्यमान रहा, उसका मूल स्रोत ये औपनिवेशिक लडाइयाँ ही थी। इस पृथक्तावादी तत्त्व की सबसे अधिक प्रख्यात अभिव्यक्ति हमे जॉर्ज वाशिगटन के विदाई-भाषण मे मिलती है। इन लडाइयो का एक लाभ भी हुआ और वह यह कि उन्होने सब उपनिवेशो के निवासियो को अपने सर्वसामान्य शत्रुओ से अपनी रक्षा के लिए परस्पर सगठित किया और सभी के मन मे ब्रिटिश लडाइयो के विरुद्ध सामान्य रूप से रोप पैदा किया।

सन् 1750 मे से ये तेरहो उपनिवेश परस्पर सगठित नही थे। लेकिन 1750 तक उन सभी ने अपनी सीमाओ को और अधिक पश्चिम की ओर बढाने का अनुभव प्राप्त किया था। इन सभी मे ब्रिटेन की औपनिवेशिक नीति के प्रति असन्तोष था। न्यू इग्लैड ने जब दक्षिणी उपनिवेशो की उपज को खरीदना और उसके कारखानो ने उसके बदले मे माल तैयार करना प्रारम्भ किया, तो इन सब उपनिवेशो की अर्थ-व्यवस्थाएँ भी एक-दूसरी के साथ अधिक अनुकूल और सगत होने लगी।

अगले पच्चीस वर्ष के भीतर इग्लैड की कुछ गलत नीतियो और अत्याचारपूर्ण कामो ने उपनिवेशो के लोगो का असन्तोष और भी बढा दिया। पहले जहाँ वे अधीर थे और कानूनो से बचने की चेष्टा करते थे वहाँ अब उन्होने उनकी अवहेलना और उनके खिलाफ खुल्लमखुल्ला विद्रोह करना प्रारम्भ कर दिया।

संयुक्त राज्य की आबादी मे आनुमानिक वृद्धि (1650-1750)

1650—	51,000	1710—	3,57,000
1660—	84,000	1720—	4,74,000
1670—	1,14,000	1730—	6,54,000
1680—	1,55,000	1740—	8,89,000
1690—	2,13,000	1750—	12,07,000
1700—	2,75,000	1760—	16,00,000
		1770—	22,05,000

"हम इन सत्यो को स्वत सिद्ध मानते है कि जन्म से सब मनुष्य समान है, उनके स्रष्टा ने उन सबको कुछ अनपहरणीय अधिकार प्रदान किये हैं और इन अधिकारो मे जीवन, स्वतन्त्रता और सुख की प्राप्ति शामिल है।"

क्रान्ति और स्वतन्त्रता

उपनिवेशो की 'लाभदायक उपेक्षा' की ब्रिटेन की नीति का अन्त 1760 मे हुआ। ब्रिटेन द्वारा अपनी वाणिज्यवादी प्रणाली को फिर से शक्तिशाली वनाए जाने का परिणाम उपनिवेशो की अर्थव्यवस्था के लिए वहुत घातक था। अब तक सभी उपनिवेश एक तरह से स्वशासन का उपभोग कर रहे थे, किन्तु जव उन पर कठोर राजनैतिक और आर्थिक नियन्त्रण लादे जाने लगे तो इस स्वशासन के लिए खतरा पैदा हो गया। सन् 1763 की घोपणा से जिसमे ऐपलेचियन पर्वतमाला के पश्चिम मे भूमि-अनुदान देने और वस्तियाँ वसाने का निषेध किया गया था, मिल्कियत के रूप मे वडी-वडी जमीदारियाँ स्थापित करने वालो, जमीने सस्ते भाव पर खरीदकर महँगे भावो मे वेचने के इच्छुक सटोरियो और छोटे किसानो का जमीन की प्राप्ति के लिए नए-नए इलाको मे आगे वढना वन्द हो गया।

इससे भी वडी वात यह कि ब्रिटेन अपनी वाणिज्यवादी नीतियो को कडाई से लागू करने और उपनिवेशो से राजस्व की वसूली के लिए दुगुने उत्साह से जुट गया। उसके द्वारा लगाए गए करो और प्रतिवन्धो से यह स्पष्ट जाहिर था कि इग्लैड और उसके उपनिवेशो के हितो मे जवर्दस्त सघर्प है।

ब्रिटेन द्वारा वाणिज्यवादी साम्राज्य की स्थापना का प्रयत्न पुन किये जाने पर उपनिवेशो ने आर्थिक विरोध से लेकर साविधानिक विवाद तक सभी प्रकार के उपायो से उसकी मुखालफत की। जव उत्तरी उपनिवेशो ने राजस्व-सम्वन्धी कानूनो के आगे झुकने से इन्कार किया और ब्रिटेन से माल

का आयात और उसका उपभोग वन्द करने का तरीका अपनाया तो ब्रिटिश पार्लमेंट ढीली पड गई। ब्रिटेन ने स्टाम्प कानून और अनेक सामान्य जिन्सो पर शुल्क लागू करने वाले टाउनशैंड कानूनो-जैसे अप्रिय अधिनियमो को रद्द कर दिया। लेकिन पार्लमेंट 'कर' उगाहने का अपना अधिकार छोडने के लिए किसी भी तरह तैयार नही थी। लेकिन उपनिवेशो के निवासियो ने तव तक इस अधिकार को स्वीकार करने से इन्कार किया जव तक कि पार्लमेंट मे उन्हे प्रतिनिधित्व न दिया जाए।

स्वतन्त्रता की लडाई अमेरिकन उपनिवेशो मे राष्ट्रवाद के उमडते हुए ज्वार की अभिव्यक्ति नही थी। उपनिवेशो के लोगो ने इसलिए विद्रोह नही किया कि उन्हे ब्रिटिश राजा की प्रजा वने रहने मे ऐतराज़ था और न इसीलिए कि वे पार्लमेंट के कानून से वचना चाहते थे। वल्कि उनके विद्रोह का कारण उनका यह असन्तोष था कि अग्रेज होने के कारण उन्हे जो अधिकार स्वभावत मिलने चाहिए थे, उनसे उन्हे वचित रखा जा रहा था। यह असन्तोप इतना वढ गया कि अन्त मे उन्हे राजा जॉर्ज तृतीय की सरकार के खिलाफ लडाई लडनी पडी, लेकिन इस लडाई के वावजूद वे ऐंग्लो-सैक्सन परम्पराओ के साथ अपना सम्वन्ध-विच्छेद नही करना चाहते थे। वास्तव मे उन्होने राजा और पार्लमेंट के खिलाफ जो लडाई लडी वह इन परम्पराओ के अनुरूप समझकर ही लडी।

उपनिवेशो ने काफी हिचकिचाहट के वाद 4 जुलाई, 1776 को जो स्वतन्त्रता की घोपणा जारी की उसके मूल मे विद्यमान राजनैतिक विचार-धारा ने उन्नीसवी शताब्दी के अधिकतर यूरोपियन सुधार-आन्दोलनो को प्रभावित किया। इस प्रसिद्ध घोपणा मे, इसके रचयिता टामस जैफर्सन ने इस स्वेच्छातन्त्रवादी दार्शनिक विचारधारा का प्रतिपादन किया कि "सरकारो को शासित लोगो की अनुमति से अधिकार प्राप्त होते हैं।" इस प्रकार अमेरिका के अग्रेज उपनिवेशो मे हुई क्रान्ति केवल स्वतन्त्रता की लडाई ही नही थी, यह उन शक्तिशाली विचारो का, जो अठारहवी शताब्दी के यूरोप की सस्थापित राजनैतिक व्यवस्था के लिए अधिकाधिक ख़तरा पैदा कर रहे थे, एक सुदूरगामी प्रतिविम्व थी।

उपनिवेशो की आवादी के चार विभिन्न खडो ने क्रान्ति-आन्दोलन को

बल प्रदान किया ये चार खड थे, दक्षिण के जमीदार, उत्तर के व्यापारी, छोटे किसान और शहरो और समुद्र-तटवर्ती नगरो के मजदूर।

दक्षिण के जमीदारो को इस बात पर बहुत नाराजगी थी कि उत्तर के साहूकार उनके व्यापार पर हावी हो रहे है। उन्हे लगता था कि ब्रिटिश सरकार की नीति इन साहूकारो को मजबूत बनाने की है। उन्हे एपलेच्चियन पर्वतमाला के पश्चिम मे सीमा के बन्द कर दिये जाने पर भी बहुत रोष और असन्तोष था।

दूसरी ओर उत्तर के व्यापारियो को यह शिकायत थी कि ब्रिटिश सरकार उनके व्यापार पर प्रतिबन्ध लगा रही है और उसने पश्चिम की ओर की जमीनो के सट्टे-फाटके से उन्हे रोक दिया है।

छोटे व्यापारी भी व्यापारिक प्रतिबन्धो से दु खी थे, क्योकि इनसे उनकी उपज का मूल्य गिर गया था। साथ ही वे भी 1763 की घोषणा के अनुसार सीमा के पश्चिम की ओर की नई जमीनो मे आबाद होने से रोक दिए जाने के कारण नाराज थे।

शहरी मजदूरो के असन्तोष का कारण यह था कि सरमायेदार उनका शोषण कर रहे थे। इन सरमायेदारो के हाथ मे ही सत्ता थी और पार्लमेंट आमतौर पर उनका समर्थन करती थी। राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक भेदभाव के कारण क्रुद्ध श्रमिक-वर्ग बहुत कट्टर क्रान्तिवादी बन गया था।

क्रान्तिकारी सेना को अधिकतर शस्त्रास्त्र और युद्ध सामग्री फ्रास से मिलती थी। फ्रास अमेरिकन उपनिवेशो का सबसे अधिक उत्साही साथी था। वास्तव मे फ्रेच लोगो की सहायता के बिना क्रान्तिकारी सेना युद्ध का भार अधिक समय तक सहन न कर पाती और लडाई न जीत सकती। वास्तव मे ब्रिटेन यह लडाई सिर्फ इसलिए हार गया कि उसके पास कोई निश्चित रण-नीति नही थी और ब्रिटेन के लोगो मे एकता का अभाव था। जॉन ऐडम्स प्रारम्भ मे फ्रास के साथ किसी भी तरह का 'उलझाने वाला गठबन्धन' करने का उग्र विरोधी था, लेकिन 1776 के साल की समाप्ति से पूर्व ही क्रान्तिकारी सेना की हालत इतनी कमजोर हो गई कि काग्रेस (अमेरिकन ससद्) ने अन्तत बेंजामिन फ्रेंकलिन को फ्रास के साथ एक

'आक्रमणात्मक' गठवन्धन करने की अनुमति प्रदान कर दी।

उपनिवेशो की अर्थव्यवस्था स्वतन्त्रता की लडाई प्रारम्भ होने से पहले ही काफी हद तक आत्म-निर्भर हो चुकी थी। इसलिए युद्ध के दौरान मे ब्रिटेन के साथ व्यापार-सम्वन्ध विच्छिन्न हो जाने पर भी, उपनिवेशो के लोगो को कोई तकलीफ नही उठानी पडी। इसके अलावा फ्रास, स्पेन और हालैड के लोग, जो ब्रिटेन के व्यापार को हमेशा ललचाई नजरो से देखते थे, ब्रिटिश जहाजो के औपनिवेशिक वन्दरगाहो से हट जाने पर उनका स्थान लेने के लिए उतावले हो उठे।

इसके अतिरिक्त शायद दो हजार के लगभग अमेरिकन लोग गैरकानूनी तौर पर छोटे-छोटे जहाज और नावे लेकर समुद्र मे ब्रिटिश जहाजो को लूटने के लिए उतर पडे थे। उन्हे ब्रिटिश जहाजो को पकडने और तस्कर-व्यापार करने मे वहुत भारी मुनाफा होता था जिसका उन्होने कभी हिसाव नही लगाया। दरअसल, ब्रिटिश व्यापारियो को इन समुद्री डाकुओ से जहाजो और माल की जो भारी क्षति उठानी पडी उससे तग आकर उन्होने सरकार से इस लडाई को जल्दी खत्म करने की माँग की।

यद्यपि क्रान्ति के दिनो मे उत्पादन की दृष्टि से अमेरिका की अर्थ-व्यवस्था ठीक चल रही थी, किन्तु उत्पादित सामान के वितरण की कोई केन्द्रीय योजना न होने से कभी-कभी सेना के पास सामग्री की वहुत अधिक कमी हो जाती थी। कांग्रेस को कर लगाने का अधिकार नही था, इसलिए वह राज्यो से सामान देने की प्रार्थना के सिवाय और कुछ नही कर सकती थी और राज्य अक्सर केन्द्रीय शासन द्वारा माँगी गई यह सहायता इसलिए नही देते थे कि जनता सव राज्यो का कोई केन्द्रीय शासन पसन्द नही करती थी और वह कर लगाने के विचार की भी विरोधी थी। ऐसे लोगो की सख्या वहुत वडी थी, जो अपने चारो ओर चल रही लडाई के प्रति विल्कुल उदासीन थे और किसी भी तरह का व्यक्तिगत त्याग करने का विचार आमतौर पर उनके मन मे नही उठता था।

दूसरी ओर फ्रास ने अमेरिकन लोगो की सहायता के लिए जो सैनिक यूरोप से भरती करके भेजे थे, वे अमेरिकन सैनिको की दृढता के वडे प्रशसक थे। जनरल द काल्व ने, जो 1777 के भयकर जाडो मे वाशिगटन और

उनकी ठिठुरती और भूखी सेना के साथ वैली फोर्ज मे थे, कहा कि "यूरोप के किसी भी देश की सेना इस तरह की कठिनाइयो को इतनी बहादुरी से बर्दाश्त न कर पाती।" एक अन्य फ्रासीसी सेनापति जनरल लफायेत ने गर्व से लिखा था, "नागरिको को अपनी भूखी, नगी और मेहनत-मशक्कत से चूर सेना की सहायता करनी पड रही है, जिसे वेतन भी कतई नही मिल रहा।"

वैली फोर्ज के उस भयकर जाडे के बाद क्रान्तिकारी सेना की विजय के आसार बढ गए। अमेरिकनो की अनेक विजयो ने सेना मे नया जोश भर दिया। और ब्रिटिश लोग, जो यह समझते थे कि लडाई जल्दी ही खत्म हो जाएगी, इस लम्बे युद्ध से आजिज आ गए। उससे उन्हे भारी कर-भार के सिवाय और कुछ नही मिल रहा था, फलत ब्रिटेन ने शान्ति और समझौते की बातचीत प्रारम्भ कर दी और अन्त मे 1783 मे दोनो शक्तियो मे पेरिस मे एक सन्धि पर हस्ताक्षर हो गए जिससे अमेरिकन क्रान्ति-युद्ध अधिकृत रूप से समाप्त हो गया।

युद्ध समाप्ति और शान्ति से नये राष्ट्र के कुछ आर्थिक क्षेत्रो मे मन्दी आ गई। लडाई खत्म होते ही रातो-रात सामान की युद्धकालीन माँग खत्म हो गई और उसके साथ ही एक सर्वसामान्य शत्रु के विरुद्ध एकता की भावना का भी अन्त हो गया। कर्ज के बोझ से दबे लोगो ने कर्जो को कम करने या पूर्णत समाप्त कर देने की माँग की। किसानो को भी कीमते गिरने से नुकसान होने लगा, क्योकि एक ओर तो उनके पास सेना की माँग घट जाने से भारी मात्रा मे माल का स्टाक जमा हो गया और दूसरी ओर ब्रिटिश वेस्ट इडीज आदि के परम्परागत बाजार उनके हाथ से निकल गए। लडाई के दिनो मे जो उद्योग खूब फल फूल रहे थे, उनके पास अब बहुत फालतू सामान जमा हो गया और उधर यूरोप से भी बेरोकटोक माल आने लगा, जिससे अमेरिका के पहले से ही भरे हुए बाजार और भी भर गए।

लेकिन जहाँ एक ओर अमेरिकन अर्थव्यवस्था के कुछ क्षेत्र मन्दी के शिकार हो रहे थे, वहाँ कुछ अन्य क्षेत्र खूब सक्रिय थे और उनका विस्तार हो रहा था। दक्षिण के बागान के मालिको और जमीदारो को विदेशो से उनकी उपज की माँग आने के कारण लाभ हो रहा था। देश के आन्तरिक

सुधारो—जमीन, नहर, चुगी-चौकी और निर्माण कम्पनियो आदि—की ओर से पूँजी की माँग थी। वाणिज्य को भी अनेक साधनो से लाभ हो रहा था। कारण, यूरोप को माल का निर्यात बढ रहा था, अनेक अमेरिकन वस्तुओ के लिए ब्रिटेन के अविदान अभी तक जारी थे और फ्रेंच वेस्ट इडीज के द्वार भी अमेरिकन व्यापार के लिए खुल गए थे। साथ ही हालैंड, एशिया और स्वीडन के साथ भी व्यापारिक समझौते किये गए थे।

लेकिन नई अमेरिकन अर्थ-व्यवस्था और उसके विस्तार और समृद्धि की सम्भावनाओ को महासघ नियमावली के अन्तर्गत ही रहना था। अर्थव्यवस्था को कमजोर करनेवाली यह नियमावली नया सविधान बनने तक, जो 1789 मे स्वीकृत हुआ, राष्ट्र का काम चलाने के लिए तैयार की गई थी। इस नियमावली मे राष्ट्रीय (केन्द्रीय) सरकार के हाथ मे प्राय कोई शक्ति नही थी, क्योकि राज्यो को बहुत-से अधिकार अपने ही हाथ मे रखने की अनुमति दे दी गई थी, जिनमे मुद्रा जारी करने का अधिकार भी शामिल था।

राज्य यह नही चाहते थे कि राष्ट्रीय (केन्द्रीय) राजस्व का कोई स्रोत स्थापित किया जाए। उस जमाने की आर्थिक मन्दी और धीरे-धीरे हो रहे सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनो ने राष्ट्र की कठिनाइयो को और भी बढा दिया। राष्ट्र की राजस्व-आय आन्तरिक देनदारियो को पूरा करने के लिए पर्याप्त नही थी और विदेशी ऋणो के व्याज की देनदारियाँ भी बढ गई थी। सन् 1783 मे व्याज की ये देनदारियाँ 31 लाख डालर थी और छ वर्ष बाद 1789 मे वे 114 लाख डालर हो गई।

इसलिए दुर्बल महासघ-नियमावली के स्थान पर सुदृढ शासन की नई व्यवस्था अपनाने के सिवाय और कोई मार्ग नही था। राजनैतिक गडबडी और राज्यो की पारस्परिक प्रतिस्पर्धाओ के कारण आर्थिक और राजनैतिक हितो मे एक तरह की अराजकता फैली हुई थी। इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक था कि एक नई शासन-प्रणाली स्थापित की जाए, अन्यथा राज्यो के स्थायी सघ-निर्माण और राष्ट्र की समृद्धि की रही-सही आशाएँ भी खत्म हो जाने की आशका थी।

एक बार फिर अधिक शक्तिशाली और 'अधिक आदरणीय सघ' के

निर्माण की माँग उठी। यह माँग चार विभिन्न वर्गों की ओर से आई। ये चार वर्ग इस प्रकार थे—(1) वे व्यक्ति जिनके पास काफी मात्रा मे कागजी मुद्रा, बॉड और ऋण-पत्र थे, (2) विकासोन्मुख निर्माण उद्योगो के सचालक, जो विदेशी सामान और उद्योगो से सरक्षण चाहते थे, (3) देशी व्यापारी, जो स्थिर मुद्रा और प्रतिबन्धरहित अन्तर्राज्यीय व्यापार के समर्थक थे, और (4) जमीन का सट्टा-फाटका करने वाले, जिनका यह खयाल था कि एक शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार की स्थापना हो जाने से उनकी जमीनो की कीमते चढ जाएँगी।

इनके अलावा भी वहुत-से ऐसे लोग थे, जो किसी प्रकार के आर्थिक लाभ की आशा न होने पर भी एक शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार के समर्थक थे। उनकी इस आकाक्षा का कारण राष्ट्रवाद की भावना थी, जो सारे राष्ट्र मे प्रबल हो रही थी।

लेकिन शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार के समर्थको को ऋणग्रस्त लोगो के, खास तौर से पश्चिमी सीमा के साथ-साथ आबाद छोटे किसानो के, जो यह अनुभव करते थे कि केन्द्रीय सरकार के वजाय अलग-अलग राज्यो की सरकारे उनकी 'सस्ते ऋण', की माँग के प्रति अधिक सहानुभूति का रुख अपनाएँगी, विरोध का सामना करना पडा। ऋणग्रस्त वर्ग को उन लोगो का काफी समर्थन प्राप्त था जिन्हे यह भय था कि शक्तिशाली सरकार के वन जाने से व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के लिए खतरा पैदा हो जाएगा।

साहूकारो और ऋण लेने वालो का सघर्ष मसाचुसेट्स मे अधिक उग्र रूप से सामने आया। वहाँ जो कर लगाये गए वे छोटे किसानो के लिए प्रतिकूल और उन्हे ऋण देने वाले साहूकारो के लिए अनुकूल थे। नतीजा यह हुआ कि 1786 मे इन ऋणग्रस्त किसानो ने राज्य सरकार के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह कर दिया। मैसाचुसेट्स के अधिकारी कई महीनो तक इस विद्रोह को शान्त करने मे असफल रहे, इसलिए इस विद्रोह ने ऋणग्रस्त लोगो का उद्देश्य सिद्ध करने के वजाय लोगो पर यह जाहिर किया कि एक शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार की शीघ्र आवश्यकता है। एक अनुदार पन्थी ने तत्कालीन स्थिति पर टिप्पणी करते हुए कहा था कि "गरीव की महत्त्वाकाक्षा और धनी के लोभ को राज्यीय शासन के सकरे स्तर पर कभी भी सीमित नही किया जा सकता।"

ऊपर से देखने पर ऐमा प्रतीत होता था कि सविधान के निर्माण के लिए आयोजित महासम्मेलन, जो काफी कठिनाई और प्रयत्नो के बाद 1787 मे फिलाडेल्फिया मे बुलाया जा सका था, परस्पर-विरोधी आर्थिक हितो के सघर्ष मे उलझ जाएगा। सम्मेलन के प्रतिनिधियो के सामने सवाल यह था कि व्यवसायी पूँजीपति और कृषिजीवी पूँजीपति—दोनो के हितो की रक्षा के लिए समान सरक्षण कैसे निर्धारित किये जाएँ। किन्तु वास्तव मे यह प्रतिस्पर्धा एक शुरुआत थी। इसके बाद और भी अनेक प्रकार की प्रतिस्पर्धाएँ सिर उठाकर खडी हो गई, जो एक साथ अनेक मोर्चो पर विकास का प्रयत्न करने वाले एक नवीन राष्ट्र के लिए स्वाभाविक ही थी। महासम्मेलन मे विभिन्न प्रतिस्पर्धी वर्गो के बीच जो समझौते हुए वे विभिन्न आर्थिक वर्गो के बुनियादी अनैक्य की अभिव्यक्ति न होकर, राष्ट्र की सर्वाधिक शक्ति के स्रोत बन गए। उन्होने राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था मे एक समुचित शक्ति सन्तुलन स्थापित कर दिया।

ब्रिटिश पार्लमेट के कानून, जिन्होने अमेरिकनो को क्रान्ति के लिए मजबूर किया

कानून	मुख्य प्रावधान
1 जहाजरानी कानून, 1651	1 ब्रिटिश साम्राज्य मे एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाये जाने वाले सामान ब्रिटिश या अमेरिकन जहाजो मे ही ढोए जाने चाहिएँ।
2 मुख्य वाणिज्य वस्तु कानून, 1663	2 यूरोपियन सामान इगलिश बन्दरगाहो की मार्फत उपनिवेशो मे भेजा जाना चाहिए।
3 जहाजरानी कानून, 1696	3 पिछले कानूनो पर कडाई से अमल की व्यवस्था।
4 ऊनी सामान कानून, 1699	4 उपनिवेशो मे परस्पर ऊनी सामान के व्यापार का निषेध।
5 करीगर कानून, 1718	5 दक्ष कारीगरो को इग्लैड से उपनिवेशो मे आकृष्ट करने का निषेध।

6 शीरा कानून, 1733	6 ब्रिटिशेतर क्षेत्रों से उपनिवेशों में आयातित चीनी, शीरा और शराब आदि पर भारी आयात शुल्कों की व्यवस्था।
7 चीनी कानून, 1764	7 शीरा कानून में लगाये गए शुल्कों को घटाकर आधा करने, किन्तु कानून को ज्यादा कड़ाई से लागू करने की व्यवस्था।
8 स्टाम्प कानून, 1765	8 विशिष्ट दस्तावेज़ों और विलासिता की वस्तुओं पर कर का प्रावधान।
9 सैनिक आवास कानून, 1765	9. अमेरिका में स्थित ब्रिटिश सैनिकों को सरायों और खाली मकानों में ठहराने की व्यवस्था।
10 राज-घोषणा कानून, 1766	10 राजा और पार्लमेंट को उपनिवेशों के ऊपर स्थापित करने की घोषणा।
11 चाय कानून, 1772	11 अमेरिका को चाय निर्यात करने वाले ब्रिटिश-व्यापारियों

नया राष्ट्र

यद्यपि सयुक्त राज्य का सविधान लगभग 175 वर्ष पूर्व बनाया गया था, तो भी आज भी वह एक सप्राण और सक्रिय अभिलेख है। इन वर्षो मे इसे अमेरिका के गतिशील समाज द्वारा उत्पन्न की गई नई परिस्थितियो के अनुसार समय-समय पर सशोधित किया जाता रहा है और इसकी व्याख्याएँ भी समयानुसार बदलती रही है।

सविधान के स्वीकार किये जाने के बाद दो वर्ष के भीतर ही प्रत्येक नागरिक को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की गारटी देने के लिए उसमे दस सशोधन जोडे गए। ये सशोधन 'अधिकारो का विधान' (बिल ऑफ राइट्स)कहलाते हैं। इन सशोधनो के अलावा सिर्फ बारह अन्य सशोधन 1791 के बाद जोडे गए है। राष्ट्र के सस्थापको के लिए यह बहुत बडे श्रेय की बात है कि उन्होने शासन की एक ऐसी पूर्ण प्रणाली तैयार की जिसमे ऐसी समस्याओ का भी समाधान विद्यमान था, जिनकी उस समय शायद कल्पना तक नही की जा सकती थी।

तत्वत यह सविधान अमेरिका के सर्वप्रभुत्व सम्पन्न राज्यो के बीच एक ऐसे समझौते के रूप मे तैयार किया गया था, जिसमे हर राज्य से अपनी प्रभुता के कुछ अश का सघीय सरकार के पक्ष मे परित्याग करने के लिए कहा गया था। वाशिगटन के सर्वप्रथम प्रशासन के सदस्यो और प्रशासन से सम्बद्ध अन्य व्यक्तियो मे प्रारम्भ मे विचारधारा सम्बन्धी जो मतभेद पैदा हुए उनका आधार यह विवाद था कि राज्य कितनी प्रभुसत्ता अपने हाथ मे रखे और कितनी सघीय शासन के लिए छोड दे।

जो गुट केन्द्रीय सरकार को शक्तिशाली बनाने के पक्ष मे था, उसके नेता वित्त मन्त्री अलेग्जैडर हैमिल्टन थे। उनके विरोधी, जिनके नेता परराष्ट्र मन्त्री टॉमस जैफर्सन थे, यह समझते थे कि केन्द्रीय सरकार को बहुत शक्तिशाली बनाना खतरनाक है, इसलिए राज्यो के अधिकारो पर

अधिक बल दिया जाना चाहिए। यह प्रारम्भिक बुनियादी विवाद किसी-न-किसी रूप मे अब तक चला आ रहा है।

वाशिंगटन के राष्ट्रपतित्व का पहला कार्यकाल समाप्त होते-न-होते (1789-93) ये गुट अन्तत दो अलग-अलग राजनीतिक दलो मे बँट गए। हैमिल्टन का दल 'फेडरलिस्ट' (सघवादी) कहलाने लगा और जैफर्सन का दल 'रिपब्लिकन' (गणतन्त्रवादी)। जैफर्सन न केवल हैमिल्टन द्वारा की गई सविधान की व्याख्या के विरोधी थे, बल्कि वह वित्तमत्री के रूप मे अपनाई गई उनकी वित्तीय नीतियो का भी विरोध करते थे।

हैमिल्टन के नेतृत्व मे सघीय सरकार ने राज्यो के ऋणो की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली, सयुक्त राज्य का पहला राजकीय शासपत्रित बैंक स्थापित किया और उत्पादन करो की प्रणाली स्थापित की। जैफर्सन का कहना था कि वित्तमन्त्री के इन कार्यो से राज्यो की सरकारे कमजोर होती है और सघीय सरकार के हाथ मे बहुत अधिक अधिकार आ जाते है। उनका यह भी खयाल था कि ये कार्य ग्रामीण क्षेत्रो के विपक्ष मे और शहरो के पक्ष मे जाते है और उनसे जन-साधारण के हितो को नुकसान पहुँचाकर व्यापारियो और साहूकारो के हाथो मे बहुत अधिक ताकत दे दी गई है।

यद्यपि अमेरिका के लोग अक्सर हैमिल्टन की इस बात के लिए आलोचना करते रहे है कि उसने प्रारम्भिक अमेरिकन समाज के अभिजात वर्ग के हितो को समुन्नत किया, किन्तु वास्तव मे उसकी वित्तीय नीतियो का उद्देश्य एक सुव्यवस्थित और समृद्ध राष्ट्रीय अर्थतन्त्र के सिद्धान्तो को प्रस्थापित करना था। उसका यह विश्वास था कि देश की समृद्धि इस बात पर निर्भर है कि "सरकार और व्यक्तियो के हितो के बीच अधिकाधिक स्नायु-सम्पर्क स्थापित किये जाएँ।" खास तौर से वह सरकार की पक्की साख कायम करने के लिए कृतसकल्प था, क्योकि उसका विश्वास था कि देश की आन्तरिक व्यवस्था कायम रखने और अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे सरकार की प्रतिष्ठा स्थापित करने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है।

सरकार की साख जमाने की समस्या के साथ-साथ एक समस्या और भी थी और वह यह कि क्रान्ति के दिनो मे और उसके बाद सरकारो ने

देश और विदेश, दोनो से जो ऋण लिये थे, उनकी अदायगी कैसे की जाय। ये सारी देनदारियाँ (जिनमे विभिन्न राज्यो के युद्धकालीन ऋण भी शामिल थे, जिनकी जिम्मेदारी सघीय सरकार ने अपने ऊपर ले ली थी) 7 करोड 70 लाख डालर से अधिक की थी। अठारहवी सदी मे यह राशि नि सन्देह बहुत बडी थी।

अलग-अलग राज्यो के युद्धकालीन ऋणो की जिम्मेदारी सघीय सरकार ने हैमिल्टन के आग्रह से ही ली थी, हालाँकि जैफर्सन और अन्य लोगो ने उसका बहुत कडा विरोध किया था। उनका खयाल था—और ठीक खयाल था—कि इससे उन लोगो को लाभ नही होगा, जिन्होने वास्तव मे राज्य सरकारो को ऋण दिया था, बल्कि लाभ सटोरियो को होगा। लेकिन हैमिल्टन का आग्रह था कि अगर नये राष्ट्रो को सरकार की साख कायम करनी है तो ऋणो का पूरा भुगतान करना अनिवार्य है।

हैमिल्टन का कहना था कि राष्ट्रीय सरकार की साख तब तक कायम नही की जा सकती, जब तक कि उसके ऋण-पत्रो पर हस्तान्तरण की गारटी न हो। उसकी राय मे यह प्रश्न अप्रासगिक था कि इस ऋण की अदायगी से अन्तत लाभ किसे पहुँचता है।

हैमिल्टन और उसके अनुयायियो को काग्रेस (ससद्) मे यह कानून पास कराने के लिए दक्षिणी राज्यो के प्रतिनिधियो के काफी वोट मिल गए, लेकिन इसके लिए उन्हे भी जैफर्सन की यह इच्छा पूरी करनी पडी कि नई राष्ट्रीय राजधानी (वाशिगटन, डी० सी०) दक्षिण मे स्थापित की जाय।

इसमे सन्देह नही कि वित्तमन्त्री के रूप मे हैमिल्टन की सबसे बडी सफलता यही थी कि उसने सरकार की साख कायम की। राष्ट्र का भावी आर्थिक विकास इसी पर निर्भर था। लोगो ने जो धन छिपाकर रखा हुआ था, वह बाहर निकल आया और लोगो का विश्वास नये गणराज्य पर जम गया।

लेकिन जिस प्रश्न ने अन्त मे सयुक्त राज्य को स्पष्टत राजनीतिक दलो मे विभाजित किया और पहले से ही उग्र राजनीतिक विवाद को चरम सीमा पर पहुँचा दिया, वह था सयुक्त राज्य के एक राजकीय शासपत्रित बैंक की स्थापना का हैमिल्टन का प्रस्ताव।

हैमिल्टन की योजना के अनुसार इस शासपत्रित (चार्टर्ड) वैंक को ये कार्य करने थे—(1) नोट जारी करना, जो कागजी मुद्रा के रूप मे प्रचलन मे रहे और इस प्रकार मुद्रा की पर्याप्त और स्थिर उपलब्धि मे सहायता दे, (2) सरकारी बॉडो की विक्री आदि मे सघीय सरकार के वित्तीय एजेट का काम करना, (3) सरकारी निधि के एक सुरक्षित कोष के रूप मे काम करना और अवसर पडने पर सरकार को ऋण देना, और व्यापारियो को ऋण देकर आर्थिक विस्तार को समुन्नत करना और व्यावसायिक लेन-देन के लिए वैकिंग की सुविधाएँ प्रदान करना।

इसके जवाब मे जैफर्सन का कहना था कि इस तरह का वैक एकाधिकारी वैक होगा और राज्यो के वैको के साथ अनुचित प्रतिस्पर्धा करेगा। उसने इस प्रस्ताव को 'असविधानिक' बताया क्योकि सविधान मे ऐसे वैक की स्थापना की कोई व्यवस्था नही थी। जैफर्सन के इस कथन से पहली

सभी समाज दो वर्गो मे बँट जाते है—एक अल्पसख्यक और दूसरा बहुसख्यक। पहला वर्ग धनियो और कुलीनो का होता है और दूसरा आम जनता का जनता मे हमेशा उफान और परिवर्तन आते रहते है; वह शायद ही कभी सही निर्णय करती है। इसलिए पहले वर्ग को शासन मे एक सुनिश्चित और स्थायी हिस्सा दिया जाना चाहिए।

—अलेग्जैडर हैमिल्टन

सभी लोगो की ऑखे मनुष्य के अधिकारो के प्रति खुल गई है या खुलती जा रही है। विज्ञान के आलोक के प्रसार ने हर आदमी के सामने इस स्पष्ट सत्य को उद्घाटित कर दिया है कि आम जनता अपनी पीठ पर सवारी की जीन कसकर पैदा नही हुई और न ही कुछ धनी और सौभाग्यशाली लोग भगवान् की कृपा से उस पर घुडसवारी करने के अधिकार के साथ बूट और एड से लैस होकर पैदा हुए है।

—टॉमस जैफर्सन

वार यह प्रश्न सामने आया कि सविधान की व्याख्या कठोर होनी चाहिए

या उदार। साथ ही इसने 'विपक्षित शक्तियो' (इम्प्लाइड पावर्स) के सिद्धान्त को भी पहली वार प्रकट रूप मे उपस्थित किया।

हैमिल्टन के अनुयायियो का कहना था कि सविधान की व्याख्या लचकीली होनी चाहिए, क्योकि सविधान के निर्माताओ की विवक्षा (कहने का अन्तर्निहित आशय) यह थी कि सयुक्त राज्य की सघीय सरकार के अधिकार केवल उतने ही नही होने चाहिएँ जितने कि स्पष्ट रूप मे सविधान मे विहित है। हैमिल्टन के अनुसार सविधान के 'अनुच्छेद 1' मे स्पष्ट रूप मे न कहे जाने पर भी अप्रत्यक्ष रूप मे इस प्रकार के राजकीय शासपत्रित वैक की स्थापना का अधिकार प्रदान किया गया है। इस अनुच्छेद मे कहा गया है, "काग्रेस को वे सब कानून बनाने का अधिकार होगा जो सविधान द्वारा सयुक्त राज्य की सरकार मे निहित अधिकारो को क्रियान्वित करने के लिए आवश्यक होगे।" हैमिल्टन का तर्क था कि यहाँ 'आवश्यक' का अर्थ 'उपयुक्त' है। एक राष्ट्रीय वैक मुद्रा जारी करने और सरकार की साख कायम करने के मामले मे सघीय सरकार की जिम्मेदारियो को पूरा करने के लिए उपयुक्त होगा।

किन्तु जैफर्सन इस बात पर अडा रहा कि सविधान की व्याख्या शाब्दिक ही होनी चाहिए, उसका अभिधेय अर्थ ही लिया जाना चाहिए विवक्षित नही। उसका कहना था कि कानूनी तौर पर सरकार सिर्फ वही अधिकार अपने हाथ मे ले सकती है जो सविधान मे स्पष्टत और प्रत्यक्षत विहित है।

परन्तु अन्त मे हैमिल्टन की सिफारिशे ही स्वीकार की गई। प्रबल विरोध के बावजूद पहला सयुक्त राज्य वैक (वैक ऑफ दि युनाइटेड स्टेट्स) 1791 मे स्थापित हो गया और काग्रेस ने उसे 21 वर्ष के लिए शासपत्र (चार्टर) दिया। इसकी एक करोड डालर की पूँजी का पाँचवाँ हिस्सा सघीय सरकार को देना था और शेष प्राइवेट निवेशको से सग्रह किया जाना था। कानून मे यह व्यवस्था कर दी गई थी कि ये प्राइवेट निवेशक (इन्वेस्टर) ही वैक को सरकार की कठोर देख-रेख मे चलाएँगे और वित्तमन्त्री को उसके निरीक्षण का अधिकार होगा।

नई सघीय सरकार की जिम्मेदारियाँ बढ जाने से उसके लिए और अधिक राजस्व प्राप्त करना जरूरी हो गया। इसलिए 1791 मे काग्रेस ने

घरो मे बनाई जाने वाली शराब पर भारी टैक्स लगा दिया। इस टैक्स ने सीमावर्ती इलाको मे रहने वाले लोगो मे भारी असन्तोष पैदा कर दिया, जो अक्सर अपने लिए घर पर ही शराब तैयार करते थे। इस असन्तोष ने ही 1794 मे पश्चिमी पेनसिलवेनिया मे 'व्हिस्की विद्रोह' भडकाया। हैमिल्टन की सलाह पर सघीय सरकार ने मिलीशिया को यह विद्रोह दबाने के लिए बुला लिया और उसने फिर से व्यवस्था स्थापित कर दी। इस घटना का सबसे महत्त्वपूर्ण परिणाम यह नही था कि सघीय सरकार का राजस्व बढ गया, बल्कि यह था कि इसने नई सरकार को अपने कानूनो को लागू करने के लिए कृतसकल्प और साथ ही सक्षम सिद्ध कर दिया।

नए गणराज्य की शक्ति की परीक्षा अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय दोनो मोर्चो पर हो रही थी। सयुक्त राज्य का व्यापार अब भी मुख्यत यूरोप पर ही निर्भर था। किन्तु इग्लेंड ने पेरिस की सधि की शर्तो के बावजूद नियमित व्यापार समझौते की बातचीत करने से इन्कार कर दिया। यही नही, उसने उत्तर-पश्चिमी प्रदेश मे अपने किले खाली करने से इन्कार करके भी सन्धि की अवहेलना की।

नए राष्ट्र को मिसिसिपी नदी मे नौकानयन, सयुक्त राज्य और स्पेनिश फ्लोरिडा के बीच की सीमा, और स्पेनिश प्रदेश से इडियन लोगो के हमलो के प्रश्नो पर स्पेन से भी उलझना पडा। इसके अलावा उत्तरी अमेरिका मे स्पेन, ब्रिटेन और फ्रास की प्रादेशिक महत्त्वाकाक्षाओ के कारण भी सयुक्त राज्य को निरन्तर परेशानी रही।

वाशिगटन प्रशासन के सामने सबसे अधिक गभीर अन्तर्राष्ट्रीय समस्या यह निश्चय करने की थी कि फ्रेंच-क्रान्ति के सम्बन्ध मे सयुक्त राज्य की सरकार का रुख क्या होना चाहिए। सन् 1789 मे वाशिगटन के पहली बार पदारूढ होने के कुछ ही दिन बाद बैस्टील पर फ्रेंच क्रान्तिकारियो का अधिकार हो गया। शुरू मे फ्रास के बूर्बो राजवश के विरुद्ध क्रान्ति के प्रति सयुक्त राज्य मे सहानुभूति का रुख था। अमेरिकनो को इस बात पर गर्व था कि स्वय उन्ही के कारनामो ने फ्रेंच लोगो मे क्रान्ति की भावना पैदा की है।

लेकिन जब फ्रेंच-क्रान्ति ने आतंक के राज्य का रूप धारण कर लिया और अनेक यूरोपियन देशो के राजतन्त्र इस क्रान्ति को कुचलने के लिए आगे आए तो सयुक्त राज्य के लिए फ्रास का पक्ष लेना कठिन हो गया। जब इग्लैंड 179३ मे लडाई मे उतर आया तो सयुक्त राज्य के सामने एक दुविधा पैदा हो गई। उस पर फ्रास का बडा अहसान था, क्योकि फ्रेंच लोगो ने अमेरिकन क्रान्ति मे सहायता दी थी। लेकिन अमेरिका खुले तौर पर फ्रेंच लोगो की सहायता करता तो इग्लैंड की ओर से प्रतिशोधात्मक कार्रवाई होना अनिवार्य था।

इस दुविधा और गतिरोध ने अमेरिका मे एक राजनीतिक तूफान खडा कर दिया। जैफर्सन के अनुयायियो की क्रान्तिकारियो से गहरी सहानुभूति थी, किन्तु हेमिल्टन के अनुयायी अग्रेजो के समर्थक थे।

किन्तु राष्ट्र की सहानुभूति फ्रेंच लोगो के प्रति होने और परराष्ट्र-मन्त्री जैफर्सन के विरोध के बावजूद वाशिंगटन ने 1793 की तटस्थता की घोषणा जारी कर दी, जिसे लेकर खूब वाद-विवाद खडा हो गया। सब मिलाकर इस घोषणा मे फ्रास के साथ हुई मैत्री और गठबन्धन की सन्धि की अवज्ञा कर दी गई थी। यह सधि 1778 मे उस समय हुई थी, जब अमेरिकन क्रान्ति के प्रारम्भ मे फ्रास ने अमेरिका को सहायता देनी शुरू की थी।

तटस्थता की घोषणा होते ही फ्रास और ब्रिटेन, दोनो ने अमेरिका के खिलाफ प्रतिशोधात्मक कार्रवाइयाँ शुरू कर दी जिससे इस तटस्थता की रक्षा करना कठिन हो गया। ब्रिटेन ने अमेरिकन जहाजो के खिलाफ डिग्रियाँ जारी कर दी और सयुक्त राज्य के जहाज़ पकड लिये और अमेरिकन जहाज़ियो को जबर्दस्ती ब्रिटिश नौसेना मे भरती कर लिया। इससे स्वभावत अमेरिका के राष्ट्रीय अभियान को चोट लगी और राष्ट्र के व्यापार-वाणिज्य को भी धक्का पहुँचा।

सयुक्त राज्य मे ब्रिटिश-विरोधी भावना बहुत उग्र हो गई। इग्लैण्ड के साथ सचमुच नये युद्ध का ख़तरा पैदा हो गया, खासतौर से तब, जबकि नई व्यापार सन्धि की वार्ता के लिए वाशिंगटन द्वारा भेजे गए प्रतिनिधि जॉन जे पर ब्रिटेन ने अपनी मनमानी शर्तें थोप दी और वह उन्हे स्वीकार करके

चला आया। लेकिन वाशिंगटन ब्रिटेन की इन कडी शर्तो का कडवा घूँट चुपचाप पी गया, क्योंकि वह जानता था कि उस समय एक और लडाई लडना नि सदेह उसके देश के लिए घातक होगा। उसके प्रभाव और प्रतिष्ठा के फलस्वरूप काग्रेस मे वह सधि स्वीकार हो गई और खतरा टल गया।

सन् 1800 मे सयुक्त राज्य की स्थिति

राज्य	सघ मे प्रवेश की तिथि	जन-सख्या	क्षेत्रफल (वर्गमील)
डेलेवारा	7 दिसम्बर, 1787	64,273	2,057
पेनसिल वेनिया	12 दिसम्बर, 1787	6,02,365	45,333
न्यू जर्सी	18 दिसम्बर, 1787	2,11,149	7,836
जार्जिया	2 जनवरी, 1788	1,62,686	58,876
कनैक्टिकट	9 जनवरी, 1788	2,51,002	5,009
मैसाचुसेट्स	6 फरवरी, 1788	5,74,564	41,472
मेरीलैंड	28 अप्रैल, 1788	3,41,548	10,577
दक्षिणी कैरोलाइना	23 मई, 1788	3,45,591	31,055
न्यू हैम्पशायर	21 जून, 1788	1,83,858	9,304
वर्जीनिया	26 जून, 1788	8,80,200	64,996
न्यूयार्क	26 जुलाई, 1788	5,89,051	49,576
उत्तरी कैरोलाइना	21 नवम्बर, 1789	4,78,103	52,712
रोड आइलैंड	29 मई, 1790	69,122	1,214
वरमौंट	4 मार्च, 1791	1,54,465	9,609
कैंटकी	1 जून, 1792	2,20,955	40,395
टैनेसी	1 जून, 1796	1,05,602	42,244

वाशिगटन की अन्य राष्ट्रो के साथ 'उलझाने वाले गठवन्धन' न करने की नीति ने, जिसे उसने 1796 मे अपने प्रसिद्ध विदाई भाषण मे फिर दोहराया, उन्नीसवी शताव्दी मे वरती गई राष्ट्र की विदेश नीति की नीव रख दी। इस नीति का प्रतिपादन करने के कारण उसे और उसकी फेडरलिस्ट पार्टी को अक्सर अपने प्रतिस्पर्धी रिपव्लिकनो की कठोर आलोचनाओ का शिकार होना पडा। फिर भी फेडरलिस्ट पार्टी 1796 का चुनाव जीत गई और जॉन ऐडम्स राष्ट्रपति वन गया।

ऐडम्स की सवसे वडी सफलता यह थी कि उसने देश को फ्रास के साथ, जो 'जे सन्धि' के कारण अमेरिका का अधिकाधिक दुश्मन वनता जा रहा था, लडाई मे पडने से वचा लिया। किन्तु ऐडम्स के शासन मे काग्रेस ने, जिसमे फेडरलिस्टो का वहुमत था, रिपव्लिकनो के विरोध को कुचलने के लिए वहुत-से कानून पास किये, लेकिन उनका वास्तविक नतीजा यह हुआ कि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर ही प्रतिवन्ध लग गए। इससे अनेक नागरिक भडक उठे। फेडरलिस्ट पार्टी को वे 'सम्पत्तिशाली वर्गो की पार्टी' कहने लगे और उसके वारह वर्ष के शासन के वाद ही उनका उस पर से विश्वास उठ गया। सन् 1800 के चुनाव मे उन्होने टॉमस जैफर्सन को राष्ट्रपति चुन दिया और इस प्रकार रिपव्लिकन पार्टी के हाथ मे शासन की वागडोर आ गई। (इस जमाने की रिपव्लिकन पार्टी ही वाद मे आज की डेमोक्रेटिक पार्टी वन गई। आज की रिपव्लिकन पार्टी के साथ उसका कोई सम्वन्ध नही है)।

फेडरलिस्ट पार्टी ने नये राष्ट्र के निर्माण मे भारी योग दिया था। शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार की नीव डालने और सुदृढ राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था स्थापित करने का अधिकतर श्रेय उसी को है। यद्यपि जैफर्सन के चुनाव के वाद फेडरलिस्ट पार्टी क्षीण हो गई और अन्त मे उसका अस्तित्व भी लुप्त हो गया, तो भी उसका प्रभाव तत्काल समाप्त नही हुआ। जैसा कि हम आगे देखेगे, नई रिपव्लिकन सरकार उसी आर्थिक ढाँचे के भीतर काम करती रही, जो वाशिगटन और ऐडम्स के फेडरलिस्ट प्रशासनो ने स्थापित किया था।

किसी भी सच्चे अमेरिकन के मन मे इस बारे मे सन्देह नही पैदा हो सकता कि क्या हमे अपने नागरिको और सम्पत्ति पर किसी तरह का प्रतिबन्ध लगाना चाहिए या उन्हे स्वतन्त्र रहने देना चाहिए, और सचमुच गम्भीरता से एक ऐसी नीति अपनानी चाहिए जो निर्माता और किसान दोनो को एक-दूसरे के निकट ला सके और हर व्यक्ति के लिए पारस्परिक श्रम और सुख-सुविधाओ के विनिमय का अवसर उपस्थित कर सके, जिसकी अब तक हम दूर के प्रदेशो मे जाकर खोज करते रहे है और जिसके लिए हमने हमेशा लडाई तक का खतरा मोल लिया है।...

—(1808 के प्रतिबन्ध कानून पर जैफर्सन के भाषण का एक अश)

जैफर्सन काल

जिस चुनाव ने 1800 मे जैफर्सन की रिपब्लिकन पार्टी को सत्तारूढ किया, उसे एक राष्ट्र के रूप मे अमेरिका के उस समय के स्वल्पकालीन इतिहास मे 'पहली राजनीतिक क्रान्ति' कहा जाता था। इसका अर्थ यह था कि राजनीतिक सत्ता मे एक बडा परिवर्तन आया था। वह उत्तर-पूर्व के हाथ से निकलकर दक्षिण के हाथ मे अथवा पूँजीपति व्यापारी वर्ग के हाथ से निकलकर कृषि-जीवी पूंजीपतियो के हाथ मे चली गई थी। जैफर्सन और उसकी पार्टी छोटे स्वतन्त्र किसानो, छोटे व्यापारियो और आमूल परिवर्तन-वादी (रेडिकल) बुद्धिजीवियो का प्रतिनिधित्व करते थे। उन्होने फेडरलिस्ट पार्टी के हाथो से शासन-सत्ता छीनी थी, जिसके बारे मे कहा जाता था कि 'वह ऐसे दौलतमन्दो और बुद्धिजीवियो का अल्पतन्त्र (ओलिगार्की)है, जिनमे स्थायी राज्य तन्त्र के लिए आवश्यक मात्रा मे व्यापकता और गहराई

नही है।"

न केवल अमेरिका के, वल्कि यूरोप के भी, धनी और सम्पत्तिशाली व्यक्ति जैफर्सन की विजय को इस नए राष्ट्र के आसन्न पतन का लक्षण समझने लगे थे। दूसरी ओर नई सरकार के मित्र और हितैषी यह कहते थे कि अब जल्दी ही 'अत्याचारी' प्रशासन का और अलेग्जैंडर हैमिल्टन द्वारा अपनाई गई अनुदार वित्तीय नीतियो का अन्त हो जाएगा। लेकिन वाद की घटनाओ ने यह सावित कर दिया कि जैफर्सन की सरकार के समर्थक और विरोधी, दोनो के ही विचार गलत थे।

यह मानने का पर्याप्त कारण है कि जैफर्सन की रिपब्लिकन पार्टी के सत्तारूढ हो जाने से अमेरिका राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय, दोनो क्षेत्रो मे गम्भीर अशान्ति और सकट से वच गया। हैमिल्टन और न्यू इग्लैंड के फेडरलिस्टो ने फ्रास के खिलाफ युद्ध भडकाने के लिए काफी प्रयत्न किया था। इसका उद्देश्य कुछ तो फ्रास द्वारा अमेरिकन वाणिज्य-व्यवसाय की लूट का वदला लेना था और कुछ फ्रास-समर्थक रिपब्लिकन पार्टी को वदनाम करना था। यद्यपि राष्ट्रपति ऐडम्स युद्ध को टालने मे सफल हो गए थे, तो भी उनके प्रशासन काल मे फ्रास के साथ हमारे सम्वन्ध इतनी नाजुक स्थिति मे पहुँच गए थे कि काफी व्यापक पैमाने पर और काफी महँगी युद्ध की तैयारियाँ आवश्यक समझी जाती थी। और इन तैयारियो के लिए पैसा इकट्ठा करने के जो उपाय वरते गए, वे किसी भी कदर लोकप्रिय नही थे। गुलामो और स्थावर सम्पत्ति पर लगाये गए टैक्स ने दक्षिणी राज्यो मे, जहाँ रिपब्लिकनो का प्रभाव था, इतना उग्र विरोध का भाव पैदा किया कि फेडरलिस्ट शासन मे वहाँ विद्रोह को दवाने के लिए एक वार फिर मिलीशिया (militia) का इस्तेमाल करना पडा।

देश मे वढते हुए विरोध को दवाने के लिए फेडरलिस्ट शासन के अन्तर्गत काग्रेस ने प्रसिद्ध विदेशी और राजद्रोह कानून (1798) पास किए जिनमे राष्ट्रपति को विदेशी लोगो को निर्वासित करने और सरकार के कानूनो की आलोचना करने वाले देशवासियो को कैद और जुर्माने की सजा देने का अधिकार प्रदान किया गया था। दक्षिण मे इन कानूनो की जो प्रतिक्रिया हुई उसके फलस्वरूप अनेक दक्षिणी राज्य विद्रोह पर आमादा

हो गए। सन् 1799 मे वर्जीनिया और कैटकी राज्यो ने प्रस्ताव किये, जिनमे कानूनो के अकृतीकरण (नलिफिकेशन) के सुप्रसिद्ध सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था—इस सिद्धान्त का अभिप्राय यह था कि कोई भी राज्य किसी भी सघीय कानून को अकृत और शून्य (नल ऐंड वॉयड) घोषित कर सकता है।

एक तरह से जैफर्सन अपने इस विचार के प्रति वफादार रहा कि 'जो कम-से-कम शासन करता है उसी का शासन सर्वोत्तम होता है।' फेडरलिस्टो द्वारा पास किये गए घृणित विदेशी और राजद्रोह कानून की अवधि मे वृद्धि नही की गई और तमाम मौजूदा आन्तरिक राजस्व-कर रद्द कर दिये गए। (किन्तु अधिकतर सरक्षात्मक तट-कर कायम रखे गए, वल्कि उनकी अवधि वढा दी गई)। सैनिक बजट कम कर दिया गया। पहले जहाँ वह औसतन प्रतिवर्ष 60 लाख डालर का रहता था, वहाँ वह घटाकर 10 लाख डालर कर दिया गया।

जैफर्सन ने अपने आठ वर्ष के शासनकाल मे राष्ट्रीय ऋण को एक-तिहाई कम करके एक तरह का वित्तीय चमत्कार ही किया था। हालाँकि लुइसियाना प्रदेश को खरीदने से ऋण की रकम मे उसकी कीमत की डेढ करोड डालर की राशि वढ गई थी, तो भी कुल ऋण मे एक तिहाई की कमी हो गई। राष्ट्र की औसत वार्षिक राजस्व आय एक करोड डालर थी, जिसका आधे के लगभग हिस्सा ऋण चुकाने मे खर्च कर दिया जाता था। उस जमाने मे सयुक्त राज्य का शासन चलाने के लिए करीव 60 लाख डालर की राशि ही पर्याप्त होती थी। आज सयुक्त राज्य के सघीय शासन को चलाने के लिए 80 अरव डालर से अधिक खर्च आता है।

किन्तु वजट के आँकडे भ्रामक भी हो सकते है। यद्यपि जैफर्सन ने राष्ट्रीय ऋण और सरकार के व्यय को घटा दिया, तो भी राष्ट्र के आर्थिक जीवन मे फेडरलिस्ट पार्टी जो भूमिका अदा करती थी, वह कम होने के वजाय और भी वढ गई। रिपब्लिकनो को अपने नेता की इच्छा के विरुद्ध ऐसी नीतियो का समर्थन करना पडा, जिनका अव तक वे कडा विरोध करते रहे थे। वास्तव मे स्थिति यह थी कि जैफर्सन हालाँकि राज्यो के अधिकारो को वढाने और सरकारी हस्तक्षेप और शासन को अधिक-से-

सघीय सरकार की वित्त स्थिति, 1800-1815
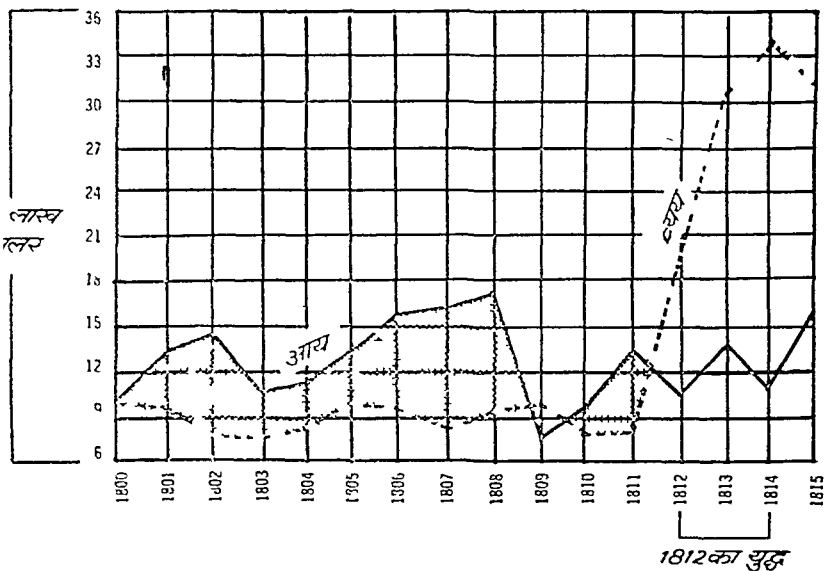
अधिक सीमित करने की नीति का सबसे वडा प्रतिपादनकर्त्ता था, फिर भी उसके शासन मे सघीय सरकार ने कई नए प्रदेश अपने अधिकार मे लिये और केन्द्रीय सरकार के अधिकारो मे भी काफी वृद्धि हुई।

सन् 1803 मे लुइसियाना प्रदेश को फ्रास से खरीद लेने पर सघीय सरकार की शक्ति बहुत अधिक वढ गई। इस विशाल प्रदेश ने राष्ट्र का अधिकार क्षेत्र करीब 40 प्रतिशत वढा दिया। बाद मे तमाम के तमाम तेरहो राज्य या उनके कुछ हिस्से इसी प्रदेश मे से काटकर बाँटे गए। यह प्रदेश सघीय सरकार की सम्पत्ति बन जाने पर, इसकी भावी आर्थिक अभि-वृद्धि और विकास राज्यो की सरकारो के बजाय केन्द्रीय सरकार पर निर्भर हो गया। यह एक विचित्र विडम्बना है कि जिस समय काग्रेस मे लुइसियाना प्रदेश की खरीद की सन्धि पर वहस चल रही थी, उस समय रिपब्लिकनो ने सघीय सरकार के अन्य प्रदेशो को खरीदने के विवक्षित अधिकार का जोरो से समर्थन किया और फेडरलिस्ट पार्टी एकाएक राज्यो के अधिकारो और

संविधान की स्पष्ट और शाब्दिक अभिधेय व्याख्या की समर्थक बन गई। स्वयं रिपब्लिकनों ने, खासकर पार्टी के पश्चिमी राज्यों के सदस्यों ने ही जैफर्सन को उस नये विशाल पश्चिमी सीमावर्ती प्रदेश की आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए नई सरकारी परियोजनाओं को हाथ में लेने के लिए प्रेरित किया।

सयुक्त राज्य का विदेशी व्यापार, 1800-1 15

स लाख डालर

150
1 0
10
90
75
60
45
30
15
0

1800 1801 1802 1803 1804 1805 1806 1807 1808 1809 1810 1811 1812 1813 1814 1815

आयात

निर्यात

निर्यात अधिकत

आयात अधिकत

प्रतिबन्ध कानून

1812 का युद्ध

शान्ति सन्धि
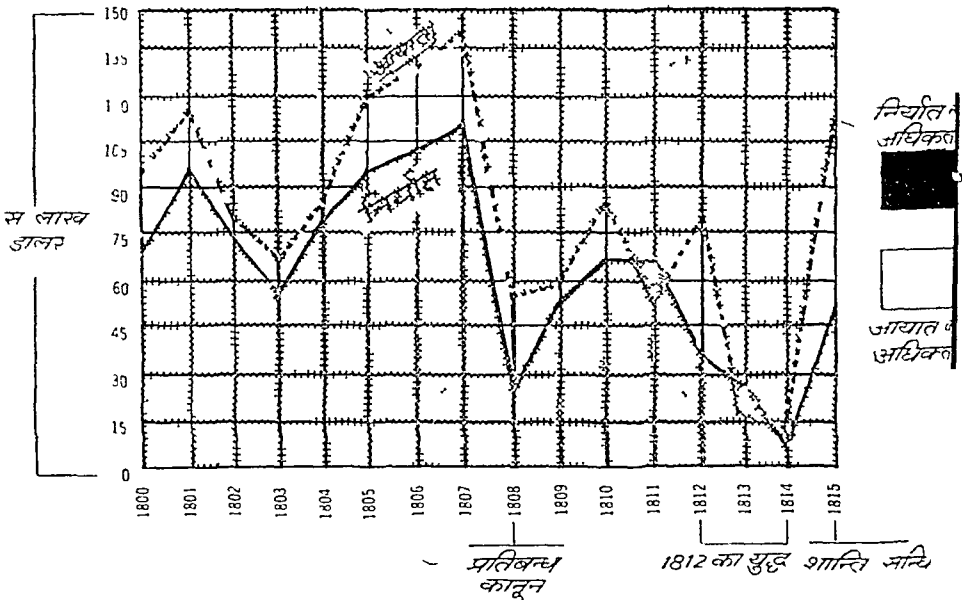
की विस्तृत योजना प्रस्तुत की। यह निर्माण-योजना दस वर्ष मे पूरी की जानी थी और उस पर बीस लाख डालर वार्षिक खर्च का अनुमान था।

इन सब खर्चो को स्वीकार करते हुए जैफर्सन को फिर फेडरलिस्ट पार्टी के **विवक्षित** अधिकारो के सिद्धान्त के आगे झुकना पडा, क्योकि सविधान मे कही भी सघीय सरकार को **स्पष्ट रूप मे** आन्तरिक सुधार करने का अधिकार प्रदान नही किया गया था।

जैफर्सन को लगातार दो बार राष्ट्रपति चुना गया और उसने दोनो बार के अपने शासनकाल मे महत्त्वपूर्ण सफलताएँ प्राप्त की, फिर भी इस अवधि मे उसकी पार्टी मे अन्दर ही-अन्दर फूट बढती गई और साथ ही ब्रिटिश सरकार के साथ भी सयुक्त राज्य सरकार की उलझनो मे वृद्धि हुई। इसका परिणाम यह हुआ कि जैफर्सन के अनेक महत्त्वपूर्ण रचनात्मक कार्यो का प्रभाव नष्ट हो गया। उसके पहले कार्यकाल की समाप्ति पर उसका कोई भी प्रशमक बेखटके यह कह सकता था कि "उस समय तक जैफर्सन के शासन

के समान अच्छा और उज्ज्वल शासन और किसी का नही रहा।" उसकी इस प्रशसोक्ति का बाद के इतिहासकार खडन नही कर सकते थे। किन्तु उसके दूसरे कार्यकाल की समाप्ति पर उसके कट्टर उत्साही समर्थक भी ऐसा दावा करने मे हिचकिचाते।

अपने दूसरे कार्यकाल मे जैफर्सन के लोकप्रियता खो देने का मुख्य कारण उसकी वैदेशिक नीतियाँ थी। यद्यपि सयुक्त राज्य नेपोलियन के यूरोप-विजय के अभियान से बिलकुल अलग था, फिर भी फ्रास और ब्रिटेन दोनों ही समुद्र मे अमेरिका के अधिकारो की उपेक्षा करते थे। ब्रिटिश लोग अमेरिका के व्यापारिक जहाजो को परेशान करते थे, वे उनके आदमियो को जबर्दस्ती पकड लेते, माल पर कब्जा कर लेते और कभी-कभी सारा जहाज ही अपने अधिकार मे ले लेते। ऊपर से वे यह दिखाया करते कि वे नौसेना से भाग जाने वाले भगोडे सैनिको की खोज के लिए ऐसा करते हैं। दूसरी ओर नेपोलियन ने भी यह आदेश जारी कर दिया कि जो अमेरिकन जहाज ब्रिटेन के साथ व्यापार करते है या ब्रिटेन द्वारा ली जाने वाली तलाशियो को बर्दाश्त कर लेते है, उन्हे फ्रेच जहाज पकड सकते है।

जैफर्सन ने इस गतिरोध को तोडने के लिए 'शान्तिपूर्ण दबाव' डालने का प्रयत्न किया। उसके नेतृत्व मे काग्रेस ने 1807 के आखिरी दिनो मे ऐम्बार्गो ऐक्ट (प्रतिबन्ध कानून) पास किया, जिसमे समूचे अमेरिकी व्यापारिक जहाजी बेडे को विदेशो के साथ व्यापार करने मे रोक दिया गया। विश्व के इतिहास मे इससे पूर्व ऐसा कदम कभी नही उठाया गया था। इस कानून का उद्देश्य युद्ध के खर्चीले तरीके के बजाय आर्थिक मजबूरी के द्वारा ब्रिटेन और फ्रास को अमेरिका के साथ समझौते के लिए झुकाना था।

लेकिन जैफर्सन ने यूरोप के राष्ट्रो के साथ अमेरिकन व्यापार को जितना महत्त्व दिया था, वास्तव मे उसका उतना महत्त्व नही था। इस प्रतिबन्ध का फ्रास पर प्राय कोई भी प्रभाव नही था। यद्यपि ब्रिटेन को इससे कुछ कठिनाई हुई, किन्तु ब्रिटिश व्यापारियो ने भी अमेरिका के बजाय स्पेन, दक्षिणी अमेरिका और कनाडा को अपने माल का निर्यात करके इस कठिनाई को काफी हद तक हल कर लिया।

सन् 1808 का 'प्रतिवन्ध वर्ष' जैसे-जैसे गुजरता गया, यह वात अधिकाधिक स्पष्ट होने लगी कि इस प्रतिबन्ध से सबसे ज्यादा नुकसान न्यू इग्लैड के निर्यातको और दक्षिणी राज्यो के किसानो को हो रहा है। सयुक्त राज्य का वार्षिक निर्यात 10 करोड 80 लाख डालर से घटकर 2 करोड 20 लाख डालर रह गया। जहाज वन्दरगाहो मे वेकार खडे रहते थे और माल गोदामो मे पडा सडता था। इसके साथ ही कृषि-जिन्सो की कीमते वेहद गिर गई। आटे का भाव आधा रह गया, दक्षिण के कुछ भागो मे घोडा ढाई डालर तक को विकने लगा और सूअर तो लोग मुफ्त ही देने लग गए। लेकिन अन्तत यह प्रतिवन्ध न्यू इग्लैड के निर्माण-उद्योगो के लिए वरदान भी सिद्ध हुआ क्योकि विदेशी सामान के न आने से इस क्षेत्र मे निर्माण-उद्योगो को खूब वढावा मिला। पर 1808 मे इस प्रतिवन्ध के ये लाभकारी परिणाम लोगो को उतने स्पष्ट नजर नही आते थे जितना कि निर्यातको को होने वाला नुकसान।

इसलिए स्वभावत राजनीतिक असन्तोप ने देश पर जैफर्सन के प्रभाव को कम कर दिया। न्यू इग्लैड मे फेडरलिस्ट पार्टी फिर उभर आई और उसके समर्थको और अनुयायियो ने व्यापारियो को इस प्रतिवन्ध की अवहेलना करने के लिए उकसाया। पश्चिम और दक्षिण मे, रिपब्लिकन लोग, जो पहले पार्टी के प्रति वफादार थे, जैफर्सन की शान्तिवादी नीतियो से असन्तुष्ट हो रहे थे, और वहाँ के फार्मो मे अव लडाईकी बाते होने लगी थी। अन्त मे 1809 के प्रारम्भ मे जैफर्सन ने राजनीतिक दवाव के आगे झुककर घृणित 'प्रतिवन्ध कानून' को रद्द करने वाले विधेयक पर दस्तखत कर दिये। ऐसा करके उन्होने एक तरह से अपनी विदेश नीति की असफलता स्वीकार कर ली और इस निराशापूर्ण स्थिति मे ही उनका दूसरा कार्यकाल समाप्त हुआ।

किन्तु जैफर्सन का प्रभाव उस समय भी इतना तो था ही कि उनकी प्रेरणा से जेम्स मैडिसन को राष्ट्रपति चुन लिया गया। खुद जैफर्सन ने ही मैडिसन को अपने उत्तराधिकारी के रूप मे पसन्द किया था। मैडिसन ने अमेरिका के जहाजरानी सम्वन्धी अधिकारो के लिए ब्रिटेन के साथ समझौते का भरसक प्रयत्न किया। इसी वीच पश्चिमी राज्यो के रिपब्लिकनो ने, जो अव 'वार हॉक' (लडाकू वाज) के नाम से विख्यात है, काग्रेस मे

प्रतिनिधित्व प्राप्त कर लिया था और वे ब्रिटिश-विरोधी भावनाएँ भड़का रहे थे। 'लड़ाकू बाज' ब्रिटेन द्वारा अमेरिकन जहाजो को परेशान किए जाने से उतने चिन्तित और क्रुद्ध नही थे, जितने कि इस बात से थे कि ब्रिटेन अमेरिकनो को पश्चिम की ओर बढने और फैलने से रोकने का प्रयत्न कर रहा है। इन लोगो की लुब्ध दृष्टि कनाडा के ब्रिटिश प्रदेशो पर भी लगी हुई थी। इनके आन्दोलन से काग्रेस ने, जो दो वर्गों मे बँट गई थी, 8 जून, 1812 को ब्रिटेन के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी। मजा यह कि इस घोपणा से दो दिन पूर्व ही मैडिसन के प्रयत्नो के फलस्वरूप ब्रिटेन ने अमेरिकन जहाज़ो को परेशान न करने का वायदा किया था। यदि अटलाटिक महासागर के उस पार से इस पार तक द्रुत गति से सन्देश भेजने के साधन उस समय मौजूद होते और ब्रिटेन का यह वायदा अमेरिका मे यथासमय पहुँच जाता तो यह युद्ध टल जाता।

यद्यपि कनाडा पर आक्रमण के सयुक्त राज्य के प्रयत्न असफल हो गए तो भी समुद्र मे की गई उसकी कार्रवाइयाँ अधिक सफल रही। वास्तव मे 1812 की लडाई मुख्यत अटलाटिक तट और ग्रेट लेक्स के साथ-साथ ब्रिटिश और अमेरिकन जहाजी वेडो की छुट-पुट लडाई ही थी। समुद्री लडाई से कोई फैसला नही हो सकता था, क्योकि उसमे कभी एक पक्ष जीतता और कभी दूसरा। इस तरह की निरर्थक लडाई मे जल्दी ही यह भुला दिया गया कि आखिर लडाई हो किस लिए रही है। इस निरर्थकता की एक झलक इस बात से मिल सकती है कि 1814 के दिसम्बर महीने मे जब इस युद्ध को समाप्त करने के लिए शान्ति सधि हुई तो उसमे समुद्र मे जहाजरानी की स्वतन्त्रता के सवाल की, जिसे लेकर प्रारम्भ मे सयुक्त राज्य ने लडाई छेडी थी, बिलकुल उपेक्षा कर दी गई।

युद्ध की शुरुआत जैसे सचार और सदेश प्रेपण के द्रुत साधनो के अभाव के साथ हुई थी, वैसे ही उसका अन्त भी इस अभाव के साथ ही हुआ। न्यू ओर्लियन्स मे दोनो पक्षो की आखिरी स्थलीय लडाई शान्ति सधि पर हस्ताक्षर होने के बाद हुई, क्योकि दोनो पक्षो की सेनाओ तक यह सन्देश पहुँचा ही नही था कि लडाई का अन्त कर दिया गया है। और यही एकमात्र ऐसी स्थलीय लडाई थी जिसमे अमेरिकनो ने निर्णायक विजय प्राप्त

की थी। इस विजय से अमेरिकन सेना का कमाडर ऐंड्र्यू जेक्सन राष्ट्रीय वीर बन गया। इस लडाई मे प्राप्त विजय से वह इतना लोकप्रिय हो गया कि अन्त मे जनता ने उसे राष्ट्रपति चुन लिया।

सन् 1812 का युद्ध बिलकुल निरर्थक था। उसकी शुरुआत तब हुई जब कि राजनयिक जरियो से पहले ही समझौता हो चुका था। और उसका अन्त भी एक ऐसी भयकर लडाई के साथ हुआ, जो शान्ति सधि पर हस्ताक्षर के बाद हुई और जिसमे काफी प्राण हानि हुई। किन्तु इस लडाई का एक लाभ भी हुआ। इसने अमेरिका के लोगो मे आत्मविश्वास पैदा किया और राष्ट्रीयता की एक नई भावना को जन्म दिया। अनेक अमेरिकनो ने यह अनुभव किया कि राष्ट्र ने दूसरा स्वातन्त्र्य युद्ध जीता है।

अमेरिका की असली स्वतन्त्रता का कारण है उसका विशाल प्रादेशिक विस्तार और कम आबादी। आप जहाँ जाएँ वही आपको निहायत सस्ती, या यो कहिए मिट्टी के मोल, अच्छी जमीन मिल सकती है, इसलिए हर आदमी अपने मन के मुताबिक जगह पा सकता है। यूरोप के सभी देशो के गरीब मजदूर इस सस्ती जमीन के बारे मे सुनते है और उसकी ओर खिचे चले आते है वे यहाँ आकर मेहनत करते है और खूब खुशहाल हो जाते है। यही अमेरिका की असली आजादी है।

——1812 के युद्ध के बाद इलिनॉय मे आबाद अग्रेज जॉर्ज फ्लावर की उक्ति

सद्भावनाओं का युग

उन्नीसवी शताब्दी के पहले चतुर्थांश मे अधिकाधिक अमेरिकनो का यह विश्वास होता जा रहा था कि उनके राष्ट्र का भविष्य बहुत उज्ज्वल है। किन्तु सरकार के कार्य-कलाप, स्थानीय स्वशासन के स्तर को छोडकर और कही भी, उनके दैनिक कामो पर बहुत कम प्रभाव डालते थे। हालाँकि वे समुद्र तट से लेकर पश्चिम तक फैले विस्तृत भूप्रदेश मे रहते थे, तो भी इस जमाने के लोग अधिकतर बाहर नही जाते थे और गए भी तो उनकी दौड अपने जन्मस्थान से एक दिन के सफर की दूरी तक के स्थानो तक ही सीमित होती थी।

सन् 1800 मे सयुक्त राज्य की जनसख्या लगभग 55 लाख थी। इसमे से पाँचवाँ हिस्सा आबादी गुलामो की थी। यह अनुपात 1775 से इसी तरह चला आ रहा था। सन् 1808 मे गुलामो का आयात बन्द हुआ और उसके बाद आजाद अमेरिकनो के साथ उनका अनुपात कम होने लगा। पाँच प्रति-

शत से भी कम बस्तियो की जनसख्या 6 हजार या इससे अधिक थी। लगभग 94 प्रतिशत आबादी 2500 या इससे भी कम आबादी के गाँवो या दूर-दराज के फार्मों मे बने अलग-अलग मकानो मे रहती थी।

उन्नीसवी शताब्दी के अमेरिकन गाँवो मे काम और खेल एक-दूसरे के साथ जुडे हुए थे। आदमी को हर हफ्ते औसतन 72 घण्टे यानी प्रतिदिन 12 से 14 घटे तक काम करना पडता था। लम्बी छुट्टी उन दिनो होती ही नही थी। रविवार को छोडकर साधारण छुट्टियाँ भी बहुत कम थी। यात्रा बहुत धीमी, कठिन और आम तौर पर महँगी होती थी।

आदमी की पोशाक और भोजन उसकी सामाजिक स्थिति के द्योतक समझे जाते थे। किन्तु सूती कपडे के उत्पादन मे वृद्धि होने पर रेशम और लिनन के कपडे का इस्तेमाल जल्दी ही खत्म हो गया और सभी मौसमो मे ऊनी कपडा पहनने के चलन मे भी कमी हो गई। पहरावे का एक सामान्य स्तर स्थापित होता गया, किन्तु अमीर और गरीब के भोजन मे उस समय भी बहुत अधिक अन्तर बना रहा।

सन् 1800 मे उत्पन्न अमेरिकन की जीवन की आशा 35 वर्ष थी। टाइफायड, मलेरिया, गठिया और अजीर्ण उस समय की आम बीमारियाँ थी और एक और बीमारी थी जो प्राय सभी लोगो को पकडती थी। उसका ठीक-ठीक निदान नही किया जा सका, इसलिए उसे सिर्फ 'ज्वर' का नाम दिया जाता था।

उन्नीसवी शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षो मे अमेरिका मे ऐसे लोग बहुत कम थे जिन्हे जीवन की अनिवार्य बुनियादी आवश्यकताएँ उपलब्ध नही थी। लेकिन अमीर लोगो की सख्या भी बहुत कम थी। वाशिगटन, हैमिल्टन और ऐडम्स जैसे लोग एक बहुत छोटे और विशिष्ट धनिक वर्ग के सदस्य थे। इस वर्ग मे कुछ बडे जमीदार, खास पेशा के लोग, राजनीतिज्ञ, आयात-निर्यात व्यापारी और साहूकार शामिल थे।

उन्नीसवी शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षो मे अमेरिका वर्ग-भेद की दीवारो को समाप्त करने मे यूरोप से काफी आगे था। नई दुनिया मे, खासकर सीमावर्ती इलाको मे, मनुष्य के व्यवसाय और धन्धे से ही अधिकतर उसकी सामाजिक स्थिति बनती थी, उसके पूर्वजो की सामाजिक स्थिति से नही।

बाद के समाजशास्त्रियो ने जिसे 'उन्मुक्त समाज' का नाम दिया उसका आरम्भ इन सीमावर्ती क्षेत्रो मे ही हुआ। जैसे-जैसे शिक्षा के अवसर बढते गए और पुरुषो के मताधिकार मे वृद्धि होती गई वैसे-वैसे असमानता कम होती गई और ऊपर की सतह पर नजर आने वाले निरर्थक वर्ग-भेद भी तेजी से अदृश्य होने लगे।

अधिकाश लोग अपनी निज की जमीने जोतते थे या किसी दस्तकारी या व्यापार मे लगे हुए थे। अनुमान है कि 80 प्रतिशत श्रमिक प्राथमिक या द्वितीयक उत्पादन (कृषि, वनसम्पदा का दोहन, मत्स्यपालन, खनन और निर्माण उद्योग) मे लगे हुए थे। शेष 20 प्रतिशत वाणिज्य या चिकित्सा और शिक्षा आदि पेशो मे लगे थे।

पश्चिम मे जनसंख्या की वृद्धि, 1800-1830
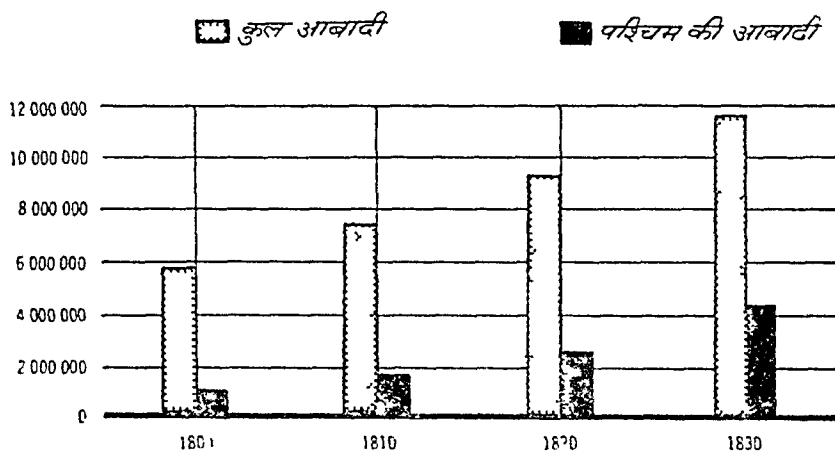
निर्माण उद्योग उस समय अपेक्षाकृत प्रारम्भिक अवस्था मे थे। अधिकतर निर्माण कार्य कुटीर उद्योग के रूप मे ही होता था। किसान लोग अपने घरो पर अपनी आवश्यकता की मोमबत्तियाँ, रस्से, साबुन, मिट्टी के बर्तन आदि वस्तुएँ तैयार करते समय स्थानीय बाजार मे बिक्री के लिए उनका कुछ फालतू उत्पादन कर लेते थे। किन्तु 1815 तक बहुत-से लोगो ने लोहे के ढलाई के छोटे-छोटे कारखाने, चक्कियाँ और कुछ अन्य कारखाने भी

खोल लिये जो विभिन्न परिवारो द्वारा व्यक्तिगत रूप मे ही चलाये जाते थे।

इन प्रारम्भिक उद्योगो मे काम वहुत मन्द गति से होता था। मालिक और मजदूर दोनो मे से कोई भी उत्पादकता वढाने की ओर ध्यान नही देता था। कारखानो का उत्पादन तव तक नही वढा, जव तक कि कुछ ऐसे वुनियादी आविष्कार नही हो गए, जिनसे छोटे पैमाने के उत्पादन की अपेक्षा वडे पैमाने पर उत्पादन सस्ता हो सकता था। फिर भी अमेरिका मे 'कारखाना प्रणाली'—यानी एक ही जगह एकत्र होकर मशीनी ताकत से वहुत-से श्रमिको द्वारा वडे पैमाने पर उत्पादन—की नीव जरूर पड गई थी।

सन् 1820 तक अदक्ष मजदूर की दैनिक आमदनी 75 सेंट से 1 25 डालर तक हो गई थी, जवकि अधिक दक्ष कर्मचारी इससे दुगुनी कमाई कर सकता था। स्त्रियो को पुरुषो से आधी या तीन-चौथाई मजदूरी मिलती थी। यद्यपि उस समय डालर की क्रय-शक्ति आज की तुलना मे वहुत अधिक थी, फिर भी ये मजदूरियाँ वहुत कम थी।

सव मिलाकर, उन्नीसवी शताव्दी के पहले चतुर्थांश मे विदेशी व्यापार का खूव विस्तार हुआ। इस सारी अवधि मे अमेरिका का विदेशी व्यापार इग्लैण्ड के साथ उसके सम्वन्धो और यूरोप की सामान्य राजनीतिक स्थिति पर निर्भर था। जव यूरोप मे लडाइयाँ छिडती तो अमेरिका की तटस्थता की वजह से अमेरिकन व्यापारी खूव लाभ उठाते, किन्तु जव यूरोप मे शान्ति हो जाती तो अमेरिकन निर्यात-व्यापारियो को व्रिटेन से वडी ज़वर्दस्त प्रतिस्पर्धा का सामना करना पडता। सन् 1797 से 1815 तक यूरोप फ्रेंच-क्रान्ति और नेपोलियन के युद्धो मे उलझा रहा, जिससे अमेरिकन व्यापारियो और निर्माताओ को यूरोप के साथ व्यापारिक सम्वन्ध स्थापित करने के लिए एक अपूर्व अवसर हाथ आया। उस समय तक यह व्यापार अधिकतर इग्लैड और फ्रास के जहाजो से होता था।

जैसे-जैसे विदेशी व्यापार और जहाजरानी मे वृद्धि होती गई, अमेरिका के आन्तरिक उद्योगो का भी विस्तार होता गया। न्यू इग्लैड के व्यापारियो और मत्स्यपालको ने व्यापार से जो पूंजी एकत्र की, वह वस्त्र उद्योगो मे लगने लगी। सन् 1808 के प्रतिवन्ध कानून के फलस्वरूप इग्लैड के कपडे

का आयात जब लगभग बन्द हो गया तो अमेरिका की नई कपडा मिलो को अपना कपडा स्थानीय बाजारो मे बेचने का मौका मिल गया। इसी बीच कपास की ओटाई के लिए 'कॉटन जिन' का और पावर से चलने वाली कताई-बुनाई की मशीनो का आविष्कार हो जाने पर दक्षिण की समूची अर्थ-व्यवस्था खूब उन्नत होने लगी और उत्तर मे नव-स्थापित निर्माण-उद्योग भी फलने-फूलने लगे।

राजनीतिक दृष्टि से राष्ट्र जितना सगठित 1812 के युद्ध के बाद हो गया, उतना पहले कभी नही रहा था। वास्तव मे इस युग को 'सद्भावनाओ का युग' कहा जाता है। इस युग मे प्रगाढ राष्ट्रीयता और देशभक्ति की एक नई भावना सर्वत्र दिखाई देने लगी थी। इस युग के अग्रेज यात्री ने लिखा था, "सयुक्त राज्य मे राष्ट्रीय गर्व अन्य सभी देशो से अधिक है। वह सभी जगह और सभी अवसरो पर स्पष्ट दिखाई देता है—अमेरिकन लोगो की बातचीत, उनके अखबार, पैम्पलेट, भाषण और किताबे, सभी मे वह स्पष्ट रूप मे विद्यमान है।" किन्तु स्थानीय और राज्यीय स्तरो की राजनीति मे यह राष्ट्रीय गर्व और सन्तोष की भावना व्याप्त नही हुई। इन स्तरो पर अनेक छोटे-मोटे नजदीक के विषय विवाद खडे करते रहे।

इस युग मे अमेरिकन राष्ट्रवाद की अभिवृद्धि का एक महत्त्वपूर्ण प्रति-बिम्ब मुनरो सिद्धान्त के रूप मे दिखाई देता है, जो अब काफी प्रसिद्ध हो गया है। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन राष्ट्रपति जेम्स मुनरो ने दिसम्बर, 1823 मे काग्रेस को दिये अपने सन्देश मे किया था। यह सिद्धान्त दक्षिणी अमेरिका मे विशाल स्पेनिश साम्राज्य के निरन्तर विखडित होने का परि-णाम था। किसी समय इस साम्राज्य के बारे मे तरह-तरह की आश्चर्यजनक बाते कही जाती थी। सन् 1823 तक कनाडा को छोडकर, पश्चिमी गोलार्द्ध का अत्यन्त स्वल्प भाग ही पुरानी दुनिया की ताकतो के हाथ मे रह गया था। अमेरिकन सरकार ने स्पेन के विरोध के बावजूद अनेक नव-स्वतन्त्र लैटिन अमेरिकन राज्यो के साथ राजनयिक सम्बन्ध स्थापित कर लिये थे।

इस स्थिति पर टिप्पणी करते हुए टॉमस जैफर्सन ने अपने एक मित्र को एक पत्र मे लिखा था " अमेरिका अपने-आपमे एक पूरा गोलार्द्ध है। उसके अपने अलग हित होने चाहिएँ, जो किसी भी तरह यूरोप के हितो के

अधीन नही होने चाहिएँ।" अधिकतर अमेरिकन इसी विचार के उत्साही समर्थक थे। लेकिन खतरा यह था कि कही फ्रास और स्पेन लैटिन अमेरिका के हितो मे हस्तक्षेप न करे। इसके अलावा सुदूर उत्तर-पश्चिम मे रूसी प्रतिस्पर्धा का भी खतरा था, क्योकि रूसी समूर-व्यापारी धीरे-धीरे अलास्का मे पॉव फैला रहे थे और वहॉ से प्रशान्त महासागरीय तट के साथ-साथ ओरेगन तक पहुँच रहे थे। मुनरो सिद्धान्त ने इस निश्चय को औपचारिक रूप से घोपित कर दिया कि अब वक्त आ गया है जबकि नई दुनिया मे वाहरी हस्तक्षेप को रोका जाना चाहिए।

राष्ट्रपति मुनरो के वक्तव्य ने इस वात पर स्पष्ट रूप मे वल दिया कि "यूरोपियन राष्ट्र भविष्य मे पश्चिमी गोलार्द्ध मे उपनिवेश स्थापित करने का स्वप्न लेना वन्द कर दे।" उसमे यह भी कहा गया था कि "यदि यूरोपियन राष्ट्रो ने इस गोलार्द्ध के किसी भी भाग मे अपनी शासन-प्रणाली का विस्तार करने का प्रयत्न किया तो सयुक्त राज्य उसे अपनी शान्ति और सुरक्षा के लिए खतरा और सयुक्त राज्य के प्रति अमैत्रीपूर्ण कार्य समझेगा।"

पश्चिमी गोलार्द्ध मे अमेरिका की इस बुनियादी वैदेशिक नीति की वाद मे अनेक शाखा-प्रशाखाएँ हो गई और उमके अनेक विचित्र रूपान्तर हुए। किन्तु फिलहाल उसका यह उद्देश्य अवश्य पूरा हो गया कि उससे ससार के मामने अमेरिका के स्वतन्त्र गणराज्यीय सिद्धान्तो की उद्घोषणा हो गई और पश्चिमी गोलार्द्ध मे यूरोप के प्रभुत्व-स्थापना के मनसूवो को धक्का लगा।

सद्भावनाओ के इस युग मे राष्ट्र गौरव और आशावादिता की नई भावनाओ को वढावा देने वाला एक कारण और भी था और वह यह कि साहसी अधिवासियो के लिए पश्चिम की ओर आगे वढने का और ऐपलेचियन पर्वतमाला के उस पार नये अवसरो की खोज का मार्ग फिर से खुल गया था। सन् 1800 के वाद सरकार ने नये अधिवासियो को कम कीमत पर अच्छी जमीने दी। इसका नतीजा यह हुआ कि ऐपलेचियन पर्वतमाला के पश्चिम मे जहॉ 1800 मे पॉच लाख की आवादी थी, वहॉ 1810 मे वह वढकर दस लाख से भी अधिक हो गई। सन् 1820 तक राष्ट्र की 96

लाख की आबादी का एक चौथाई से भी अधिक भाग इस पश्चिमी इलाके मे रह रहा था।

पश्चिम की ओर फैलाव का मार्ग प्रशस्त होने मे राज्यीय बैंको की वित्तीय नीतियो ने बहुत बडा योग दिया। सयुक्त राज्य के पहले शासपत्रित बैंक की, चार्टर की, अवधि 1811 मे समाप्त हो जाने पर राष्ट्र की मुद्रा का काम इन राज्यीय बैंको के हाथ मे आ गया था। राज्यीय बैंको से सस्ती व्याज दर और शर्तोपर ऋण मिलने से लोगो को पश्चिम की ओर आगे बढने और वहाँ आबाद होने के लिए प्रोत्साहन मिला, क्योकि यह सुविधा न मिलती तो अपने ही वित्तीय साधनो से पश्चिम मे जमीन खरीदने का सामर्थ्य बहुत कम किसानो मे था।

विभिन्न राज्यो की मुद्राओ मे लेन-देन की भारी कठिनाई के कारण 1816 मे सयुक्त राज्य सरकार ने फिर से एक सघीय शासपत्रित बैंक स्थापित कर दिया, लेकिन इससे लोगो को सस्ती दरो और सरल शर्तो पर ऋण देने की प्रणाली मे कोई फर्क नही पडा। लेकिन बैंको से बहुत बडी मात्रा मे ऋण मिलने के कारण जमीन के व्यापार मे जो जबर्दस्त तेज़ी आई थी, वह हमेशा जारी नही रह सकती थी। इसलिए नतीजा यह हुआ कि 1818 मे विदेशी ऋणो की मात्रा कम हो गई और ब्रिटिश ऋण दाताओ और खातेदारो ने अपना पैसा वापस माँगना शुरू कर दिया। इससे सोना-चाँदी बडी मात्रा मे देश से बाहर जाने लगा और उसके फलस्वरूप उचित से अधिक फैली हुई बैकिग प्रणाली लडखडाने लगी। कीमतो का स्तर तेजी से गिरने लगा और जल्दी ही सारा राष्ट्र '1819 के आतक' के नाम से प्रसिद्ध सकट मे बुरी तरह ग्रस्त हो गया।

लेकिन पश्चिम की ओर लोगो का बढना उसी तरह जारी रहा, क्योकि सरकार ने लोगो के सकट को कम करने के लिए अपने भूमि-कानूनो को कुछ उदार बना दिया था। पश्चिम की ओर बढने मे ख़तरे और कठिनाइयाँ बहुत होने पर भी, बहुत-से लोगो ने सस्ती जमीन और स्वतन्त्र रूप से आय के साधन प्राप्त करने की आशा मे पूर्वी प्रदेश के अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित जीवन को त्यागने मे कोई हिचकचाहट नही दिखाई।

जो लोग पश्चिम के नए-नए क्षेत्रो मे प्रवेश के कष्टो और कठिनाइयो

को झेलने के लिए तैयार थे, उन्हे पश्चिम ने भी इन कष्टो का पुरस्कार दिया। धीरे-धीरे ये नए अधिकारी इस बात पर गर्व अनुभव करने लगे कि वे पूर्व से बिलकुल अलग और भिन्न है। यह मनोवृत्ति और भावना यूरोप और पुरानी दुनिया की परम्पराओ के बारे मे उनके पृथक्कता के सारे रवैये पर बुरी तरह छा गई। सयुक्त राज्य की जनता के पीछे ऐसी अनेक ठोस सफलताओ का बल था, जिन्होने उनके राष्ट्र को नई दुनिया मे यूरोप की महत्त्वाकाक्षाओ को कुचलने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली और स्वतन्त्र राष्ट्र बना दिया था। और उनके सामने अपरिसीम प्रतीत होने वाला एक विशाल भौगोलिक क्षेत्र पडा हुआ था जो उन्नति के कल्पनातीत अवसरो से भरपूर था। इसलिए यदि अधिकतर अमेरिकन लोगो ने पुरानी दुनिया को बिलकुल विस्मृत कर दिया तो यह कोई आश्चर्य की बात नही है। अब एक नई और उज्ज्वल दुनिया उनके सामने फैली हुई थी।

लोकप्रिय जनतन्त्र का उदय

सन् 1824 से 1836 तक के वर्षो को सयुक्त राज्य मे 'जैक्सन के लोकतन्त्र' का नाम दिया जा सकता है। जैक्सन की लोकतन्त्र की अवधारणा इस अति सरल, किन्तु गम्भीर कल्पना पर आधृत थी कि लोकतन्त्र का अर्थ 'सबके लिए आर्थिक उन्नति के समान अवसर होना' चाहिए। असख्य छोटे-छोटे भू-स्वामी और किसान, शहरी कारीगर और श्रमिक, धीरे-धीरे उभर रहे उद्यमी उद्योग सचालक और साहसी सटोरिये इस कल्पना को साकार करने के लिए व्याकुलता से पुकार कर रहे थे। इनमे से अधिकतर लोगो को प्रतिस्पर्धात्मक लोकतत्रीय पूँजीवाद पर कोई आपत्ति नही थी, किन्तु उस समय के आर्थिक ढाँचे और राजनीतिक और सामाजिक ताने बाने मे जो असमानताएँ दीख पडती थी उन्हे वे सहन करने को तैयार नही थे।

एण्ड्रयू जैक्सन (1767-1845)

उनका आदर्श उदाहरण और नायक था ऐंड्रयू जैक्सन जिसका जीवन इस बात की मिसाल था कि किस प्रकार एक साधारण आदमी भी सफलता और समृद्धि प्राप्त कर सकता है। ऐंड्रयू का जन्म लकडियो की बनी एक दीन-हीन कुटिया मे हुआ था और उत्तरी कैरोलाइना और टैनेसी की

अत्यन्त कष्टपूर्ण, दु सह परिस्थितियो मे वह पला और वडा हुआ था, परतु अपने अध्यवसाय और पुरुषार्थ से वह एक उच्च सम्भ्रान्त और धनी आदमी वन गया। उसका जीवन अनेक चित्र-विचित्रताओ से परिपूर्ण था। किसी समय वह इडियनो से लडने वाला योद्धा था, फिर वह 1812 की लडाई का नायक वना। इसके वाद राज्य के अनेक उच्च पदो पर भी वह रहा। उसने वहुत वडे पैमाने पर जमीनो का व्यवसाय कर धन कमाया। उसके पास गुलाम भी वहुत वडी सख्या मे थे।

यौवन मे वह जैफर्सन की विचारधारा से प्रभावित आदर्शवादी था। किन्तु 1819 के आतक के दिनो मे साहूकारा वर्ग का सदस्य होने के कारण उसने टैनेसी के ऋणग्रस्त किसानो के कर्ज के भार को कम करने के लोकप्रिय प्रयत्नो का जोरो से विरोध किया। और फिर भी दस वर्ष वाद ही वह सव के लिए समान राजनीतिक और आर्थिक अवसरो के सिद्धान्त का एक आदर्श उन्नेता वन गया।

जैक्सन मे जो ये परिवर्तन हुए उनकी व्याख्या जैक्सन के व्यक्तित्व से नही, उस युग की परिस्थितियो से की जा सकती है। जैक्सन के लोक-तन्त्रवाद का आर्थिक महत्त्व भी इन परिस्थितियो के कारण ही है। उस समय आवादी तेजी मे वढ रही थी और लोग धडाधड पश्चिम की ओर जा रहे थे। सन् 1812 के युद्ध के वाद ऐपलेचियन पर्वतमाला के पश्चिम की ओर के निवासी राष्ट्रीय राजनीति मे वहुत हिस्सा लेने लगे थे। सन् 1830 तक इस प्रदेश की जनसख्या राष्ट्र की आवादी की एक तिहाई हो गई थी।

उत्तर-पूर्व मे व्यापार और उद्योग की समृद्धि एक नए समाज को जन्म दे रही थी—वहाँ एक शहरी मध्यवित्त वर्ग और दूसरा कारखानो मे काम करने वाले कर्मचारियो का वर्ग उभर रहा था। किन्तु यह एक महत्त्वपूर्ण वात है कि कारखाना मजदूरो की सख्या 1820 और 1830 के दशको मे राष्ट्र की कुल श्रम-शक्ति का एक वहुत छोटा भाग थी। अमेरिकन समाज का अधिकाश अव भी ग्रामीण भू-स्वामियो का था। दक्षिण को छोडकर शेष सव जगह हर पाँच आदमियो मे से चार अमेरिकन नागरिक स्वतन्त्र भू-स्वामी थे, जिनमे से अधिकतर छोटे किसान थे।

ब्रिटिश लेखक टॉमस हैमिल्टन ने अपनी अमेरिका-यात्रा के वाद इस

स्थिति पर टिप्पणी करते हुए अपनी पुस्तक 'मैन एण्ड मेनर्स इन अमेरिका' (1834) मे बडी चतुराई से यह निष्कर्ष निकाला था कि "इस समय सयुक्त राज्य शायद ससार के किसी भी अन्य देश की अपेक्षा आन्तरिक क्रान्ति से अधिक सुरक्षित है। **यहाँ के अधिकाश लोगो के पास अपनी निज की जमीन-जायदाद** है। और इस जमीन-जायदाद को उन्हे किसी भी कीमत पर बचाना है।"

भौगोलिक और आर्थिक विस्तार के साथ-साथ अमेरिकन लोकतन्त्र का भी असाधारण विकास हुआ। सीमावर्ती इलाको मे सभी को नए क्षेत्रो मे प्रवेश के अवसरो की समानता और अनेक पूर्वी नगरोमे वर्ग-भेद मे निरन्तर हो रही कमी से प्रेरित होकर अनेक राज्यो ने अपने यहाँ चुनावो मे मत देने या किसी पद के लिए खडे होने के वास्ते एक न्यूनतम मात्रा मे सम्पत्ति का स्वामी होने की शर्त हटा दी। ऐड्र्यू जैक्सन जैसे अभिनव सीमा क्षेत्र के प्रतिनिधि के राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार बनने से और भी लोगो को अपने मताधिकार के उपभोग के लिए प्रोत्साहन मिला। सन् 1828 से 1848 तक राष्ट्र की आबादी बढकर केवल दुगुनी हुई, किन्तु इसी अवधि मे मतदाताओ की सख्या बढकर तिगुनी हो गई।

इस प्रकार 1728 मे ऐड्र्यू जैक्सन के राष्ट्रपति बनने से पहले और उसके बाद के वर्षो मे अमेरिका मे 'सामूहिक लोकतन्त्र' का अभ्युदय हुआ। एक बार राजनीतिक समानता प्राप्त हो जाने के बाद लोगो ने कुछ खास वर्गों के विशेषाधिकारो और सभी प्रकार के कृत्रिम भेद-भाव पर आक्रमण करने के लिए उसका उपयोग किया। इसका परिणाम यह हुआ कि राजनीतिक समानता के लिए किया जा रहा आन्दोलन समस्त देशवासियो को शिक्षा देने, राज्य द्वारा शासपत्रित एकाधिकारो को खत्म करने, सब पर समान कर लगाने, अनिवार्य सैनिक शिक्षा प्रणाली पर पुनर्विचार करने, सभी सार्वजनिक पदो के लिए प्रत्यक्ष जन-निर्वाचन कराने और ऋण चुकाने की असमर्थता पर दी जाने वाली कैद की सजा को खत्म करने की माँगो के व्यापक आन्दोलन का अग बन गया। इन आन्दोलनो से उस सामाजिक और आर्थिक कार्यक्रम की एक तसवीर सामने आती है, जिसे 'जैक्सन के लोकतन्त्र' के आदर्शो की तस्वीर कहा जा सकता है।

जैक्सन के अनुयायी जैफर्सन के अनुयायियो की भाँति यह शिकायत नही करते थे कि "शासन ने बहुत कुछ अपने अधिकार मे ले रखा है।" वास्तव मे उन्हे मुख्य चिन्ता इस बात की थी कि राज्यो और सघ की सरकारो के हाथो मे जो अधिकार है उनका 'दुरुपयोग' न हो। एक ऐसे समाज मे, जिसमे छोटी सम्पत्ति वालो का प्राधान्य हो, प्राइवेट कम्पनियो और राज्यीय और सघीय बैंको को दिये गए विशेषाधिकार सचमुच ही भारी चिन्ता का कारण प्रतीत होते थे।

'बैंक विशेषाधिकार' के विरुद्ध तथाकथित 'बैंक युद्ध' भी इसीलिए छिडा और उसका नतीजा यह हुआ कि सयुक्त राज्य के दूसरे सघीय बैंक (सैकड बैंक ऑफ दि युनाइटेड स्टेट्स) के शासपत्र (चार्टर) की अवधि बढाने का विधेयक सामने आने पर जैक्सन ने उसे अपने निषेधाधिकार(वीटो) से अस्वीकृत कर दिया।

इस बैंक को काग्रेस ने 1816 मे बीस वर्ष के लिए शासपत्र दिया था और वह सघीय सरकार का वित्तीय एजेण्ट था। यद्यपि इसकी 350 लाख डालर की पूँजी मे से पाँचवाँ भाग सरकार का था, तो भी उसका सचालन पूर्णत गैरसरकारी लोगो के हाथो मे था। निकोलस बिडल की देख-रेख मे यह बैंक लोगो को खूब समझ-बूझकर कर्ज और उधार देता था, समाशोधन गृह (क्लीयरिंग हाउस) का काम करता था, एक सर्वसामान्य राष्ट्रीय मुद्रा का प्रचलन करता था और राज्यीय और स्थानीय बैंको द्वारा जारी की जाने वाले हुण्डियो और नोटो और उनके द्वारा दिये जाने वाले ऋणो पर कडा नियन्त्रण रखता था।

इन बुद्धिमत्तापूर्ण, किन्तु साथ ही अवस्फीतिकारक, कार्यों से कुछ आर्थिक और विशिष्ट वर्गीय हितो मे असन्तोष और विरोध का भाव पैदा होना स्वाभाविक ही था। सन् 1833 मे राष्ट्र के 502 बैंको मे से कुल 88 बैंको को छोडकर शेष सभी बैंक बाल्टीमोर मेरीलैण्ड के उत्तर मे स्थापित हुए थे, इसलिए पश्चिम और दक्षिण के किसान और बागान मालिको को यह शिकायत थी कि उन्हे इन बैंको के पूर्वी शेयर होल्डरो का घर मुनाफे से भरना पडता है।

पूर्वी राज्यो मे दो वर्ग इस बैंक के विरोधी थे, किन्तु उनके विरोध के

कारण सर्वथा भिन्न थे। एक ओर प्राइवेट बैंको के मालिक थे, जो बिडल पर यह आरोप लगाते थे कि वह अपने अधिकारो का दुरुपयोग कर रहा है। वे द्वितीय सघीय बैंक को अनुचित और अन्यायपूर्ण प्रतिस्पर्धा का दोषी ठहराते थे और कहते थे कि वह आर्थिक गति-विधि पर प्रतिबन्ध लगाने वाली सस्था है। उनका कहना था कि मुद्रा की उपलब्धि और सम्भरण का अधिकार उद्यमी उद्योगपतियो और व्यवसायियो के हाथ मे रहना चाहिए, न कि सघीय सरकार द्वारा समर्थित इस 'वित्तीय अष्टभुज' के हाथो मे।

सयुक्त राज्य के द्वितीय संघीय बैंक का पतन

दूसरी ओर शहरी आमूल परिवर्तनवादी वर्ग, श्रमिक सुधारवादी वर्ग और छोटे व्यापारियो को सभी बैंको पर अविश्वास था। उनका कहना था कि उनकी कठिनाइयो और मुसीबतो का कारण प्रचलन मे विद्यमान नोटो और अन्य वित्तीय हुडियो के भावो मे उतार-चढाव था। इसीलिए जिन लोगो के पास ऐसी वित्तीय हुडियाँ या नोट होते थे जिनका मूल्य गिर गया था, वे यही चाहते थे कि इन कागजी मुद्राओ के बदले फिर से धातु के सिक्को का प्रचलन प्रारम्भ कर दिया जाय।

सघीय वैक के शासपत्र (1832) की अवधि को वढाने के प्रस्ताव पर अपने प्रसिद्ध निपेधाविकार का प्रयोग करते हुए जैक्सन ने जो सन्देश कांग्रेस को दिया था, वह उस आन्दोलन को सार रूप मे प्रस्तुत करता है, जिसका वह (जैक्सन) प्रतीक था। राजनीतिक स्तर पर उसने 'अधिकार के कुछ ही लोगो के हाथो मे, जो जनता के प्रति उत्तरदायी नही है, केन्द्रीकरण' की निन्दा की। दूसरी ओर आर्थिक स्तर पर उसने यह मत व्यक्त किया कि द्वितीय सघीय वैक के शासपत्र की अवधि वढाने का अर्थ यह होगा कि "हम बहुसख्यक लोगो के हितो को नुकसान पहुँचाकर थोडे-से लोगो के हितो को समुन्नत करने के लिए अपने शासन का दुरुपयोग करते हे।"

जैक्सन द्वारा दूसरे सघीय वैक के खातमे से और उसके वाद उसके द्वारा अपनाई गई दूसरी वित्तीय नीतियो से केवल राज्यीय वैको के मालिको को लाभ हुआ, पर उन लोगो को कोई राहत नही मिली, जो कागजी मुद्रा के विरोधी थे। किन्तु वैकिग प्रणाली के वारे मे उसकी धारणाएँ चाहे कितनी ही दुर्वल और सीमित क्यो न हो, यह निश्चित है कि जैक्सन ने अपने इस विश्वास पर पुन बल देकर, कि अमेरिकन समाज मे कुछ लोगो के विशिष्ट अधिकारो और कृत्रिम वर्ग भेद का कोई स्थान नही है, अपने जमाने के सुधार आन्दोलनो को एक राष्ट्रीय रूप प्रदान किया।

उसके आलोचक अत्यन्त निर्ममता से उस पर प्रहार करने लगे। लेकिन उनके इन प्रहारो का कोई खास असर नही हुआ। कारण, एक ऐसे समाज मे, जहाँ छोटे-छोटे सम्पत्ति-मालिको का या अपनी निज की जमीन-जायदाद पाने के इच्छुको का प्राधान्य हो, जनता की नजरो मे जैक्सन ही 'सच्चा' था, उसके आलोचक नही। इस प्रकार 1832 मे एंड्र्यू जैक्सन भारी बहुमत से राष्ट्रपति चुन लिया गया।

द्वितीय सघीय वैक का शासपत्र खत्म होने पर ऐसे सैकडो वैको को, जिनकी वित्तीय स्थिति अच्छी नही थी या जो सट्टे-फाटके का व्यापार करते थे, किन्तु जिन्हे कागजी मुद्रा जारी करने का अधिकार था, शासपत्र दे दिये गए। खास तौर से पश्चिमी राज्यो मे ऐसे अनेक वैक थे। इस मुद्रा नीति ने हजारो नये अधिवासियो को पश्चिम की ओर आकृष्ट किया,

जिनमे से बहुत-से मॉर्टगेज और साधन-सामग्री के लिए लिये हुए ऋणो मे गले तक डूबे हुए थे। सन् 1830 मे बैंको द्वारा लोगो को दिये गए ऋणो की मात्रा 1370 लाख डालर थी, किन्तु सात वर्ष बाद यह मात्रा 5250 लाख डालर हो गई। व्यक्ति ही नही, राज्यो की सरकारो ने भी अन्धाधुन्ध ऋण लिये थे। राज्यो के कर्जे 1820 मे 130 लाख डालर से भी कम थे, किन्तु 1830 मे वे बढकर दुगुने हो गए और 1840 मे उनकी मात्रा 2,000 लाख डालर हो गई। बैंकिग की कोई केन्द्रीय अधिकारी सत्ता न होने के कारण सारी बैंकिंग प्रणाली अनियन्त्रित हो गई।

बैंको द्वारा इस प्रकार अन्धाधुन्ध ऋण दिये जाने से सट्टे-फाटके को भी खूब बढावा मिला। इन दोनो चीजो ने मिलकर मुद्रा स्फीति का एक खतरनाक चक्कर चला दिया। जैक्सन ने जब राज्यो के बैंको मे सरकारी धन जमा कराया और बाद मे सघीय राजस्व की फालतू राशि राज्यो मे बॉटी तो मुद्रा-स्फीति की गति और भी बढ गई। सन् 1836 मे उसने एक आदेश जारी किया, जिसमे कहा गया था कि जमीन की कीमते कागजी मुद्रा के बजाय धातु के सिक्को मे चुकाई जाएँ किन्तु वह सट्टे-फाटके और मुद्रा-स्फीति को रोकने मे सफल नही हुआ। इससे स्वभावत मुद्रा का आतक पैदा हो गया। यह आतक जैक्सन के स्थान पर मार्टिन वान ब्यूरेन के राष्ट्रपति बनने के कुछ समय बाद 1837 मे प्रारम्भ हुआ और उसके बाद एक जबर्दस्त आर्थिक मन्दी आई जो 1843 तक जारी रही।

फिर भी जैक्सन के प्रशासन के बारे मे यह बात निश्चित रूप से कही जा सकती है कि आर्थिक अदूरदर्शिता के बावजूद उसने 'सबके लिए समान आर्थिक अवसर' और 'समान अधिकार' की परिकल्पनाओ को परस्पर मिलाकर सयुक्त राज्य के लोकतन्त्रीय विकास मे भारी योग-दान किया।

जैक्सन के कार्यकाल के आर्थिक परिणामो को सक्षेप मे प्रस्तुत करते हुए ब्रे हैमण्ड ने, गृहयुद्ध से पूर्व की बैंकिग प्रणाली के अपने अध्ययन मे, ठीक ही लिखा है—"जैक्सन के काल के आन्दोलन की इसके सिवाय और कोई विशेषता नही थी कि उसने व्यापार-व्यवसाय का लोकतन्त्रीयकरण कर दिया। इस आन्दोलन के फलस्वरूप व्यापार एक विशिष्ट और उच्च व्यापारी-वर्ग का ही पेशा नही रह गया, जैसा कि हैमिल्टन के ज़माने मे था, बल्कि

जन-साधारण के लिए भी उसके द्वार खुल गए।"

जैक्सन के युग मे एक बात और भी हुई और वह यह कि अब तक जो राजनीति एक विशिष्ट उच्च वर्ग तक ही सीमित थी, वह जन-साधारण की वस्तु बन गई। जैक्सन के जमाने के बाद राजनीतिक नेता को साधारण जनता की आवश्यकताओ को पूरा करना और हर वग की शिकायतो को दूर करना पडता था। अनेक राजनीतिज्ञ तो अपने-आपको 'साधारण जन' तक कहने लग गए थे। सन् 1840 मे व्हिग पार्टी की ओर से, जो सम्पत्ति-शाली और अनुदार वर्ग का प्रतिनिधित्व करती थी, राष्ट्रपति पद की उम्मीद-वारी हासिल करने का प्रयत्न करते हुए डेनियल वैब्सटर को यहाँ तक कहना पडा कि मुझे अफसोस है, मेरा जन्म किसी दूर-दराज के सीमावर्ती इलाके मे किसी लकडी की कुटिया मे नही हुआ। लेकिन, उसने अपनी सफाई मे कहा कि मेरे बडे भाई बहनो का जन्म मेरी अपेक्षा अधिक साधारण परिस्थितियो मे हुआ है और मुझे इसके लिए जरा भी शर्मिंदगी नही है। "अगर मुझे कभी इस पर जरा भी शर्मिंदगी महसूस हो तो मेरा और मेरे वशजो का नाम मानव-जाति की स्मृति से बिलकुल मिटा दिया जाय।"

दूसरा भाग

युवा राष्ट्र का संघर्ष

हम ,ऐसे मानवो की सकीर्ण जन-जाति नही है, जिनका रक्त अपने आपको दूसरों से बिलकुल अलग-अलग रखकर अपनी जाति और वश की शुद्धता की रक्षा के प्रयत्न मे सडकर विकृत हो गया है। नही, हमारा रक्त अमेज़न नदी के प्रवाह के समान है, जिसमे हज़ारो पवित्र और निर्मल धाराएँ मिलकर एक हो जाती है। हम दरअसल एक राष्ट्र नही है, बल्कि एक पूरा संसार है।

—हरमन मैलविल, 1849

पश्चिम की ओर कूच

सन् 1815 से गृह-युद्ध छिडने तक समूचे राष्ट्र का भावी विकास पश्चिम की ओर उसके प्रसार पर अवलम्बित था। नई दुनिया मे जब सबसे पहले यूरोपियन लोगो की बस्तियाँ बसी तभी से उत्तर और दक्षिण की अर्थ-व्यवस्थाओ का विकास बिलकुल परस्पर-विरोधी दिशाओ मे हो रहा था। इसलिए राष्ट्रीय विधान मडल (काग्रेस) मे उनके हितो की आपस मे बहुत टक्कर होती थी। इसलिए अब यह अधिकाधिक स्पष्ट हो रहा था कि काग्रेस मे किसका शक्ति का पलडा भारी हो, इसका निर्णय बहुत कुछ नये पश्चिमी राज्यो पर निर्भर होगा। वे जिसका साथ देगे, उसी की शक्ति अधिक होगी।

राष्ट्रीय मामलो मे पश्चिम को एक प्रभावकारी शक्ति बनने मे पचास वर्ष से भी कम समय लगा। इस अवधि मे सयुक्त राज्य का कुल क्षेत्रफल दुगुने से भी अधिक हो गया। फ्लोरिडा प्रदेश को छोडकर, जो स्पेन ने 1819 मे

सयुक्त राज्य को दिया था, शेष सारी नई वृद्धि पश्चिम मे ही हुई। टेक्सास 1845 मे, ओरेगन 1846 मे और मैक्सिको द्वारा छोडा गया प्रदेश 1848 मे सयुक्त राज्य को मिला।

इस वीच साहसी अधिवासी निरन्तर वढती सख्या मे इन नये विशाल प्रदेशो मे वसने के लिए आगे वढते रहे। इसीलिए यद्यपि 1815 से 1860 तक सारे देश की जनसख्या वढकर केवल चार गुनी हुई थी, तो भी ऐपलेचियन पर्वतमाला के पश्चिम की ओर आवादी दस गुनी वढी थी। सन् 1860 तक राष्ट्र की 3 करोड 14 लाख आवादी का लगभग आधा भाग ऐपलेचियन के पश्चिम मे रहता था।

पश्चिम की ओर लोगो के प्रसार का एक वडा कारण यूरोप से आने वाले अधिवासियो की सख्या मे वृद्धि था। सन् 1844 और 1854 के वीच मे लगभल तीस लाख आवासी सयुक्त राज्य मे आए। इनमे अधिकतर सख्या जर्मन और आयरिश लोगो की थी। ये लोग उत्तर मे और पश्चिमी सीमान्त के साथ लगे प्रदेशो मे खेती, उद्योग और परिवहन के नये अवसरो से आकृष्ट होकर यहाँ आए थे। सन् 1860 मे मिनेसोटा और विस्कौंसिन के तीस प्रतिशत निवासी वाहर से आए आव्रजक थे।

किन्तु दक्षिण मे वाहर से नये आए अधिवासियो का कोई प्रभाव नही था। वहाँ वडे जमीदारो और वागान मालिको के वश ने तमाम अच्छी जमीनो पर अपना एकाधिकार जमा लिया था और छोटे किसानो और कारीगरो को गुलाम मजदूरो के साथ प्रतिस्पर्धा करने के लिए मजवूर कर दिया था। इसलिए जो आवासी वाहर से नये उद्यम और साहसिक कार्यो की स्फूर्ति लेकर आए थे, वे दक्षिण की ओर से विमुख होकर पश्चिम की ओर अग्रसर हो गए।

पश्चिम का आकर्पण लोगो को सिर्फ इसलिए था कि वहाँ उन्हे जमीन मिल सकती थी और साथ ही स्वतन्त्र जीवन-यापन की सभावनाएँ भी विद्यमान थी। पश्चिमी प्रदेशो मे केवल कैलिफोर्निया ही ऐसा भाग था, जहाँ जमीन के अलावा एक और आकर्पण भी था और वह था सोने का आकर्षण। सन् 1849 मे जव वहाँ सोने की खानो का पता चला तो दस वर्प के भीतर

ही वहाँ की आबादी चार गुनी हो गई।

इन वर्षो मे सयुक्त राज्य के पास इस बात के लिए एक अपूर्व अवसर था कि वह पहले से ही स्थापित व्यवस्था को अस्त-व्यस्त किये बिना भूमि-हीनो को भूमि दे सकता था। इसलिए वहाँ उपनिवेश-स्थापना का जो नया और सर्वथा सफल रूप विकसित हुआ, उसका कारण केवल लोगो की स्वतन्त्र वैयक्तिक अभिकसशीलता ही नही था, बल्कि सरकार द्वारा दिया गया प्रश्रय और प्रोत्साहन भी था।

उत्तर-पश्चिमी प्रदेश पहला ऐसा 'सार्वजनिक प्रदेश' था जो नागरिको को व्यक्तिगत रूप से नीलाम किया गया। यह विशाल क्षेत्र—जो अन्तत ओहायो, मिशिगन, इडियाना, इलिनॉय और विस्कौसिन, इन पॉच राज्यो मे विभक्त कर दिया गया—1784 से 1787 तक अनेक भूमि अध्यादेश जारी कर वेचा गया। इन अध्यादेशो मे घोषित भूमि-नीति की मुख्य बाते ये थी—(1) जैसे ही नये प्रदेशो की आबादी 60 हजार हो जाएगी, वैसे ही उन्हे पुराने राज्यो के समान दर्जे पर सयुक्त राज्य मे शामिल कर लिया जाएगा, (2) जो व्यक्ति जो नई जमीन खरीदेगा उस पर उसका स्वामित्व होगा, (3) सार्वजनिक ज़मीने 640 एकड के टुकडो मे नीलामी द्वारा वेची जाएँगी और उनका मूल्य एक डालर प्रति एकड से कम नही होगा, (4) हर व्यक्ति को धार्मिक स्वतन्त्रता होगी और किसी को गुलाम नही रखा जा सकेगा, (5) इन प्रदेशो को सार्वजनिक स्कूलो के सचालन के लिए भी ज़मीने दी गईं ताकि उनसे होने वाली आय से इन स्कूलो का खर्च निकाला जा सके।

कुछ हद तक इन अध्यादेशो की उपर्युक्त व्यवस्थाओ ने भूमि-वितरण के बारे मे सघीय सरकार की भावी नीति को प्रभावित किया। किन्तु गुलाम-प्रथा का निषेध अन्य प्रदेशो पर लागू नही किया गया। इसके अलावा इस उत्तर-पश्चिमी प्रदेश को छोडकर अन्य प्रदेशो को नये राज्यो के रूप मे सयुक्त राज्य मे शामिल करने के लिए आबादी की शर्त ही एकमात्र शर्त नही रखी गई।

यह बात जल्दी ही स्पष्ट हो गई कि 640 एकड के वडे टुकडो मे जमीने बेचने से छोटे अधिवासी-किसानो को प्रोत्साहन मिलने के बजाय ज़मीन की खरीद-बिक्री का धन्धा करने वाले धनी सटोरियो को ही लाभ होता

है। इसलिए 1800 मे जनता को वेचे जाने वाले जमीन के टुकडो का आकार घटाकर 320 एकड कर दिया गया और चार वर्ष वाद उसे भी घटाकर 160 एकड तक सीमित कर दिया। इसके वाद 1820 मे इन टुकडो को फिर घटाकर आधा यानी 80 एकड और कुछ समय वाद 40 एकड ही कर दिया गया। जमीनो की कीमतो मे कुछ घटा-वढी होती रहती थी और यह घटा-वढी उस समय तक जारी रही, जव तक कि 1862 का वास भूमि कानून (होमस्टैड ऐक्ट) पास होने से कीमत का सवाल खत्म नही हो गया। यह कानून पास होने के वाद कोई भी व्यक्ति 160 एकड भूमि का कानूनन मालिक हो सकता था, वशर्ते कि उसने पाँच वर्ष तक उस पर खेती की हो और वहाँ रहा हो।

भूमि-नीति के साथ-साथ एक वात और भी जुडी हुई थी और वह यह थी कि पश्चिमी प्रदेश आन्तरिक सुधारो, खासकर परिवहन की सुविधाओ के लिए चिन्तित थे। सन् 1815 तक पिट्सवर्ग, जो एक वडा निर्माण केन्द्र था 'अमेरिका का वर्मिघम' कहलाने लगा था, यातायात मार्गो का एक महत्त्वपूर्ण सगम वन गया था। यहाँ फिलाडेल्फिया और वाल्टीमोर के व्यापारियो ने अपनी शाखाएँ खोली हुई थी। तटीय नगरो से स्थल मार्ग द्वारा लाई गई व्यापारिक वस्तुओ का यहाँ पिट्सवर्ग और ओहायो घाटी के उत्पादनो के साथ विनिमय किया जाता था।

लेकिन स्थल मार्ग से वाणिज्य की वस्तुओ को एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाने ले जाने मे वहुत लम्वी दूरियाँ तय करनी पडती थी और यात्रा वडी कठिन होती थी। इसलिए जल-मार्गो का विकास किया गया। 1811 तक प्रति वर्ष शहतीरो के 1200 वेडे ओहायो घाटी के ढलानो की धाराओ से वहते हुए मिसिसिपी नदी मे और वहाँ से न्यू ओर्लियन्स जाने लग गए। यहाँ थोडा-वहुत माल तो नकद पैसे के वदले वेचा जाता था और वाकी माल का चीनी और रूई के साथ विनिमय कर लिया जाता था। वाद मे यह चीनी और रुई समुद्र मार्ग से अटलाटिक के वन्दरगाहो को भेज दी जाती थी।

इस जलीय परिवहन प्रणाली मे कठिनाई यह थी कि इसमे ऊपर के प्रदेशो से ढलानो के साथ-साथ नदी मे नीचे तो माल लाया जा सकता था,

लेकिन नीचे से ऊपर माल ले जाने की कोई उचित व्यवस्था नही थी। साधारण नावो को मिसिसिपी की धारा मे ऊपर की ओर लुइसवील, कैण्टकी तक 1500 मील का मार्ग तय करने मे 90 दिन लगते थे। लेकिन रॉवर्ट फुल्टन ने जव 1807 मे हडसन नदी मे अपनी पहली पैडल युक्त पहिये वाली स्टीम बोट (वाष्प-नौका) चलाई तो उससे धीरे-धीरे यह समस्या हल हो गई। जल्दी ही धुआँ और आग उगलती स्टीम-बोटे मिसिसिपी और अन्य पश्चिमी नदियो मे चलती दिखाई देने लगी। परिवहन का यह सुधार 'पश्चिम के लिए हजारो लडाइयो के लाभो की अपेक्षा भी अधिक महत्त्वपूर्ण' बताया जाता था।

किन्तु स्टीम-बोटे भी ओहायो घाटी से पूर्वी समुद्र तट पर अटलाटिक के वन्दरगाहो तक पहुँचने के लिए मिसिसिपी नदो से मैक्सिको खाडी होते हुए अटलाटिक महासागर पहुँचने के लम्वे और टेढे रास्ते को कम नही कर सकी। इसलिए नहरे और जलपाश (लॉक) वनाकर इन स्थानो के बीच जलीय यातायात का एक अधिक सीधा मार्ग वनाने का प्रयत्न किया गया। इस दिशा मे सबसे महत्त्वपूर्ण परियोजना एरी नहर की थी। सन् 1825 मे जव यह परियोजना पूर्ण हो गई तो मध्य-पश्चिमी प्रदेश की कृषि-उपज ग्रेट लेक्स से एरी नहर मे और वहाँ से हडसन नदी होती हुई न्यूयार्क वन्दरगाह पहुँचने लगी, जहाँ से वह विश्व के वाजारो को निर्यात कर दी जाती थी।

एरी नहर ने पश्चिमी प्रदेश को राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का एक अभिन्न अग वनाने मे महत्त्वपूर्ण योग दिया। इससे अमेरिका के पश्चिमी और पूर्वी भागो के व्यापार का ढग भी वदल गया। पहले जहाँ यह व्यापार मिसिसिपी नदी के रास्ते न्यू ऑर्लियन्स मे माल लाकर किया जाता था, वहाँ वह अब इस नये रास्ते से होने लगा। इससे पश्चिम और उत्तर के व्यापार मे जहाँ एकाएक असाधारण वृद्धि हो गई वहाँ पश्चिम और दक्षिण का व्यापार घट गया। इससे एक प्रमुख व्यापारिक केन्द्र के रूप मे न्यू ऑर्लियन्स का जो महत्त्व था, वह धीरे-धीरे क्षीण हो गया। उत्तरी प्रदेशो मे उद्योग-व्यवसाय की प्रवृत्तियो की वढती हुई विविधता, पूर्वी प्रदेशो के व्यापारियो की नये-नये व्यवसायो मे अग्रसर होने की उद्यमी वृत्ति और उत्तरी प्रदेशो मे उपलब्ध ऋण की उदार

सुविधाओ ने अटलाटिक के बन्दरगाहो का व्यापार बढा दिया, जिससे न्यू ओर्लियन्स के व्यापार को और भी धक्का लगा।

पूर्व और पश्चिम के व्यापार को रेलो ने और भी सुदृढ बना दिया। प्रारम्भ मे एरी नहर की भाँति रेल-मार्गो का निर्माण भी राज्यो की जिम्मेदारी था। जैफर्सन ने जब देश मे सडको के निर्माण की अपनी विशाल योजना प्रस्तुत की तभी से पुराने राज्य, जिन्हे इन सडक-परियोजनाओ से अधिक लाभ की आशा नही थी, सघीय सरकार द्वारा परिवहन की सुविधाओ के विकास के कार्यक्रम अपने हाथ मे लिये जाने का विरोध कर रहे थे। फलस्वरूप 1828 मे परिवहन-सुविधाओ का निर्माण विशुद्ध रूप से राज्यो की ही जिम्मेदारी बना दिया गया।

किन्तु सडको के सुधार और रेल-मार्गो के निर्माण से राज्य सरकारो के कोष पर बहुत बोझ पडता था। राज्य सरकारो ने रेल-मार्गो के निर्माण का काम अधिकाधिक प्राइवेट कम्पनियो को देना प्रारम्भ किया, क्योकि राज्यो के सविधानो मे इस प्रकार के व्यावसायिक उद्यमो का निषेध था। इस प्रकार के राजकीय व्यावसायिक उद्यमो ने 1837 के आतक के दिनो मे राज्य सरकारो की साख को बहुत गिरा दिया था। ये रेल कम्पनियाँ मुख्यत पूर्वी राज्यो के लोगो और यूरोपियनो की पूँजी से चलती थी, हालाकि आवश्यकता पडने पर राज्यीय और स्थानीय सरकारे भी उन्हे सहायता देती रही। सन् 1850 मे जब सरकार ने रेल कम्पनियो को भूमि-अनुदान देने की नीति प्रारम्भ की, तो उन्हे सघीय सहायता फिर मिलने लग गई। इन अनुदानो ने रेल-निर्माण को बडे पैमाने पर प्रोत्साहन दिया। सन् 1850 से 1860 तक सयुक्त राज्य मे रेल-मार्गो की लम्बाई 9,000 मील मे बढकर 31,000 मील हो गई और रेलो मे लगी पूँजी भी 30 करोड डालर से बढकर 1 अरब डालर हो गई, जो राष्ट्र की सक्रिय पूँजी का लगभग एक चौथाई भाग थी।

सन् 1858 मे न्यूयार्क, बोस्टन, फिलाडेल्फिया और बाल्टीमोर का शिकागो, सिनसिनाटी और सेट लुई के साथ रेल-सम्पर्क स्थापित हो चुका था। इन शहरो के बीच रेल-मार्ग से सम्बन्ध स्थापित हो जाने के बाद उत्तर और पश्चिम के बीच आर्थिक बन्धन और भी मजबूत हो गए और दोनो

क्षेत्रो मे आर्थिक समृद्धि को बढावा मिला। राष्ट्र के निर्माण-उद्योगो का उत्पादन मूल्य की दृष्टि से 1850 और 1860 के बीच 86 प्रतिशत बढ गया।

इसी प्रकार पश्चिमी क्षेत्रो का कृषि उत्पादन भी असाधारण रूप से बढा। कृषि उत्पादन मे वृद्धि और रेलो के विकास ने कृषि ढाँचे मे परिवर्तन कर दिया। पहले जहाँ कृषि स्थानीय खपत और आवश्यकताओ को दृष्टि मे रखकर की जाती थी, वहाँ अब वह क्षेत्रीय खपत को दृष्टि मे रखकर की जाने लगी। इसी प्रकार मक्का, गेहूँ और मास आदि विशिष्ट खाद्य पदार्थो का भी उत्पादन किया जाने लगा। कृषि और परिवहन, दोनो मे सयुक्त क्रान्ति ने पश्चिमी क्षेत्रो के किसानो को दूर के बाजारो को खोजने और उनमे अपना माल भेजकर लाभ उठाने का अवसर प्रदान किया। इसका एक नुकसान भी हुआ। सयुक्त राज्य के कपास उत्पादक क्षेत्र का सस्ती कीमतो पर खाद्य पदार्थो की प्राप्ति का स्रोत अब बन्द हो गया, क्योकि पश्चिम के किसान इस क्षेत्र को खाद्य पदार्थ मुहैया करने के बजाय अधिक मुनाफा कमाने के लिए उन्हे उत्तर-पूर्व के दूरस्थ प्रदेशो या यूरोप को भेजने लगे।

पश्चिम और उत्तर के बीच व्यापार मे वृद्धि हो जाने से पश्चिम की राजनीतिक नीतियो मे भी, खासकर गुलाम प्रथा और तटकरो के मामले मे, परिवर्तन हुआ। काग्रेस मे पश्चिमी क्षेत्रो की ताकत बढ जाने पर यह परिवर्तन और भी स्पष्ट और महत्त्वपूर्ण हो गया। सन् 1820 से लेकर गृह-युद्ध के प्रारम्भ तक बारह पश्चिमी राज्य सघ मे शामिल किये गए। सीनेट की 86 सीटो मे से 24 सीटे इन राज्यो के हाथ मे थी। इन पश्चिमी सीनेटरो मे से चार को छोडकर शेष सभी ऐसे राज्यो के थे जहा गुलाम प्रथा नही थी। इनसे भी अधिक महत्त्व की बात यह कि प्रतिनिधि सभा (हाउस ऑफ रिप्रेजेंटेटिव्स) मे भी जो राजस्व सम्बन्धी सब कानूनो का उद्गम था, पश्चिमी राज्यो की ताकत बढ गई थी।

पश्चिम की राजनीतिक नीतियो मे हुआ परिवर्तन इस बात से और भी स्पष्ट था कि पश्चिम ने सरक्षणात्मक तटकरो के बारे मे बिलकुल उल्टा रुख अपनाया। पश्चिम के किसानो को सरक्षणात्मक तटकरो ने कोई लाभ

नही था, क्योकि उनके यहाँ फसलो का उत्पादन उनकी आवश्यकता से अधिक होता था, और वह फालतू उत्पादन विदेशी बाजारो मे अन्तर्राष्ट्रीय भावो पर विकता था। सरक्षणात्मक तटकरो का असर उनके लिए सिर्फ यह होता था कि वे अपने कृषि-उत्पादनो के वदले मे विदेशो से जो निर्मित वस्तुएँ खरीदते थे, उनका मूल्य सयुक्त राज्य मे पहुँचकर तटकरो से वढ जाता था।

दक्षिण के लोग विदेशो के निर्मित माल पर तटकर के और भी अधिक कट्टर विरोधी थे, क्योकि इन तटकरो के कारण यूरोप मे उनकी रुई की विक्री काफी हद तक सीमित हो गई थी। परिणाम यह हुआ कि 1846 मे काग्रेस ने सरक्षणात्मक तटकरो की प्रणाली पर एक जवर्दस्त प्रहार किया, क्योकि पश्चिम और दक्षिण के प्रतिनिधि उत्तर-पूर्व के निर्माण-उद्योगो के हितो के विरुद्ध सगठित हो गए थे।

किन्तु 1857 मे पश्चिमी राज्यो के प्रतिनिधियो ने तटकरो मे कमी के विरोध मे मत दिया, क्योकि उत्तर के प्रतिनिधियो के साथ उनका यह समझौता हो गया था कि उत्तर के प्रतिनिधि एक सामान्य आवास-भूमि कानून के पक्ष मे अपने वोट दे देगे वशर्ते कि पश्चिमी प्रतिनिधि तटकरो के मामले

सयुक्त राज्य मे देश के साथ-साथ रेलो का क्रमिक विस्तार

कुल पूजी निवेश (डा
रेल मार्ग (मीलो

1830 $4 000 000
1840 $60 000 000 2 800
1850 $300 000 000 9 000
1860 $1 000 000 0 31 000

मे उनका समर्थन करे। यद्यपि यह विधेयक पास नहीं हो सका तो भी उत्तर-पूर्व के पूंजी-निवेशक उद्योगपतियो और पश्चिम के महत्त्वाकाक्षी कृषि हितो ने मिलकर भविष्य के लिए दोनो क्षेत्रो के बीच एक राजनीतिक गठबन्धन स्थापित कर दिया।

जैसा कि इतिहासकार चार्ल्स बीयर्ड ने कहा है, पूर्व और पश्चिम 'फौलाद और सोने के बन्धनो से,' एक-दूसरे के साथ बंध गए थे। उत्तर और पश्चिम का यह गठबन्धन मजबूत होने से उत्तरी राज्यो ने विदेशी प्रतिस्पर्धा से सरक्षण के कानूनो का खूब लाभ उठाया और दूसरी ओर पश्चिमी राज्यो के लोगो ने और अधिक प्रसार और फैलाव के लिए आवश्यक मुक्त भूमि और आन्तरिक सुधारो का फायदा उठाया।

पश्चिम के विकास ने उत्तर का राजनीतिक और आर्थिक दोनो प्रकार की ताकत का पलडा भारी कर दिया।

गुलाम मजदूर स्वभावत अदक्ष मजदूर है इसलिए यह स्पष्ट है कि निर्माण और यान्त्रिक उद्योगो मे उन्हे नही लगाया जा सकता। जहाँ एक मज़दूर को जानबूझकर अज्ञान मे रखा जाता है और साथ ही उसे अपनी मानसिक शक्तियो का उपयोग करने के लिए कोई प्रोत्साहन नही दिया जाता, वहाँ यह सम्भव नही है कि वह ऐसे कठिन और सूक्ष्म कामो मे दक्षता से भाग ले, जैसे कि अधिकतर निर्माण और यान्त्रिक उद्योगो की प्रक्रियाओ मे करने पडते है।

—गृह-युद्ध से पूर्व के दक्षिणी प्रदेशो की यात्रा के वाद एक आयरिश अर्थशास्त्री के कथन का एक अश

गृह-युंद्ध से पूर्व दक्षिण की स्थिति

गृह-युद्ध से पहले की दक्षिण की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियो को समझने के लिए हमे उन हालात की समीक्षा करनी चाहिए जिनके कारण दक्षिण की अर्थव्यवस्था गुलाम-प्रथा और 'एक फसल' के उत्पादन पर अवलम्बित हो गई।

जैसा कि हमने देखा है, आज जो प्रदेश सयुक्त राज्य कहलाता है, उसमे अफ्रीकी गुलाम सबसे पहले 1619 मे लाये गए थे। उसके वाद सत्रहवी शताब्दी के अधिकतर भाग मे अग्रेजो के उपनिवेशो मे ये गुलाम लाये जाते रहे, किन्तु थोडी सख्या मे। लेकिन इस शताब्दी की समाप्ति पर तम्बाकू और दक्षिण की अन्य कृपि-जिन्सो की माँग वढने लगा, इससे दक्षिण के उपनिवेशो मे वडे पैमाने पर खेतो मे गुलामो से मजदूरी कराई जाने लगी। अमेरिकन क्रान्ति प्रारम्भ होने तक वर्जीनिया की आधी आवादी और दक्षिणी कैरोलाइना की दो-तिहाई आवादी नीग्रो गुलामो की थी।

सन् 1700 के दशक के आखिरी वर्षो मे जब तम्बाकू की कीमतो में गिरावट आई और दक्षिण मे मन्दी का एक लम्बा झल्ला आया तो जिन लोगो के पास बहुत बडी सख्या मे गुलाम मजदूर थे, उन्होने गुलामो की सख्या मे वृद्धि को रोककर आपसी प्रतिस्पर्धा को बन्द करने का प्रयत्न किया। साथ ही क्रान्ति प्रारम्भ होने पर गुलाम-प्रथा के विरुद्ध जन-भावना भी फैलने लगी। आजादी के सघर्ष ने लोगो को स्वतन्त्रता और समानता के आदर्शो के प्रति सजग कर दिया। उत्तरी प्रदेशो मे, जहाँ उद्योगो और छोटे पैमाने की खेती मे गुलाम-प्रथा किमी तरह आर्थिक दृष्टि से अनुकूल नही बैठती थी, उसे स्पष्टत अवज्ञा की दृष्टि से देखा जाता था। सन् 1804 तक डेलेवारा के उत्तर मे सभी राज्यो ने उस पर कानूनन प्रतिवन्ध लगा दिया था।

यहाँ तक कि दक्षिण मे भी अनेक प्रमुख व्यक्ति गुलामो से मजदूरी कराना हानिकारक समझते थे। उदाहरण के लिए वाशिगटन और जैफर्सन गुलाम-प्रथा को एक अस्थायी चीज समझते थे और यह आशा करते थे कि एक दिन वह समाप्त हो जाएगी। ऐसी बहुत-से उदाहरण थें जिनमे कि गुलामो को उनके मालिको ने स्वेच्छा से ही मुक्त कर दिया था।

गुलाम-प्रथा उन्नीसवी शताब्दी मे अपनी मौत आप ही मर जाती, अगर दो घटनाएँ उस समय एकसाथ घटित न हो जाती। पहली यह कि औद्योगिक क्रान्ति ने इग्लैड की कपडा मिलो का यान्त्रिकीकरण कर दिया था, जिससे अठारहवी शताब्दी के अन्तिम और उन्नीसवी शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षो मे अपनी उत्पादन-वृद्धि को कायम रखने के लिए वे कपास की अधिकाधिक माँग करने लगी। दूसरी घटना थी 'कॉटन जिन' (कपास ओटने की मशीन) का आविष्कार। एली व्हिटने द्वारा 1793 मे इस मशीन का आविष्कार होने से दक्षिण मे कपास के उत्पादन का खर्च कम हो गया। फलत जिस समय इग्लैड की मिलो मे रूई की माँग वढी ठीक उसी समय 'कॉटन जिन' के आविष्कार से अमेरिका के दक्षिणी राज्यों मे कपास का उत्पादन भी वेतहाशा वढ गया।

'कॉटन् जिन' के आविष्कार से पूर्व गुलाम मजदूर ही हाथों से कपास के रेशे को विनौले से अलग करते थे। जव काफी वक्त खा जाने वाले इस

काम को करने के लिए मशीन का उपयोग होने लगा तो खेत मे काम करने वाले गुलाम मजदूर की कार्य-कुशलता और क्षमता कई गुना वढ गई। मुख्यत इसी कारण से कपास का उत्पादन वढ गया। साथ ही खेतो मे गुलामो को रखकर मज़दूरी कराने की प्रथा के वढने का भी यही कारण था। सन् 1830 तक दक्षिण मे गुलामो की सख्या वीस लाख से भी अधिक हो गई। अगले तीस वर्षो के भीतर नीग्रो लोगो की आवादी लगभग दुगुनी हो गई, हालाँकि गुलामो का व्यापार 1808 मे ही वन्द कर दिया गया था।

रूई की कीमतो मे उतार-चढाव होता रहता था। सन् 1799 मे वह 44 सेंट प्रति पोंड तक ऊँचा चला गया और 1830 और 1840 के मन्दी के दशको मे वह गिरकर औसतन 10 सेंट प्रति पौंड पर आ गया। लेकिन कीमतो के गिरने से भी दक्षिण के जमीदार दूसरी फसलो की ओर नही झुके, एक ही फसल से चिपटे रहे। मजदूरी और ज़मीन, दोनो इतनी सस्ती थी कि कुछ इलाको मे कपास के उत्पादन का सारा खर्च 8 सेंट प्रति पोंड से अधिक नही पडता था। इसके अलावा, एक ही फसल वार-वार वोने से ज़मीन की उर्वराशक्ति नष्ट हो जाने पर भी ये लोग दूसरी फसल नही वोते थे, क्योकि जमीन इतनी अधिक थी कि एक खेत ख़राव हो जाने पर वे नई ज़मीन पर खेती शुरू कर देते थे। लम्वे अर्से तक यही सिलसिला चलता रहा, लेकिन गृह-युद्ध छिडने से ठीक पहले के वर्षो मे दक्षिण के कपास उत्पादको को इस नीति को अपनाने की भूल समझ मे आ गई।

गुलाम-प्रथा पर आधारित प्रणाली के दोष दक्षिण की अर्थ-व्यवस्था मे विलकुल स्पष्ट थे। यह अनुमान लगाया गया है कि दक्षिण के कपास उत्पादक फार्मो के गुलाम मजदूरो की कार्यकुशलता और क्षमता उत्तर के स्वतन्त्र गोरे किसानो की अपेक्षा लगभग आधी थी। स्वतन्त्र किसान को अपने परिश्रम का पूरा फल मिलता था, इसलिए वह वहुत मेहनती था। लेकिन गुलाम मजदूर को अपने परिश्रम का फल नही मिलता था इसलिए मजदूरी के परिणाम और फल मे उसकी कोई दिलचस्पी नही थी। उसे उत्पादन वढाने, जमीन की उर्वरा शक्ति को कायम रखने और साधनो और उपकरणो पर कम खर्च करने के लिए कोई उत्साह नही था। सामान्यत वह अपने काम मे उतनी ही दिलचस्पी लेता था और उतना ही उत्साह दिखाता था, जितना

कि उसे मालिक के कोडो से बचाने के लिए आवश्यक होता था।

दक्षिण मे कृषि के सुधरे हुए तरीके या मजदूरी की बचत करने वाली मशीनो का इस्तेमाल करना सम्भव नही था, क्योकि गुलामो पर यह भरोसा नही किया जा सकता था कि वे इन मशीनो से ठीक काम ले सकेंगे। वे केवल सादे और भारी औज़ारो का ही प्रभावकारी ढग से इस्तेमाल कर सकते है। इसलिए गुलाम-प्रथा के कारण दक्षिण के प्रदेश कुछ खास फसलो की उपज तक ही सीमित रह गए और वहाँ निर्माण उद्योगो का विकास नही हो सका।

गुलाम-प्रथा वाले राज्यो के ज़मीदार और बागान मालिक ही दक्षिणी प्रदेश के शासक थे। उनके हाथ मे राजनीतिक सत्ता थी और साथ ही उन्हे अपनी विशेष परम्पराओ का गर्व भी था। इस मद मे चूर होकर वे समाज को अपनी इच्छाओ के अनुसार ढालने के लिए कृत-सकल्प थे। वे अपने-आपको अन्य देशो के अभिजातवर्ग की भाँति उच्च वर्ग बनाना चाहते थे। एक दक्षिणी जमीदार ने एक बार कहा था कि "जमीदारी ही इस देश मे एकमात्र स्वतन्त्र और सम्मानित पेशा है।"

फिर भी जमीदार एक पृथक् अल्पसख्यक वर्ग थे। वास्तव मे गोरी आबादी का कुल 25 प्रतिशत ही उन परिवारो से सम्बद्ध था, जिनके पास 1860 मे दक्षिण मे 35 लाख गुलाम थे। इनमे सेभी दो-तिहाई परिवार ऐसे थे, जिनके पास दस से भी कम गुलाम थे। लेकिन शेष एक-तिहाई परिवारो का, जिनके पास दस या इससे अधिक गुलाम थे, अमेरिका की समूची नीग्रो आबादी के तीन-चौथाई भाग पर अधिकार था। ये लोग दक्षिण की कुल गोरी आबादी का 8 5 प्रतिशत भाग थे और इनके हाथो मे ही दक्षिण की आय का अधिक हिस्सा था। इस प्रकार दक्षिण मे आर्थिक शक्ति एक छोटे-से विशिष्ट वर्ग के हाथ मे थी।

गुलाम-प्रथा की सबसे गम्भीर आर्थिक कमजोरी यह थी कि उसमे पूंजी का सग्रह नही किया जा सकता था। गुलाम-प्रथा वाले राज्यो मे केवल बडे जमीदारो को ही बडी आमदनियाँ थी और सब मिलाकर वे अपने खर्चीलेपन और विलासिता के कारण अपनी दौलत को खा-पीकर हजम कर जाते थे। जो कुछ वे बचाते थे वह जमीन और गुलामो को खरीदने पर व्यय हो

जाता था। दक्षिण की एक पत्रिका ने उन दिनो लिखा था कि दक्षिणी राज्यो मे पूँजी-निवेश का एक विचित्र चक्र था, "लोग अधिक कपास का उत्पादन करने के लिए पूँजी का निवेश करते थे ताकि उसकी आमदनी से और अधिक नीग्रो गुलामो को खरीद सके और वे गुलाम फिर कपास का उत्पादन वढाएँ और उस वढे उत्पादन से फिर नये नीग्रो गुलाम खरीदे जा सके।"

सन् 1860 मे गुलाम रखने वाले गोरे लोगो की स्थिति
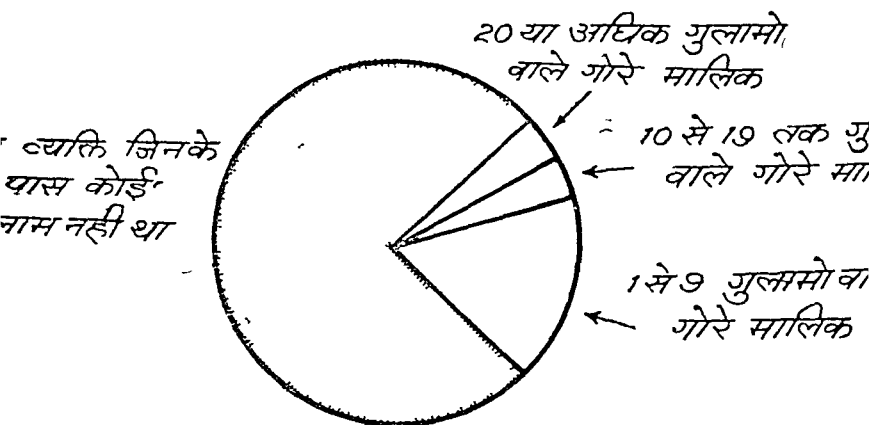
सन् 1860 मे दक्षिणी राज्यो की 79,81,000 गोरी आवादी मे से केवल 25 प्रतिशत ही ऐसे परिवारो की थी, जिनके पास गुलाम थे।

अफ्रीका मे गुलामो का व्यापार वन्द हो जाने पर गुलामो की कीमते वहुत चढ गई। कृषि-भिन्न कामो मे गुलामो का उपयोग प्रारम्भ हो जाने और वडी जमीदारियो और वागानो की प्रणाली का विस्तार हो जाने से गुलामो की माँग तो वढ गई, किन्तु उनकी उपलब्धि कम रह गई। सन् 1845 मे खेत मे काम करने वाले जिस नीग्रो गुलाम की कीमत 650 डालर थी, वही 1850 के दशक मे 1000 डालर मे विकने लगा और 1860 मे उसका दाम और भी वढकर 1200 से 1800 डालर तक हो गया। लेकिन इस वीच रुई के दाम वही 9 से 12 सेंट तक प्रति पौंड के नीचे स्तर पर ही वने रहे। इस प्रकार इन वर्षों मे गुलाम मजदूर की कीमत और रुई के

विक्रय मूल्य का अनुपात बहुत बदल गया। इसके अलावा गुलामो की खरीद मे पैसा लगाना खतरे से खाली भी नही था। अगर गुलाम अपनी कीमत और अपने पालन-पोषण का खर्च निकालने से पूर्व ही मर जाता तो उसके मालिक को बहुत बडा नुकसान होता।

लेकिन जमीदार लोग किसी भी तरह गुलाम-प्रथा का त्याग करने को तैयार नही थे। गुलामो पर उन्होने पैसा लगा रखा था और उनका मुनाफा इस बात पर निर्भर था कि उनके गुलामो मे और अधिक गुलाम पैदा करने की कितनी क्षमता है। उनके लिए यह सम्भव नही था कि वे सब गुलामो को बेच डाले और उनसे जो पैसा मिले उसे मशीनो की खरीद पर लगा दे। इसमे उन्हे भारी नुकसान उठाना पडता। इसके अलावा जिसके पास जितने अधिक गुलाम थे उसका समाज मे उतना ही अधिक दबदबा और ऊँचा रुतबा था। अपनी सामाजिक स्थिति को बनाये रखने के लिए ये जमीदार अधिकाधिक गुलामो की खरीद मे पैसा लगाते रहते थे।

ये जमीदार लोग गुलाम-प्रथा को बनाये रखने के अपने आग्रह के पक्ष मे यह दलील देते थे कि यह दक्षिण की एक 'विशेष सामाजिक प्रथा' है। ये लोग अठारहवी शताब्दी के अन्तिम वर्षो के अनेक दक्षिणवासियो की भाँति यह नही कहते थे कि यह 'एक आवश्यक किन्तु अस्थायी बुराई' है। इसके विपरीत वे यह दलील देते थे कि नीग्रो केवल गुलाम बनने के ही लायक है और उत्तर के अनेक गोरे श्रमिक दक्षिण के नीग्रो लोगो से भी खराब हालत मे है। वे दक्षिण की अभिजात-तन्त्रीय परम्पराओ को सयुक्त राज्य मे सभ्यता की सबसे अच्छी गारटी मानते थे।

दक्षिण मे पूँजी के सग्रह मे एकमात्र यही बाधा नही थी कि वहाँ जमीदार अपनी आमदनी का बडा भाग जमीनो और गुलामो की खरीद मे लगा देते थे। एक बाधा और भी थी और वह यह कि वहाँ की उधार प्रणाली बहुत पेचीदा थी। दक्षिण के जमीदारो को उत्तर के साहूकारो से उधार लेना पडता था। इस प्रणाली की पेचीदगी के कारण दक्षिण की रूई की हर गाँठ की बिक्री पर बिचौलिए एजेटो को कितनी ही तरह के कमीशन देने पडते थे। इसके अतिरिक्त उधार माल लेने की व्यवस्था के कारण जमीदारो को खाद्य पदार्थ, कपडा और कृषि उपकरण आदि चीजे

ऊँची कीमत पर उत्तर से खरीदनी पडती थी। जमीदारो के लिए खेती के सीजन मे बिना उधार के अपना काम चलाना सम्भव नही था, इसलिए वे इस उधार-प्रणाली के चक्कर से किसी भी तरह अपने आपको बाहर नही निकाल सकते थे। इससे भी बडी कठिनाई यह थी कि ये लोग अपनी अगली फसल का सौदा पहले से ही करके उधार ले लेते थे, इसलिए उनके लिए यह भी सभव नही था कि रूई के भाव गिर जाने पर वे कपास की फसल पैदा ही न करे।

दक्षिण के लोगो के पास अगर कुछ पूंजी होती थी तो उसे वे हर सम्भव उपाय से बरबाद कर डालते थे। दक्षिण के लोगो के हाथ मे समुद्री जहाजो का व्यापार नही था, इसलिए उत्तर के लोग ही उनकी उपज को समुद्र पार भेजते और इसमे वे अच्छा पैसा बनाते। दक्षिण मे निर्माण-उद्योग नही थे, इसलिए उनकी उपज उत्तर मे जाकर बिकती और इस प्रकार उनके बाजार पर भी उत्तर वालो का ही नियन्त्रण रहता। दक्षिण मे कृषि अवश्य होती थी, किन्तु कुछ ही चीजो की, इसलिए उन्हे अपने लिए खाद्य पदार्थ दूसरी जगहो से लेने पडते। नतीजा यह होता कि पश्चिम के किसान दक्षिण के इन कृषि-जीवियो को, जो अपने लिए अन्न का प्रबन्ध नही कर सकते थे, अनाज और मास आदि भेजते। जब इन चीजो की कीमते बढ जाती तो दक्षिण के लोग चीखते-चिल्लाते। लेकिन पश्चिम से आनेवाली इन चीजो के बिना उनका काम नही चल सकता था, इसलिए उन्हे ऊँची कीमते ही अदा करनी पडती।

इस सबका अर्थ यह नही था कि दक्षिण मे अर्थ-व्यवस्था सभी जगह जड स्थिति मे थी। दक्षिण की रूई अधिकाधिक मात्रा मे निर्यात की जा रही थी और 1859 मे तो यह स्थिति थी कि मूल्य की दृष्टि से अमेरिका के निर्यात का लगभग दो-तिहाई भाग रूई का था। इसके अतिरिक्त 1839 और 1859 के बीच बीस वर्षो मे तम्बाकू की उपज भी दुगुनी हो गई।

लेकिन रूई और तम्बाकू की खेती ने जमीन को बहुत जल्दी बेकार कर डाला। सन् 1850 तक दक्षिण मे परित्यक्त फार्मो की सख्या बहुत अधिक हो गई थी। जिन जमीदारो ने गुलामो पर बहुत पैसा लगा रखा था, उन्हे नई जमीने प्राप्त करने मे बहुत तगी महसूस होने लगी। दक्षिण

के लोगो की एक शिकायत यह भी थी कि हालाँकि रूई की उपज बढ गई थी तो भी उसके वितरण पर उत्तर के लोगो का नियन्त्रण होने से उनकी मुनाफे की दर घट गई थी। इसके अतिरिक्त रूई के उत्पादन-व्यय मे रूई के मूल्य की अपेक्षा अधिक वृद्धि हो गई थी। सन् 1840 के वाद खेती के औजार, ढुलाई के भाडे और गुलाम अधिकाधिक महँगे पडने लगे थे। यह लागत-वृद्धि छोटे जमीदारो के लिए खास तौर से भार वन रही थी।

इन सब समस्याओ ने दक्षिण के लोगो को यह महसूस करा दिया कि उनकी एक ही वस्तु की उपज करने की प्रणाली अत्यन्त हानिकारक है। सन् 1840 और 1850 के दशको मे दक्षिण के लोग इस वारे मे गम्भीरता से विचार करने लगे थे कि कपास का उत्पादन घटाया जाय, कृषि मे विविधता लाई जाय और स्थानीय निर्माण-उद्योगो को प्रोत्साहन दिया जाय। इन सवका उद्देश्य व्यापार के मामले मे उत्तर के नियन्त्रण से अपने-आपको मुक्त करना था। किन्तु स्थानीय उद्योगो को इसलिए वडी कठिनाइयो का सामना करना पडता था कि जमीदार लोग शहरी व्यवसायियो पर भरोसा नही करते थे। इसके अलावा दक्षिण मे दौलत कुछ जमीदारो के हाथो मे केन्द्रित थी, इसलिए यदि दक्षिण मे उद्योग स्थापित होते भी तो उनके उत्पादनो की विक्री के लिए वाजार वहुत सीमित होता।

दक्षिण मे वस्तुओ की विक्री के लिए वाज़ार की कमी का एक और हानिकारक प्रभाव था और वह यह कि दक्षिण से निर्यात की मात्रा जितनी होती, आयात की मात्रा उसका एक वहुत ही स्वल्प अश होती। उदाहरण के लिए न्यू ओर्लियन्स गृह-युद्ध से पहले के दशक मे राष्ट्र के कुल निर्यात का चौथाई भाग निर्यात करता था, परन्तु उसका आयात राष्ट्र के कुल आयात का पन्द्रहवॉ हिस्सा था। मोवाइल, अलावामा भी दक्षिण का एक वडा रूई-निर्यातक वन्दरगाह था, लेकिन वह आयात प्राय कुछ भी नही करता था। इस तरह दक्षिण को अपनी रूई यूरोप को निर्यात करने के लिए पहले न्यूयार्क भेजनी पडती थी। अगर वह दक्षिण के वन्दरगाहो से ही भेजी जाती तो दक्षिण के जहाजो को आयात के अभाव मे यूरोप से खाली लौटना पडता। इसका एक कारण यह भी था कि जहाजरानी के व्यापार मे लगाने के लिए पैसा भी केवल उत्तर-पूर्व के लोगो के पास था।

सन् 1860 तक अमेरिका के 'रुई राज्य' की जमीन बिलकुल बेकार-सी हो गई थी, क्योकि एक तो गुलामो से काम लेने की प्रथा लाभकारी नही रही थी और दूसरे जमीन मे उर्वरा शक्ति पुन पैदा करने के लिए दक्षिण के लोगो के पास पर्याप्त धन नही था। दक्षिण के लोगो के पास एक ही उपाय था कि वे नई जमीने प्राप्त करे अन्यथा उनकी कपास के उत्पादन पर आधारित अर्थ-व्यवस्था और गुलाम-प्रथा के अस्त-व्यस्त हो जाने का खतरा था।

लेकिन उत्तर के गुलाम-प्रथा-विरोधी लोग राजनीतिक दृष्टि से इतने सबल थे कि उन्होने दक्षिण के लोगो को अन्यत्र जमीने प्राप्त करने और वहाँ भी अपनी गुलाम-प्रथा का विस्तार करने से रोक दिया। गुलाम-प्रथा वाले और स्वतन्त्र राज्यो के बीच सीनेट मे सख्या की दृष्टि से जो सन्तुलन चला आ रहा था, वह 1850 मे कैलिफोर्निया के एक स्वतन्त्र (गुलाम-प्रथा रहित) राज्य के रूप मे सयुक्त राज्य मे प्रवेश से बिगड गया और स्वतन्त्र राज्यो का पलडा भारी हो गया। कुछ ही समय बाद ओरेगन और मिनेसोटा भी स्वतन्त्र राज्यो के रूप मे सयुक्त राज्य मे प्रविष्ट हो गए। प्रतिनिधि सभा मे यह खाई और भी चौडी हो गई। सन् 1850 के दशक के प्रारम्भ मे जहाँ हर स्वतन्त्र राज्य के पाँच सदस्य प्रतिनिधि सभा मे थे, वहाँ हर गुलाम-प्रथा वाले राज्य के कुल तीन ही प्रतिनिधि थे।

इसलिए दक्षिण के सामने चुनौती स्पष्ट थी कि वह राष्ट्रीय विधान-मडल मे अपनी शक्ति के क्षीण होते जाने पर भी अपनी इस 'विशिष्ट प्रथा' को कैसे कायम रख सकता है और कैसे अपनी आर्थिक समस्याओ का हल कर सकता है। उसे दो रास्तो मे से किसी एक को चुनना था। वे रास्ते थे—परिवर्तन या युद्ध। उसने युद्ध का मार्ग चुना और उसमे उसे दोहरी मार सहनी पडी—एक ओर तो युद्ध मे उसकी बुरी तरह पराजय हुई और दूसरी ओर उसे मजबूरन परिवर्तन करना पडा जो युद्ध के क्रूर परिणाम के रूप मे उसकी परम-अभिलषित विशिष्ट परम्परा को बहा ले गया।

अलामो से ऐपोमैटोक्स तक

इस सघर्ष मे मेरा सर्वोपरि उद्देश्य सघ (संयुक्त राज्य) की रक्षा करना है, गुलाम-प्रथा को बचाना या उसे नष्ट करना नही। यदि मै किसी भी गुलाम को गुलामी से मुक्त किए बिना सयुक्त राज्य को बचा सकूं तो मै अवश्य वैसा ही करूंगा। अगर उसे बचाने के लिए सब गुलामो को मुक्त करना जरूरी होगा तो मै वह भी जरूर करूंगा। और अगर मै कुछ को मुक्त कर और कुछ को गुलाम रहने देकर ही सयुक्त राज्य को बचा सकूं तो मै वैसा भी करूंगा।
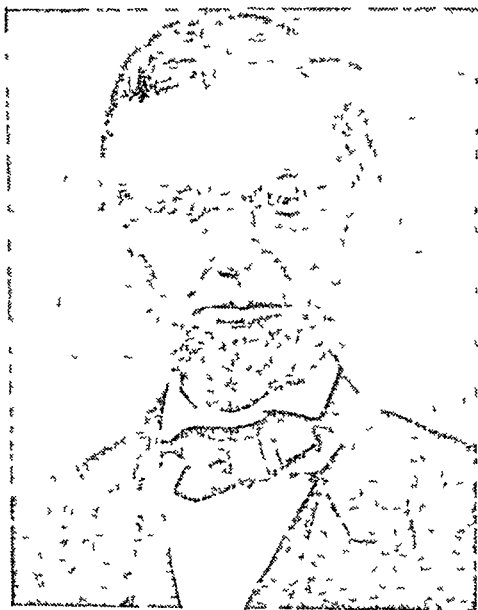
—अब्राहम लिकन, 1862

रूई राज्य के मालिक टेक्सास को अपने राज्य के विस्तार के लिए उसका स्वाभाविक अग समझते थे। सन् 1820 से ही, जबकि टेक्सास मैक्सिको का भाग था, दक्षिण के अधिवासी वहाँ जाकर अपनी बस्तियाँ बसाने लग गए थे। सन् 1836 तक वहाँ बसे इन अमेरिकनो की सख्या वहाँ की आबादी का लगभग चौथाई हिस्सा हो गई थी। इससे उनकी इतनी शक्ति हो गई थी कि मैक्सिको सरकार की अवज्ञा कर सके। इसलिए इन लोगो ने अपनी स्वतन्त्रता और एक नये टेक्सास गणराज्य की स्थापना की

घोपणा कर दी।

मैक्सिकन सरकार ने विद्रोह को दवाने के लिए स्वय सान्ता ग्राना के नेतृत्व मे सेना भेजी। इस युद्ध की सवसे प्रसिद्ध घटना थी टेक्सास की छोटी-सी ग्रलामो छावनी पर एक विशाल मैक्सिकन सेना का ग्राक्रमण। इस ग्राक्रमण मे मैक्सिकन सेना ने छावनी के तमाम निवासियो को कत्ल कर दिया। इससे क्रुद्ध होकर टेक्सन लोगो ने 'ग्रलामो को याद रखो' का उत्तेजक नारा लगाया ग्रौर सव टेक्सन वीरो को साथ लेकर सान्ता ग्राना की सेना को सान जासिन्तो की निर्णायक लडाई मे बुरी तरह तहस-नहस कर दिया। इस प्रकार टेक्सास का मैक्सिको से स्वतन्त्र हो जाना विलकुल सुनिश्चित हो गया ग्रौर नये गणराज्य ने जरा भी वक्त वरवाद किये विना सयुक्त राज्य मे शामिल होने के लिए प्रार्थनापत्र दे दिया।

उत्तर मे लोगो की ग्राम भावना यह थी कि टेक्सास की स्वतन्त्रता का ग्रान्दोलन वहाँ के निवासियो की ग्रान्तरिक इच्छा का परिणाम नही था, वल्कि उसे वाहर से दक्षिण के लोगो ने भडकाया था, ताकि टेक्सास को एक नये गुलाम-प्रथा वाले राज्य मे शामिल किया जा सके। इसलिए उत्तर के सीनेटरो ने टेक्सास को सघ मे मिलाने के विधेयक का तीव्र विरोध किया। ग्रन्त मे 1845 मे वह पास ग्रवश्य हो गया, लेकिन सिर्फ राष्ट्रपति टेलर के, जो गुलाम-प्रथा के समर्थक वर्जीनिया-निवासी थे, दवाव के कारण।

इसके वाद एक वर्ष के भीतर ही सयुक्त राज्य ने टेक्सास के इस दावे के समर्थन मे, कि उसकी सीमा रायो ग्रान्द तक है, मैक्सिको के खिलाफ लडाई की घोषणा कर दी। उत्तर-पूर्व के लोग इस लडाई के विरुद्ध थे, किन्तु, दक्षिण ग्रौर पश्चिम के लोग उसका जोरदार समर्थन कर रहे थे। सयुक्त राज्य की कही ग्रधिक शक्तिशाली सेना के साथ दो वर्ष तक लडने के वाद ग्रन्त मे थककर मैक्सिको ने उसके साथ शान्ति-सन्धि कर ली। यह सन्धि उसे वहुत महँगी पडी क्योकि उसकी कीमत के रूप मे उसे ग्रपना एक तिहाई प्रदेश छोड देना पडा। सयुक्त राज्य ने इस प्रदेश के लिए उसे 1 करोड 50 लाख डालर दिए। इस प्रदेश मे समूचे टेक्सास के ग्रलावा वह प्रदेश भी शामिल था, जिसमे वाद मे कैलिफोर्निया, न्यू मैक्सिको ग्रौर एरिजोना वने। इसके ग्रलावा सयुक्त राज्य ने ग्रमेरिकन नागरिको को हुई

व्यक्तिगत क्षतियो की भरपाई के रूप मे भी मैक्सिको से 32,50,000 डालर लिये।

मैक्सिकन युद्ध की समाप्ति पर दक्षिण के लोगो ने इन नये ग्रवाप्त प्रदेशो ग्रौर लुइसियाना की खरीद से प्राप्त प्रदेशो मे, जो ग्रभी तक राज्यो का दर्जा प्राप्त नही कर सके थे, गुलाम-प्रथा के विस्तार का ग्रान्दोलन तेज कर दिया। इसके साथ-ही-साथ इलिनॉय के सीनेटर स्टीफन डगलस ने भी ग्रपनी वह योजना प्रस्तुत की जिसमे लुइसियाना की खरीद मे प्राप्त विरल ग्रावादी वाले भागो को 'प्रदेशो' के रूप मे गठित करने के लिए कहा गया था, ताकि ग्रटलाटिक तट से प्रशान्त तक महाद्वीप के ग्रार-पार रेल-मार्ग स्थापित किया जा सके।

डगलस को ग्रपनी इस योजना के पक्ष मे उत्तर के उद्योगपतियो का प्रवल समर्थन प्राप्त था, खास तौर से उन लोगो का, जिनके पास शिकागो मे स्थावर सम्पति थी, क्योकि प्रस्तावित रेल-मार्ग वन जाने पर स्वभावत. शिकागो ही, जिसका वहुत तेजी से विकास हो रहा था, उसका केन्द्र वनता। लेकिन डगलस की कन्सास ग्रौर नेब्रास्का को 'प्रदेशो' (टेरिटरी) के रूप मे गठित करने की योजना तभी सफल हो सकती थी, जवकि उसे दक्षिण का भी समर्थन प्राप्त होता। (प्रदेश यानी 'टेरिटरी' का ग्रभिप्राय ऐसे भूभागो से है, जिनका शासन सयुक्त राज्य के हाथो मे रहने पर भी, जिन्हे ग्रभी तक राज्य यानी स्टेट का दर्जा प्राप्त नही हुग्रा है।)

किन्तु 1820 के मिसूरी समझौते के ग्रनुसार, जिसके द्वारा मिसूरी प्रदेश को गुलाम-प्रथा वाले राज्य के रूप मे सयुक्त राज्य मे प्रविष्ट किया गया था, यह निर्णय हो चुका था कि लुइसियाना के 36°-30' ग्रक्षाश के उत्तर मे ग्रवस्थित शेष भाग मे गुलाम-प्रथा का विस्तार नही होने दिया जाएगा। कन्सास ग्रौर नेब्रास्का भी इस उत्तरवर्ती क्षेत्र मे ही शामिल थे। इसलिए पश्चिम का इस क्षेत्र मे विस्तार दक्षिण के लोगो को कभी पसन्द नही ग्रा सकता था।

डगलस ने इस समस्या के हल के लिए एक ग्रौर तरीके से प्रयत्न किया। उसने ग्रपना प्रसिद्ध कन्सास-नेब्रास्का विधेयक काग्रेस मे पेश किया जिसमे मिसूरी समझौते को समाप्त करने ग्रौर नये प्रदेश के लोगो को स्वय यह

निर्णय करने का अधिकार देने के लिए कहा गया था कि वे 'स्वतन्त्र' राज्यो के रूप मे सयुक्त राज्य मे प्रवेश करना चाहते है या 'गुलाम-प्रथा वाले' प्रदेशो के रूप मे। विधेयक के अनुसार यह विशाल क्षेत्र इस आशा से दो भागो—कन्सास और नेब्रास्का—मे बाँटा जाना था कि पहले मे दक्षिण के लोगो का और दूसरे मे उत्तर के लोगो का प्राधान्य हो जाएगा।

इससे दक्षिण के सीनेटर तो सन्तुष्ट हो गए, परन्तु पश्चिम के बहुत-से सीनेटरो ने उसका जमकर विरोध किया। मध्य-पश्चिम के किसान यह मानकर चलते थे कि पश्चिम की ओर आगे बढने और फैलने का उन्हे पूर्ण अधिकार है। उस समय तक मध्य-पश्चिम के किसानो का कहना था कि यदि हर व्यक्ति को, जो पश्चिम जाकर कही बसा हो, 160 एकड वास-भूमि (होमस्टैड) मुफ्त देने की व्यवस्था कर दी जाय तो वे इस भूमि-नीति को स्वीकार कर सकते है। इसका अर्थ यह होता कि पश्चिमी प्रदेश मे सैकडो एकड भूमि की जो बडी-बडी जमीदारियाँ बन गई थी, उनमे से बहुत-सी वास-भूमियाँ किसानो को मुफ्त दे देनी पडती। वास्तव मे पश्चिम के किसान गुलाम-प्रथा के इतने अधिक विरोधी नही थे—बल्कि वे यह महसूस करते थे कि 160 एकड के वास-भूमि फार्म इतने छोटे हैं कि उनमे गुलामो को रखकर उनसे काम लिया ही नही जा सकता।

इस तरह विभिन्न पक्षो के बीच विवाद चलता रहा, किन्तु इस विवाद के बावजूद 1854 मे कन्सास-नेब्रास्का कानून पास हो गया। कानून पास होते ही उत्तर और दक्षिण दोनो ने कन्सास मे बसने के लिए अपने हजारो आदमी भेजने शुरु कर दिए, ताकि वे 'स्वतन्त्र प्रदेश' और 'गुलाम-प्रथा वाले प्रदेश' के बारे मे फैसला होने पर मत सग्रह मे अपने-अपने पक्ष को अपनी सख्या के बल से मजबूत कर सके। नतीजा यह हुआ कि कन्सास मे गुलाम-प्रथा के विरोधियो और समर्थको मे खूनी लडाई छिड गई। इस लडाई मे प्रारम्भ मे गुलाम-प्रथा की विरोधी ताकतो को अनेक बार मात खानी पडी, लेकिन अन्त मे गुलाम-प्रथा के कट्टर विरोधी जॉन ब्राउन द्वारा उत्तेजित और भडकाई गई इन ताकतो ने लडाई जीत ही ली और कन्सास एक 'स्वतन्त्र' राज्य के रूप मे 1861 मे सयुक्त राज्य मे शामिल हो गया।

कन्सास-नेब्रास्का कानून पास होने और दक्षिण द्वारा उत्तर और पश्चिम

के विकास को रोकने के लिए किये गए प्रयत्नो का परिणाम बडा उत्तेजना-जनक हुआ। 'प्रदेशो' मे गुलाम-प्रथा का विस्तार करने या न करने का प्रश्न एक राष्ट्रीय प्रश्न बन गया। डेमोक्रेटिक पार्टी के उत्तरी और दक्षिणी सदस्यो मे इस प्रश्न पर झगडा हो जाने से इस पार्टी का राष्ट्रीय रूप नष्ट हो गया और एक नये शक्तिशाली राजनीतिक दल के रूप मे रिपब्लिकन पार्टी का उदय हुआ। (जैफर्सन के जमाने मे जो रिपब्लिकन पार्टी थी वह इससे भिन्न थी। वही पार्टी काफी समय पूर्व डेमोक्रेट-रिपब्लिकन यानी डेमोक्रेटिक पार्टी बन गई थी)।

इलिनॉय का एक तरुण वकील अब्राहम लिकन इस नई पार्टी के नेताओ मे से एक था। अमेरिकन 'प्रदेशो मे गुलाम-प्रथा के विस्तार का रिपब्लिकन पार्टी की ओर से उसने तीव्र विरोध किया जिसका परिणाम यह हुआ कि उत्तर और पूर्व मे इस पार्टी को बहुत बडी सख्या मे समर्थक और अनुयायी मिल गए। इस नई पार्टी के उदय से गुलामी का प्रश्न, जो 1850 से पूर्व मुख्यत एक नैतिक और राजनीति-भिन्न प्रश्न था, राजनीतिक प्रश्न बनने लगा। पश्चिम के किसान, छोटे व्यवसायी और नये आवासी लोग, जिन्हे गुलाम-प्रथा से प्रतिस्पर्धा की आशका थी, इस नई पार्टी के समर्थक बन गए।

अब्राहम लिकन धीरे-धीरे इन लोगो का प्रवक्ता बन गया। सन् 1854 मे प्योरिया, इलिनॉय मे एक भाषण करते हुए लिकन ने कहा था कि "इन प्रदेशो को हमे स्वतन्त्र गोरे लोगो का निवास-स्थान बनाना है और अगर गुलामी का बीज उनके भीतर लाकर बो दिया गया तो वे स्वतन्त्र गोरो का निवास-स्थान कभी नही बन सकते। हमे गरीब गोरे लोगो को गुलाम राज्यो से हटाना है न कि उनमे ले जाकर बसाना। नये स्वतन्त्र राज्य ऐसे स्थान होगे, जहाँ जाकर गरीब लोग स्वतन्त्रता के साथ बस सके और अपनी स्थिति सुधार सके। इसी काम के लिए राष्ट्र को नये प्रदेशो की आवश्यकता है।" दो वर्ष बाद लिकन ने फिर कहा 'हमे गुलाम प्रथा वाले राज्यो के चारो ओर एक घेरा डाल देना चाहिए। तब यह घृणित प्रथा, अपने ही विष से मर जाने वाले [illegible] की तरह, स्वयं अपनी बदनामी से मर जाएगी।"

लिंकन की इस सीधी-सादी और सरल वाक्पटुता वस्तुतः शक्ति और बुद्धिमानि [illegible] का परिणाम यह हुआ कि 1860 मे रिपब्लिकन

पार्टी ने राष्ट्रपति पद के चुनाव के लिए उसे अपना उम्मीदवार मनोनीत किया। इसमे सन्देह नही कि रिपब्लिकन पार्टी के चुनाव आन्दोलन मे सबसे
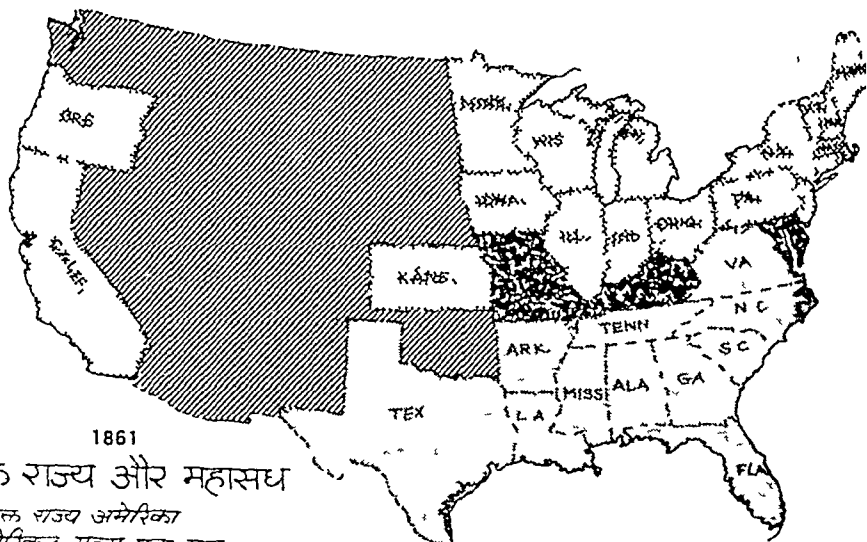
शक्तिशाली नारा था गुलाम-प्रथा के विस्तार का तीव्र विरोध। लेकिन उसके कार्यक्रमो मे कुछ और जबर्दस्त चीजे भी शामिल थी, जैसे किसानो को मुफ्त जमीन देना, उद्योगो की रक्षा के लिए सरक्षात्मक तटकर लगाना, रेल-मार्गो का निर्माण आदि आन्तरिक सुधार सघीय सरकार द्वारा कराना। इन कार्यक्रमो ने उत्तर मे भी इस पार्टी के वहुत-से नये समर्थक वना दिए। डेमोक्रेटिक पार्टी के दक्षिणी और उत्तरी सदस्यो मे आपस मे जो झगडा चल रहा था उससे रिपब्लिकन पार्टी की जीत सुनिश्चित हो गई और दक्षिण की स्थिति सयुक्त राज्य मे हमेशा के लिए अल्पसख्यक की हो गई।

दक्षिण के अभिमानी लोगो के गर्व को इससे वहुत चोट लगी और उन्होने सयुक्त राज्य से अलग होने और एक अमेरिकन राज्य महासघ (कन्फेडरेट स्टेट्स आॅफ अमेरिका) वनाने का निश्चय किया। नि सन्देह

दक्षिण के बहुत-से लोग यह समझते थे कि दक्षिण शान्ति से ही सयुक्त राज्य से अलग हो सकेगा। किन्तु उत्तर के लोग सघ से दक्षिणी राज्यो के विच्छेद को क्रान्ति या विद्रोह समझते थे। अपने प्रारम्भिक अभिभाषण मे लिकन ने दक्षिण मे सयुक्त राज्य की सरकार के अधिकार को बनाये रखने के अपने कर्त्तव्य पर बल दिया। उसने कहा—"मै समझता हूँ कि हमारा सघ (सयुक्त राज्य) विच्छिन्न नही हुआ है। और मैं शक्ति-भर इस बात का प्रयत्न करूँगा कि सघ के कानूनो का सभी राज्यो मे पूरी वफादारी से पालन हो।"

गृह-युद्ध का जो खतरा इन घटनाओ के दौरान मे निरन्तर काली घटा की भाँति राष्ट्र के सिर पर मडराता रहा था, वह अन्त मे एक दिन फॉर्ट सुमटर, दक्षिणी कैरोलाइना मे फूट ही पडा, जबकि वहाँ की सघीय सेना के कमाडर ने 12 अप्रैल, 1861 को राष्ट्रपति लिकन के कार्यालय से प्राप्त आदेश का पालन करते हुए अपना किला महासघ (कन्फेडरेट) की सरकार के हाथो मे सौपने मे इन्कार कर दिया। महासघ ने इस अवज्ञा का जवाब किले पर तोप का गोला चलाकर दिया। उस एक गोले के फटते ही सारे देश मे गृह-युद्ध की आग पूरी तरह फैल गई।

दोनो युद्ध-रत पक्षो ने जब इस महान् युद्ध के लिए अपने सब साधन सगृहीत करने प्रारम्भ किए तो उनमे अत्यधिक दयनीय असमानता थी। महासघीय राज्यो की कुल आबादी 90 लाख थी, जिसमे 35 लाख गुलाम भी शामिल थे, सयुक्त राज्य के अन्तर्गत राज्यो की आबादी 2 करोड 20 लाख थी। कुल 16 अरब डालर की सम्पत्ति मे से महासघीय राज्यो की सम्पत्ति 6 अरब डालर से ज्यादा नही थी और इसमे से भी एक तिहाई सम्पत्ति गुलामो की कीमत के रूप मे थी। दक्षिण के पास प्राय एक भी जहाज नही था, उनके निर्माण-उद्योग राष्ट्र के निर्माण-उद्योगो का पाँचवाँ भाग थे और उनमे फैली रेले देश के कुल रेल-मार्गों का एक-तिहाई भी मुश्किल से थी।

इन असमानताओ और कमजोरियो को देखते हुए दक्षिण का उत्तर को युद्ध के लिए ललकारना नितान्त मूर्खतापूर्ण प्रतीत होता था। किन्तु फिर भी कुछ बाते ऐसी थी, जो दक्षिण के लिए अधिक अनुकूल थी। दक्षिण की समाज-रचना सैनिक दृष्टि से अधिक अच्छी थी। वहाँ प्रशिक्षित सैनिक

अधिकारियो की सख्या बहुत बडी थी। यूरोपियन देशो की सहानुभूति दक्षिण की ओर ही थी और सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह कि दक्षिण एक बडे ध्येय को लेकर लडाई कर रहा था—वह ध्येय था एक खास ढग की सभ्यता की रक्षा करना।

उत्तर को अपने सामरिक साधनो का सग्रह करने मे जिस सबसे बडी और बुनियादी बाधा का सामना करना पडा वह थी अपनी शक्ति पर उचित से अधिक भरोसा। उत्तर के नेताओ ने अपने-आपको अधिक साधन-सम्पन्न देखकर यह समझ लिया था कि युद्ध तीन महीनो मे ही खत्म हो जाएगा। उत्तर के लोगो का यह अत्यधिक आत्म-विश्वास और दक्षिण के लोगो का साधनहीन होने पर भी ऊँचा हौसला—सम्भवत इन दोनो के सन्मिश्रण का ही यह परिणाम था कि यह खूनी युद्ध चार वर्ष तक चलता रहा।

उत्तर और दक्षिण, दोनो ने युद्ध के लिए पैसा जुटाने को ऋण लिये, नए कर जारी किये और दबादब कागजी मुद्रा चलाई। उत्तर मे ये तीनो उपाय अधिक कारगर हुए, वहाँ दो अरब डालर से अधिक राशि सरकारी बाडो से सग्रह की गई। करो से भी, जिनमे उत्पादन कर, आयात कर और आय-कर शामिल थे, 66 करोड 70 लाख डालर और प्राप्त हुए। लेकिन महासघ (दक्षिण) द्वारा जारी किये गए बाड बहुत सफल नही हुए। ये बाड आम तौर पर डालरो के बजाय रूई, तम्बाकू तथा अन्य जिन्सो के बदले मे बेचे जाते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि महासघ सरकार के पास जल्दी ही इन जिन्सो का भारी स्टाक जमा हो गया। करो से होने वाली प्राप्ति भी दक्षिण मे आम तौर पर निराशाजनक थी। अनुमान है कि महासघ को करो से 10 करोड डालर से अधिक की प्राप्ति नही हुई। दोनो सरकारो द्वारा जारी की गई कागजी मुद्रा का परिणाम यह हुआ कि उत्तर और दक्षिण दोनो मे आम मुद्रा-स्फीति हो गई। युद्ध समाप्त होने तक उत्तर के नोटो की कीमत गिरकर 40 सेंट प्रति डालर रह गई थी। लेकिन फिर भी दक्षिण मे ये नोट वहाँ के अपने नोटो की अपेक्षा, जिनकी कीमत तेजी से गिर रही थी, अधिक मूल्य पर चल रहे थे।

राष्ट्रीय विधान मडल से दक्षिण के सदस्यो के अलग हो जाने का परिणाम यह हुआ कि उत्तर के उद्योगपतियो और व्यवसायियो ने विधान मडल

से अपनी बातें बिना किसी कठिनाई के मनवा ली। वास्तव मे गृह-युद्ध के वर्षों मे एक ऐसी आर्थिक विचार-धारा की स्थायी विजय हुई जो देश के वाणिज्य और उद्योगो के विकास के लिए अत्यन्त अनुकूल और महत्त्वपूर्ण थी। इन वर्षों मे उद्योगो को सरक्षण देने के लिए आयातित वस्तुओ पर ऊँचे सघीय तटकर लगाये गए, महाद्वीप के एक छोर से दूसरे छोर तक रेल-लाइनें बिछाने वाली कम्पनियो को सघीय सरकार की ओर से सहायता दी गई, राज्यो के बैंको के बजाय एक राष्ट्रीय बैंक-प्रणाली स्थापित की गई, और वास-भूमि कानून (होमस्टैड ऐक्ट) भी, जिसकी पश्चिम के किसान एक अर्से से प्रतीक्षा कर रहे थे, अन्तत पास हो गया। उत्तर के व्यवसायी वर्ग और पश्चिम के व्यापारी कृषक वर्ग के बीच गठबन्धन पहले से कही अधिक सुदृढ हो गया।

गृह-युद्ध ने सयुक्त राज्य मे केवल औद्योगिक विकास को ही प्रगति नही दी, बल्कि गुलाम-प्रथा का भी अन्त कर दिया और दक्षिण की सारी अर्थ-व्यवस्था को आमूलचूल बदल दिया। युद्ध ख़त्म हो जाने पर दक्षिण इतना गरीब हो गया था कि उसकी आने वाली अनेक पीढियो का भविष्य अन्धकार-मय दीखता था। उसकी अर्थ-व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गई थी, उसकी चिर-अभिलषित सामाजिक परम्पराएँ और प्रथाएँ युद्ध के प्रवाह मे बह गई थी और सयुक्त राज्य से पृथक् होकर एक महासघ की स्थापना का उसका पवित्र ध्येय भी, जिसके लिए उसने इतने कष्ट सहे और कुर्बानियाँ की थी, हमेशा के लिए दफना दिया गया था। अब उसके लिए सिर्फ धीरे-धीरे पुनर्निर्माण करने का व्यथापूर्ण काम ही शेष रह गया था।

उदाराशय लिंकन को, जो युद्ध-जन्य कष्टो की पीडा को बहुत आन्तरिकता से महसूस करता था यह आशा थी कि वह दक्षिण के इस बोझ को कुछ हल्का कर सकेगा। इसलिए मार्च, 1865 मे दूसरी बार राष्ट्रपति बनने पर उसने अपने प्रारम्भिक भाषण की समाप्ति इन उदात्त भावनाओ की अभिव्यक्ति के साथ की थी—"किसी के भी प्रति द्वेष और दुर्भावना मनमे लाये बिना, सब के प्रति उदारता बरतते हुए, और भगवान् हमे जिसे सत्य समझने की प्रेरणा देता है उसमे दृढ आस्था रखते हुए हमे अपने सम्मुख उपस्थित कार्य को पूर्ण करने का प्रयत्न करना चाहिए। वह कार्य है राष्ट्र के

घावो को मरहम-पट्टी करना, जिन लोगो ने युद्ध का भार वहन किया उनकी विधवाओ और अनाथ वच्चो की देख-भाल करना और ऐसे सव काम करना जिनसे हममे परस्पर भी और अन्य सव राष्ट्रो के साथ भी न्यायपूर्ण और स्थायी शान्ति वनी रह सके।"

लेकिन इस देश के एक महानतम सपूत के नेतृत्व मे कटुताहीन पुन-र्निर्माण की यह आकाक्षा और आशा पूरी होने वाली नही थी। अप्रैल, 1865 मे लिंकन की हृदय-विदारक हत्या ने इस आशा को धूल मे मिला दिया कि राष्ट्र का यह दूसरा जन्म शान्ति से और विना किसी कटुता के सम्पन्न हो सकेगा। वास्तव मे यह कार्य इतना कठिन था कि जिस लिंकन ने युद्ध के अँधियारे वर्षो मे सयुक्त राज्य का सफल नेतृत्व किया था, उसके जीवित और सत्तारूढ रहने पर भी आसानी से न हो सकता। और उसके चले जाने पर तो वह असम्भव ही हो गया।

पुनर्निर्माण और पुनरुत्थान

महान् मुक्तिदाता की हत्या के बाद उपराष्ट्रपति ऐंड्र्यू जॉनसन व्हाइट हाउस मे राष्ट्रपति के रूप मे पदारूढ हुए। उनका विचार लिकन की योजना के अनुसार दक्षिण के पुनर्निर्माण के कार्य को पूरा करने का था। लेकिन जॉनसन उन उग्र रिपब्लिकनो को भूल गए थे, जो यह अनुभव करते थे कि दक्षिण को अपने विद्रोह की पूरी कीमत चुकानी चाहिए।

धीरे-धीरे कांग्रेस (ससद्) के अधिकतर सदस्य भी इन उग्र रिपब्लिकनो के विचार की ओर ही झुकने लगे, जिससे राष्ट्रपति और उनके राजनीतिक शत्रुओ के बीच सघर्ष उग्रतर होता गया। अन्त मे 1868 मे ऐंड्र्यू पर अपने पद के दुरुपयोग का महाभियोग लगाया गया। जॉनसन ही सयुक्त राज्य का पहला और एकमात्र राष्ट्रपति था, जिस पर राष्ट्रीय विधान मडल के उच्च सदन मे महाभियोग लगाया गया और जिसे अभियुक्त के रूप मे सदन मे खडा किया गया। सीनेट मे काफी गर्मागर्म बहस के बाद मत लिये जाने पर उसे राष्ट्रपति पद से हटाने के लिए केवल एक मत की कमी रह गई।

इस बीच एक पुनर्निर्माण कार्यक्रम के परिणामस्वरूप दक्षिण से पूरी तरह घुटने टिकवा दिये गए थे। उत्तर की सेना ने दक्षिण पर अधिकार कर लिया था, राज्यो की विधान-सभाओ से 'पुराने दक्षिण' के सब अनुदार तत्त्वो का सफाया कर दिया गया था और तमाम नीग्रो लोगो को भी नागरिक अधिकार प्रदान कर दिये गए थे। इस सबका परिणाम यह हुआ कि दक्षिण मे एक तरह की राजनीतिक अराजकता पैदा हो गई।

जो लोग पहले गुलाम थे, वे जब बिना किसी अनुभव के एकाएक ऊपर उठाकर राजनीति मे धकेल दिये गए, तो उत्तर के राजनीतिज्ञो ने, जिनका कोई उसूल नही था, उनसे मनमाना लाभ उठाने का प्रयत्न किया। धोखा-धडी और रिश्वतखोरी आम चीजे हो गई और बिना किसी शर्म-हया के किये गए अपव्यय से देखते-देखते राज्यो और नगरपालिकाओ के कोश

खाली हो गए। भूतपूर्व महासघ के ग्यारह राज्यो पर भारी कर्ज लाद दिये गए। सन् 1868 के वाद के छ वर्षों मे उनके क़र्जे 10 करोड डालर और वढ गए।

फिर भी दक्षिणी राज्यो ने मजवूर होकर जो नए सविधान वनाए वे उनके पुराने सविधानो की अपेक्षा कही अधिक लोकतन्त्रीय थे। अन्तत वे एक अधिक सुचारु शासन का आधार प्रस्तुत करते थे। अनेक दक्षिणी राज्यो मे मुफ्त सार्वजनिक शिक्षा, धर्मार्थ सस्थाओ की स्थापना और नीग्रो किसानो की सहायता आदि के प्रगतिशील कानून पास किये गए। यद्यपि इन राज्यो मे लोकतन्त्र का स्वरूप वहुत अपरिपक्व था, फिर भी लोकतन्त्र सक्रिय अवश्य हो उठा था।

किन्तु इन सामाजिक प्रगतियो के वावजूद, इस वात से इन्कार नही किया जा सकता कि उत्तर के अधिकारियो द्वारा ऊपर से लादा गया यह पुर्ननिर्माण कार्यक्रम असफल रहा। नागरिक अधिकारो को सगीन के वल से लागू करने के कार्यक्रम ने निस्सन्देह जातीय विद्वेष और तनाव पैदा किया। यदि गुलामी से मुक्त लोगो को यह समझाने का प्रयत्न किया जाता कि स्वाधीन होने से उन पर क्या जिम्मेदारियाँ आ गई है और उन्हे क्या विशेपाधिकार प्राप्त हुए है तो यह तनाव आहिस्ता-आहिस्ता कम हो जाता। इसके अतिरिक्त पुर्ननिर्माण की कठिनाइयो ने दक्षिण की समस्त गोरी आवादी को रिपब्लिकन पार्टी का कट्टर विरोधी और डेमोक्रेटिक पार्टी का समर्थक वना दिया। इस प्रकार गृह-युद्ध के वाद की पुर्ननिर्माण नीतियो के कारण दक्षिण के लोगो को जो कष्टपूर्ण वर्प विताने पडे, उनसे दक्षिण डेमोक्रेटिक पार्टी का ठोस समर्थक वन गया और वहाँ जातीय तनाव वढ गया। यह स्थिति आज तक उसी तरह चली आ रही है।

दक्षिण के आर्थिक पुर्ननिर्माण की दिशा मे सवसे पहला कदम था ज़मीन को उत्पादक उपयोग मे फिर से लगाना। गुलाम-प्रथा के खत्म हो जाने से यह काम वहुत पेचीदा हो गया। कल तक, जो लोग गुलाम थे, वे रातो-रात स्वतन्त्र हो गए थे और अधिकतर गुलामो ने, पहले-पहल स्वतन्त्रता का अर्थ कुछ न करने का अधिकार समझा था। नतीजा यह हुआ कि एक ओर ज़मीन श्रमिको के अभाव मे वेकार पडी थी और दूसरी ओर नीग्रो लोग अपने

'अधिकारों' का अधिकतम उपभोग करने के लिए देहातों में व्यर्थ चक्कर लगा रहे थे।

बेचैन नीग्रो श्रमिक लोग जब अपने घरों पर फिर से लौटे भी तो यह समस्या पैदा हो गई कि उन्हें काम की मजदूरी कहाँ से दी जाय। बहुत कम जमींदारों के पास मजदूरी देने लायक पैसा बचा था। इसलिए खेती की सबसे अच्छी प्रणाली यही रह गई कि मजदूरों को फसल की उपज में से हिस्सा दिया जाय। इस प्रणाली के अन्तर्गत जमींदार मजदूरों को कोई मजदूरी नहीं देता था और मजदूर जमीन का कोई लगान नहीं देते थे और दोनों मिलकर फसल की उपज में से हिस्सा बँटा लेते थे। इसके बावजूद जमीन के मालिक के लिए अनेक बार यह जरूरी हो जाता था कि वह बीज, औजार या अन्य वस्तुओं के लिए कर्जा ले। इस तरह युद्ध से पहले फसल को बन्धक रखने की जो प्रणाली प्रचलित थी वह युद्ध के बाद दक्षिण में और भी दृढ़ता से बद्धमूल हो गई।

फसल की हिस्सा-बटाई के कई नुकसान भी थे—इनमें से एक नुकसान कपास का आवश्यकता से अधिक उत्पादन था, जो एक पुरानी समस्या बन गया था—और इसमें सन्देह नहीं कि यह प्रणाली अपनी उपयोगिता समाप्त हो जाने पर भी चलती रही, लेकिन इसका एक लाभ भी हुआ और वह यह कि इससे दक्षिण की बेकार पड़ी जमीन में फिर खेती होने लगी।

जमींदारियों के तबाह हो जाने पर जमींदार वर्ग के बहुत-से लोगों को जीवन-यापन के दूसरे तरीके अपनाने पड़े। इसका एक परिणाम यह हुआ कि इन लोगों ने दक्षिण में उद्योगों की स्थापना के लिए संगठित होकर प्रयत्न

कोई भी राज्य ऐसा कानून नहीं बना सकेगा जिनसे संयुक्त राज्य के नागरिकों के अधिकार या कानूनी प्रतिरक्षण सीमित होते हों और न ही कोई राज्य बिना कानूनी कार्रवाई के किसी व्यक्ति को उसके जीवन, स्वतन्त्रता या सम्पत्ति से वंचित कर सकेगा ..

—1868 में संयुक्त राज्य के संविधान में किया गया 14वाँ संशोधन

किया यद्यपि पूँजी के अभाव से दक्षिण के व्यवसायियो को अपने क्षेत्र के उपलब्ध साधनो को विकसित करने मे काफी कठिनाइयो का सामना करना पडा, तो भी वहाँ निर्माण-उद्योग स्थापित करने मे पर्याप्त प्रगति हुई। वर्मिघम, अलावामा, जो युद्ध से पूर्व कपास-उत्पादक क्षेत्र था, शीघ्र ही लोहे का सामान तैयार करने का एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र वन गया। सूती वस्त्र, लोहा और इस्पात, लकडी की चिराई और फर्नीचर तथा तम्वाकू की चीज़ो का निर्माण आदि शीघ्र ही दक्षिण के महत्त्वपूर्ण उद्योग वन गए। सन् 1900 तक करीव एक अरव डालर की राशि दक्षिण के निर्माण-उद्योग मे लग चुकी थी।

वैसे सारे देश मे कुल मिलाकर निर्माण-उद्योगो की और भी अधिक उन्नति हुई। गृह-युद्ध प्रारभ होने से पूर्व तक देश के मुख्य धन्धे कृषि और वाणिज्य ही थे। सिर्फ न्यू इग्लैड और मध्य अटलाटिक राज्यो के कुछ भाग ही ऐसे थे, जहाँ उद्योग स्थापित थे। लेकिन 1890 तक स्थिति वदल गई और कारखानो मे निर्मित वस्तुओ का मूल्य कृषि-उत्पादनो के मूल्य से अधिक हो गया। दस वर्ष वाद तो वह कृषि-उत्पादनो के मूल्य से दुगुना हो गया। सन् 1860 मे सयुक्त राज्य मे कारखानो मे निर्मित वस्तुओ का मूल्य 1 9 अरव डालर था, परन्तु 1890 तक वह इससे सात गुना हो गया।

वीसवी सदी प्रारम्भ होने से पहले के दो दशको मे कोयले का उत्पादन 6 3 करोड टन वार्पिक से वढकर चार गुना हो गया। इसी अवधि मे शोधित तेल का उत्पादन तीन गुना और ताँवे का उत्पादन दस गुना हो गया और लोहे तथा इस्पात का उत्पादन भी चौगुना होकर 1900 तक तीन करोड टन वार्पिक हो गया।

इस औद्योगिक उन्नति मे योग देने वाले अनेक कारणो मे से एक महत्त्व-पूर्ण कारण था—रेलमार्गो के जाल का देश-भर मे विस्तार। सन् 1843 से 1893 तक के काल को 'रेल पूँजीवाद का युग' कहा जा सकता है। इन पचास वर्षो मे अमेरिका की रेल-मार्ग प्रणाली ससार मे सवसे वडी प्रणाली हो गई। रेल लाइनो की लम्वाई 1865 से 1873 तक दुगुनी हो गई, जव कि इस अवधि मे रेलो मे लगी पूँजी की मात्रा 1 2 अरव डालर से वढकर

3 7 अरब डालर हो गई। सन् 1880 के दशक मे 73,000 मील लम्बी रेल लाइने और भी बनाई गई और 1914 तक सयुक्त राज्य की रेल लाइनो का विस्तार यूरोप के समस्त राष्ट्रो की रेल लाइनो की कुल लम्बाई से भी अधिक हो गया।

रेले केवल सामान के परिवहन का ही साधन नही थी, वे अपने-आप मे एक बडा बाजार भी थी। सन् 1870 के दशक मे राष्ट्र के कुल पूंजी निर्माण का 20 प्रतिशत रेलो मे हुआ था और उससे अगले यानी 1880 के दशक मे यह मात्रा 15 प्रतिशित थी। रेलो को इजनो, डिब्बो, मशीनरी, लोहा और इस्पात, लकडी और कोयले की भारी मात्रा मे आवश्यकता थी, इसलिए रेलो ने अन्य पूंजीगत सामग्रियो के उद्योगो को भी बढावा दिया। राष्ट्रीय आय तेज़ी से बढी और देश की तेजी से बढ रही श्रम शक्ति के लिए नये काम और रोजगार उपलब्ध हुए। आमदनी बढने से उपभोग्य वस्तुओ के उद्योगो को भी प्रोत्साहन मिला।

सयुक्त राज्य का औद्योगिक विकास, 1859-1899

इस्पात उद्योग एक ऐसे विशाल उद्योग का उदाहरण है, जो एक तरह से सिर्फ रेलो की आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए ही स्थापित हुआ। सन् 1879 मे सयुक्त राज्य मे उत्पादित इस्पात का तीन-चौथाई भाग केवल रेल की पटरियाँ बनाने मे ही प्रयुक्त हुआ। सन् 1885 मे इस्पात से बने डिब्बो ने रेलो की परिवहन क्षमता को बढा दिया। पहले लकडी के डिब्बे जहाँ सात या आठ टन माल ले जा सकते थे, वहाँ इस्पात के नये डिब्बे तीस टन माल ले जाने लगे। सन् 1900 तक इस्पात के रेल के डिब्बो की

परिवहन क्षमता वढकर चालीस और पचास टन के वीच हो गई। इस्पात उद्योग मे मुनाफा इतना ऊँचा था कि वहुत-से इस्पात निर्माता वाहरी पूंजी की मदद के विना अपने ही मुनाफे से अपना उत्पादन वढाने मे सफल हो सके।

रेलो मे स्थावर सम्पत्ति वहुत वडी मात्रा मे लगती हे और अनिवार्य खर्चे भी वहुत ऊँचे होते है, इसलिए उनमे प्राइवेट लोगो का व्यक्तिगत रूप मे पूँजी लगा सकना सम्भव नहीं था। दूर दृष्टि से न देखने पर अक्सर ऐसा लगता था कि रेलो का सचालन खतरनाक और घाटे का सौदा है। खासकर कम आवादी वाले और कम विकसित क्षेत्रो मे तो ऐसा और भी अधिक लगता था। इसलिए रेल-मार्ग स्थापित करने वालो ने इस खतरनाक काम के लिए पूँजी जुटाने के लिए साहसपूर्वक कम्पनियो का निर्माण किया, ताकि उसमे किसी एक व्यक्ति के वजाय वहुत-से व्यक्ति अपनी पूंजी लगाने का खतरा मोल ले सके।

किन्तु दुर्भाग्य से अक्सर ये कम्पनियाँ उनके सस्थापको के व्यक्तिगत उद्देश्यो की पूर्ति के लिए पूँजी जुटाने के वास्ते वाहरी दिखावा मात्र थी। जे गोल्ड, जिम फिस्क और कॉर्नेलियस वाडरविल्ट आदि के नाम 'रेल पूंजीवाद' के उस 'स्वर्ण युग' के महादैत्यो मे आज भी लिए जाते है, जव कि वडे पूँजीपति सरकार की ओर से कोई भी रोक-टोक और नियन्त्रण न होने के कारण देश की अर्थ-व्यवस्था के एक वडे भाग पर निर्विघ्न होकर शासन करते थे।

उद्योगपति और व्यवसायी लोग विना किसी हिचकिचाहट के मनमाने व्यापारिक हथकडो से विशाल धन राशियाँ कमाकर या गँवाकर उनके वारे-न्यारे करते थे। इनमे से वहुत-से व्यापारिक सौदो मे सार्वजनिक हित की भारी अवहेलना की जाती थी। एरी रेलरोड कम्पनी के शेयरो के एक सनसनीखेज सौदे के वाद जिम फिस्क ने निर्लज्जता से टिप्पणी करते हुए कहा था, "इस सौदे मे इज्जत के सिवाय और किसी चीज का नुकसान नही हुआ।" इसी तरह एक अन्य मौके पर कमोडोर वाडरविल्ट ने भी इसी तरह की निर्लज्ज विचाराधारा का प्रतिपादन करते हुए उच्छृखलता से कहा था, "कानून की मुझे क्या परवाह है ? मेरे हाथ मे क्या ताकत नही है ?"

आज यह विचारधारा नैतिक दृष्टि से हमे कितनी ही भयकर क्यो न लगे, लेकिन उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे अमेरिकन जन-जीवन मे जो सक्रियता और गतिमयता थी, उसकी पृष्ठभूमि मे देखने पर उसमे कोई अशोभनीयता प्रतीत नही होगी। दौलत पैदा करने के लिए उस समय इतना विशाल क्षेत्र पडा था कि बहुत कम लोगो ने इससे पूर्व इसकी कल्पना की होगी। उन्नति करने और धन कमाने के अवसर इतने विशाल और विस्तीर्ण थे, और एक क्षेत्र मे असफल हो जाने पर दूसरे क्षेत्र मे प्रयत्न न करने के लिए भी कोई कारण नही थे, इसलिए राष्ट्र की साधन-सम्पदा के विकास और दोहन के लिए तरह-तरह के परीक्षण करना अनुचित नही कहा जा सकता था।

इसलिए नैतिक व्यवहार का जो मानदड किसी अधिक सुसगठित और अधिक सुस्थिर समाज मे असह्य समझा जाता, वही उस जमाने के कम सगठित और कम स्थितिशील अमेरिकन समाज के लिए उपयोगी बन गया। क्योकि आखिर इस अनैतिक विचारधारा से रेले बन तो गई और पश्चिम की ओर खूब विस्तार भी हो सका। जिस तरह गृह-युद्ध से पूर्व बैंकिग-व्यवसाय मे हुई अनैतिक ज्यादतियो को हम उनसे हुए पश्चिम के विकास को दृष्टि मे रखकर क्षम्य समझ लेते हैं, वैसे ही रेल-निर्माण के क्षेत्र मे हुई अनैतिक स्वार्थसाधक ज्यादतियो को भी हमे उसी प्रकार के उपयोगितावादी पैमाने से देखना होगा।

यदि सयुक्त राज्य मे उपलब्ध सीमित प्राइवेट आन्तरिक पूँजी पर ही भरोसा किया जाता और विदेशी पूँजी और सरकार के धन की सहायता न ली जाती तो सयुक्त राज्य मे रेलो का यह विशाल साम्राज्य कभी स्थापित न हो पाता।

सन् 1850 के दशक से ब्रिटेन, हालैड, जर्मनी, स्विट्जरलैड और फ्रास के पूँजीपतियो ने अमेरिकन रेल-कम्पनियो के शेयर खरीदने प्रारम्भ किये। विदेशी पूँजी-निवेश की इस सहायता ने रेल-निर्माण मे समय-समय पर आने वाली तेजी को कायम रखा। इससे अमेरिका की देशी पूँजी पर पडने वाला दबाव कुछ कम हुआ और उसे अमेरिका के अन्य उद्योगो मे लगाने का रास्ता साफ हो गया।

स्थानीय राज्यीय, और सघीय सरकारो ने रेल-कम्पनियो मे पूँजी का निवेश करने के साथ-साथ अन्य कई रूपो मे भी उनकी सहायता की। सरकारी ज़मीनो का अनुदान, रेल-कम्पनियो के बाडो की खरीद, बन्धक ऋण और रेलो के लिए उपहार के रूप मे दी गई धनराशियाँ, इन सबने मिलकर रेल-कम्पनियो की पूँजी की 'भूख' को कुछ शान्त किया। यह अनुमान लगाया गया है कि 1870 से पूर्व रेलो के निर्माण के कुल खर्च का, जिसमे ज़मीनो के अनुदान शामिल नही है, 40 प्रतिशत भाग सरकारी स्रोतो से ही पूरा होता था।

सघीय सरकार की दिलचस्पी खासतौर से महाद्वीप के एक तट से दूसरे तट तक देश के आरपार रेलो की स्थापना मे थी। सन् 1850 से 1871 तक रेलो के बारे मे जो सघीय कानून पास हुए उनमे महाद्वीप के आरपार रेले बिछाने वाली कम्पनियो को मार्ग का अधिकार और लकडी, मिट्टी, पत्थर और काफी भूमि खडो के उपयोग की खुली छूट दी गई। सब मिलाकर इन रेल-कम्पनियो को वित्तीय सहायता तो काफी दी ही गई, साथ ही सघीय सरकार ने उन्हे 15 करोड एकड से अधिक भूमि भी दी। यह भूमि न्यूयार्क, पेनसिलवेनिया और न्यू इग्लैड के कुल क्षेत्रफल के बराबर थी।

सयुक्त राज्य मे रेलो के इस समूचे विकास ने पश्चिम की कृषि के विकास को काफी प्रभावित किया। वास्तव मे रेलें पश्चिम के विकास के लिए बहुत अधिक हद तक जिम्मेदार थी। कृषि-उत्पादनो को फार्मो से मडियो तक पहुँचाने के लिए परिवहन के साधन न रहने पर किसानो के लिए पश्चिम के नए-नए क्षेत्रो मे प्रवेश करना और उन्हे आबाद करना कदापि सम्भव न होता, इसलिए नए सीमावर्ती क्षेत्रो के कितने ही लोगो ने रेल कम्पनियो के शेयर खरीदे ताकि वहाँ रेलो के विकास और विस्तार को प्रोत्साहन दे सके। कुछ किसानो ने इस काम के लिए अपनी ज़मीने तक बन्धक रख दी।

किन्तु इसके बाद ऐसा वक्त आया कि किसान रेल-कम्पनियो के हाथो मे मौजूद शक्ति के विरुद्ध विद्रोह करने लगे। कारण यह था कि रेल-कम्पनियो को मुफ्त ज़मीन के रूप मे सघीय और राज्यीय सरकारे जो सहायता दे रही थी, उससे वे वास-भूमि कानून के अनुसार नई भूमि पर

आबाद हो रहे किसानो की जमीनो पर दखल करने लगी थी। किसानो और रेल-कम्पनियों के झगड़े का दूसरा कारण यह था कि गृह युद्ध के बाद से गेहूँ और आटे की कीमतें तो बराबर बहुत नीची चली आ रही थी, लेकिन रेल भाड़े की दरें बहुत ऊँची थी। इसके अलावा राजनीतिक शक्ति किसानों के हाथ मे निकलकर धीरे-धीरे देश के व्यवसायी वर्ग के हाथ मे जा रही थी। जे० गोल्ड और जिम फिस्क जैसे रेल-कम्पनियों के सचालको ने अपने स्वार्थ साधन के लिए जो अनियमित कार्रवाइयाँ और गड़बड़ें की, उनकी खबरें फैलने पर किसानो का बिगड़ उठना और उद्योग जगत् के नए दैत्यों की शक्ति को सीमित और नियन्त्रित करने के लिए आन्दोलन करना स्वाभाविक ही था।

यह 'किसानो का विद्रोह' अमेरिका के विकास के इतिहास मे इस की अभिवृद्धि की पहली शताब्दी के अन्तिम वर्षों का एक अन्य अध्याय है।

नये भूमि-क्षेत्रों में प्रवेश का अन्त

पश्चिमी सीमा-क्षेत्रो को 1860 से 1900 तक धीरे-धीरे जिस ढग से सयुक्त राज्य मे मिलाया गया, वह एक कठोर यथार्थता की एक रोमाचकारी तस्वीर हमारे सामने प्रस्तुत करता है। 'ग्रेट प्लेन्स' (विशाल मैदान) हमारे मानस पर मूल निवासी इडियनो और नए अधिवासियो के सघर्ष, कोलोराडो और नेवडा के खनिज नगरो की अपरिपक्व वैयक्तिकता, टेक्सास के चरवाहो की कन्सास के रेल-डिपो तक की लम्बी यात्राओ, और अर्ध-मरुस्थलीय मैदानो मे प्रकृति के साथ अग्रणी किसानो के सघर्ष का रोमाचकारी चित्र खीच देते है।

इस युग की जो तस्वीर हमारे सामने है, वह चाहे यथार्थवादी हो, चाहे काल्पनिक, पश्चिम की ओर प्रगति को अभिरूपित करने वाले सक्रिय और गतिशील पूंजीवाद पर ही आवृत है।

अटलाटिक तट से मिसिसिपी घाटी तक सभ्यता के प्रसार, नई आवादियो की स्थापना और स्थिर आर्थिक विकास की प्रक्रिया मे पूरी दो शताब्दियाँ लगी। ग्रेट प्लेन्स मे, जो क्षेत्र की दृष्टि से अधिक विशाल, किन्तु कम आकर्षक थे, नई आवादियाँ वसने और उनके स्थायी होने मे चालीस वर्ष से भी कम समय लगा। गृह-युद्ध के वाद के जमाने मे उद्योगो और रेलो का जो भारी विकास हुआ, उसके विना इस प्रदेश का इतनी तेजी से आवाद और विकसित होना कभी सम्भव न होता।

पश्चिम मे रेल-मार्गो ने सिर्फ वाजारो और मडियो को ही एक-दूसरे के नजदीक नही पहुँचाया, वल्कि उन्होने नई वस्तियाँ आवाद करने और नये उद्योग-व्यवसाय स्थापित करने के लिए भी प्रोत्साहन दिया, ताकि रेल कम्पनियो ने रेलो के विस्तार मे जो धन-निवेश किया है, वह सुरक्षित रहे और निरन्तर वढता रहे। औद्योगिक विस्तार ने पूर्व मे शहरो के विस्तार और

> ग्रीक लोगो के लिए रीति-रिवाज और व्यापार की सीमाओ और वन्धनो को तोडकर, नये अनुभवो के द्वार खोलकर और नई-नई परम्पराओ, प्रथाओ और प्रवृत्तियो का आह्वान देकर, भूमध्यसागर ने जो महत्त्व प्राप्त किया, वही महत्त्व, वल्कि उससे भी अधिक महत्त्व सयुक्त राज्य के लिए, और अप्रत्यक्षतः समूचे यूरोप के राष्ट्रो के लिए, निरन्तर पीछे हटती और सिकुडती सीमाओ ने प्राप्त किया हे।
>
> —फ्रेडरिक जैक्सन टर्नर, 1893

अभिवृद्धि को वढावा दिया, और उससे ग्रेट प्लेन्स के किसानो को अनाज और पशु-पालको को माँस की विक्री के लिए अच्छे वाजार उपलव्ध हुए।

परिवहन और उद्योग मे हुई इन क्रान्तियो ने किसान की हर वात मे पूर्णत आत्म-निर्भर और अपने मे ही सीमित रहने की प्रवृत्ति को आहिस्ता-आहिस्ता खत्म कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि पश्चिम मे नये-नये क्षेत्रो मे कृषि के विस्तार को ही सार्वकालिक आर्थिक पुनरुद्धार और विकास का प्रतीक मानने की प्रवृत्ति का भी अन्त होने लगा। इसका अनुमान इस वात से लगाया जा सकता है कि सयुक्त राज्य की कुल आवादी मे किसानो की आवादी का अनुपात क्रमश कम होने लगा। सन् 1820 मे 83 प्रतिशत आवादी खेती के काम मे लगी थी, किन्तु 1860 मे यह अनुपात गिरकर 60 प्रतिशत रह गया। सन् 1918 मे इसमे और भी ह्रास हुआ और 30 प्रतिशत हो गया। आज कुल आवादी का सिर्फ 11 प्रतिशत ही खेती मे लगा है।

उद्योगो और शहरो के द्रुत विकास से और उनके साथ ही आवादी के एक वडे भाग के खेती के धन्धे और गाँवो से हटकर उद्योगो और शहरो मे चले जाने से किसानो का अपनी उपज की विक्री के लिए वाजारो के वारे मे दृष्टिकोण वहुत वदल गया। उद्योगो के विकास ने कृषि-जिन्सो की माँग वढी और व्यापारिक फसलो की खेती पर अधिक वल दिया जाने लगा। इससे किसान अपनी आवश्यकता-पूर्ति और आत्म-निर्भरता के लिए हर तरह की जिन्सें पैदा करने के वजाय खास-खास जिन्सो के उत्पादन मे विशेषज्ञता

प्राप्त करने लगे। इससे किसानो की आत्मनिर्भरता की प्रवृत्ति और भी कम होने लगी।

इतिहासकार हैरी कारमैन और हैरल्ड सिरेट ने लिखा है कि "आत्म-निर्भर गॉव धीरे-धीरे नष्ट होने लगे और उनके स्थान पर व्यावसायिक किसान पैदा हो गए जो अपने उपभोग के लिए दूसरो से सामान खरीदते थे और उसके बदले मे दूसरो को अपनी उपज वेचते थे।" व्यावसायिक किसान की आजीविका अब मुख्यत प्रकृति के साथ उसके सघर्ष पर ही निर्भर नही थी, "क्योकि उसका मुनाफा अब केवल प्रकृति के वरदान पर ही निर्भर नही था, बल्कि ढुलाई के भाडो, विश्व की मॉग, और उपलब्धि की स्थिति और द्रव्य बाजार की हालत पर भी निर्भर होता था।"[1]

सरकारी जमीनो की बिक्री के कानून और भूमि वितरण के वास्तविक ढॉचे ने ग्रेट प्लेन्स मे व्यापारिक कृषि के द्रुत विस्तार को कायम रखा। यह एक विशेप दिलचस्पी की बात है कि ग्रामीण और शहरी सुधारो के समर्थको ने किसानो को मुफ्त जमीने देने के लिए वर्पो तक आन्दोलन करके 1862 मे जो वासभूमि कानून (होमस्टैड ऐक्ट) पास कराया, उसका महत्त्व बहुत मामूली था। ग्रेट वैस्ट (पश्चिम का विशाल प्रदेश) की बहुत थोडी जमीन ही वासभूमियो के रूप मे किसानो को मिली। सन् 1890 से पूर्व वास-भूमि प्राप्त करने के इच्छुक हर तीन किसानो मे से दो प्रयत्न असफल हुए।

ऐसा क्यो हुआ? पहली बात यह है कि फार्म की स्थापना इतनी महँगी पडती थी कि वास-भूमि प्राप्त करने मे कोई लाभ नही था और काग्रेस ने वास-भूमि प्राप्त करने वाले किसानो को आर्थिक सहायता देने की कोई व्यवस्था नही की थी। इसके अलावा किसानो ने जल्दी ही यह अनुभव कर लिया कि यद्यपि जगली और नम इलाको मे 160 एकड भूमि जीवन-निर्वाह के लिए पर्याप्त है, परन्तु ग्रेट प्लेन्स के अर्ध-मरुस्थली प्रदेश मे वह काफी नही हो सकती। इसके अतिरिक्त कानून की कुछ धाराएँ और उनमे किये गए कुछ सशोधन ऐसे थे जिनसे ज़मीनो का सट्टा और मुनाफा-खोरी करने वालो और अन्य गैर-अधिवासियो को धोखाधडी करने का

1 'ए हिस्ट्री ऑफ दि अमेरिकन पीपल' खड 1, न्यूयार्क, ऐल्फ्रेड ए क्नोप, 1952।

मौका मिलता था।

वास्तव मे गृह युद्ध के बाद भूमि वितरण का ढग कुछ ऐसा था कि उससे किसानो को जरा भी फायदा नही था। वास-भूमि कानून को छोडकर और जितने भी भूमि-सम्बन्धी कानून बनाये गए, उनसे अनधिवासी भू-स्वामियो के हाथ मे बहुत-सी जमीन चली गई। उदाहरण के लिए किसानो के हाथो मे जितनी 'मुफ्त जमीन' थी उससे चार गुनी मुफ्त जमीन रेल-कम्पनियो के हाथ मे थी।

अन्य कानूनो के अन्तर्गत राज्यो को भी कृषि-शिक्षा के विस्तार के लिए बहुत-सी जमीने मिल गई और इडियनो के लिए सुरक्षित रखी गई बहुत-सी जमीन भी सटोरियो के हाथो मे चली गई। और इस सारी अवधि मे सघीय सरकार ने नकद मूल्य लेकर जमीने बेचना भी जारी रखा। इस प्रकार सब मिलाकर 10·8 करोड एकड जमीन इस ढग से बेची गई।

कन्सास, नेब्रास्का और उत्तरी एव दक्षिणी डकोटा राज्यो मे दस हजार एकड से छ लाख एकड तक के विशाल भूखड सटोरियो और भूमि का व्यवसाय करने वाली कम्पनियो को बेचे गए। उदाहरण के तौर पर 1886 मे 26 विदेशी सिडिकेटो और व्यक्तियो के पास सयुक्त राज्य मे करीब 2 1 करोड एकड जमीन थी। इसी तरह इमारती लकडी की 11 फर्मों के पास जगलात की 1 2 करोड एकड जमीन थी।

कृषि-उपकरणो मे सुधार, व्यापारिक उर्वरको के उपयोग और अर्ध-मरुस्थली जमीनो मे खेती की विशिष्ट पद्धतियो ने जमीन की उपज और खेत-मजदूर की उत्पादकता, दोनो मे ही काफी वृद्धि की। सन् 1860 से 1900 तक खेती की मशीनरी मे लगाई गई पूँजी तिगुनी हो गई। सन् 1900 की अपेक्षा सन् 1830 मे एक बुशल गेहूँ उपजाने मे 18 गुना अधिक मानवीय श्रम लगता था। इस प्रकार 1870 से 1900 तक खेतिहर आबादी मे कमी हो जाने पर खेत मजदूर की उत्पादकता बढ जाने से कृषि की उपज मे कमी के बजाय वृद्धि ही हुई। उदाहरण के लिए 1860 मे मक्का की खेती करने वाले किसानो ने 80 करोड बुशल उत्पादन किया, किन्तु 1915 मे यही उपज बढकर साढे तीन गुनी हो गई।

लेकिन उत्पादन मे इस भारी वृद्धि से नई तर्ज के व्यावसायिक किसानो

को समृद्धि प्राप्त नही हुई और न उनके व्यवसाय मे 'स्वर्ण युग' ही आया। इसके विपरीत यह अत्यन्त भयकर कृषि-सकट का जमाना था। नई व्यावसायिक कृषि की औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था के साथ समन्वय आसानी से बिना कष्ट के नही हो सका। यद्यपि इन वर्षो मे फार्मो की सख्या और कृषि भूमि का रकबा, दोनो मे वृद्धि हुई थी तो भी 1865 और 1896 के बीच कृषि की कुल आय म बहुत मामूली वृद्धि हुई। आधुनिक 'कृषि-समस्या' अब धीरे-धीरे पैदा होने लगी थी।

गृह-युद्ध के बाद के ज़माने मे किसान के सामने सबसे विकट समस्या यह थी कि कृषि-उत्पादनो की कीमते गिर रही थी और उससे किसान की आय भी कम हो रही थी। और यह बात कम दिलचस्पी की नही कि इसके लिए अशत स्वय किसान ही जिम्मेदार था। पश्चिम की ओर किसानो के उत्साह के साथ निरन्तर आगे बढने का कारण यह नही था कि उन्होने मॉग और उपलब्धि के सिद्धान्त के आधार पर उसके लाभो को अच्छी तरह समझ लिया था। इसका कारण वास्तव मे उनकी स्वतन्त्रता की भूख और अपना एक स्वतन्त्र और निजी फार्म प्राप्त करने की आकाक्षा था। स्वतन्त्रता के इस प्रलोभन से ही वे पश्चिम मे जाकर आबाद हो रहे थे और खेती कर रहे थे। परिणामस्वरूप कृषि-जिन्सो का, खासकर गेहूँ और कपास का, आवश्य-कता से अधिक उत्पादन एक पुरानी समस्या बन गया।

गृह-युद्ध के उपरान्त कुछ समय तक अमेरिका मे अपनी आवश्यकता से अधिक उत्पादित फालतू कृषि-जिन्सो के लिए यूरोप का बाजार उपलब्ध होता रहा। उन्नीसवी शताब्दी के अन्तिम वर्षो मे इस प्रकार की चीजो का विदेशी बाजार और भी बढा, परन्तु कनाडा, अर्जेण्टाइना और रूस के अनाज, अर्जेण्टाइना के गोमास, भारत और मिस्र की रूई और न्यूजीलैण्ड और आस्ट्रेलिया के ऊनी सामान और मक्खन-पनीर आदि ने अमेरिका के कृषि उत्पादनो की कीमते विश्व के बाज़ारो मे गिरा दी। अमेरिका द्वारा तटकरो मे वृद्धि कर दी जाने से अमेरिकी माल के सभावित ग्राहको का दूसरे बाजारो मे खरीद के लिए जाना और भी तेज हो गया।

किसानो की आमदनी मे कमी का एक कारण और भी था और वह था द्रव्य की उपलब्धि मे कमी। सन् 1865 से 1890 तक अमेरिका की

आवादी दुगुनी और आर्थिक गतिविधि तिगुनी हो गई थी, फिर भी सोना और कागजी मुद्रा मे कोई वृद्धि नही हुई थी। इससे पूर्व किसान हमेशा अपनी द्रव्य-प्राप्ति की समस्या का हल करने के लिए मुद्रा-स्फीति का सहारा लेते थे, लेकिन इससे डालर की कीमत गिर जाती और उसके साथ ही उनके कर्जों के स्तर मे भी कमी आ जाती। लेकिन गृह-युद्ध समाप्त होने के वाद किसानो के हाथो मे इतनी राजनीतिक शक्ति नही रही थी कि वे कांग्रेस मे 'सस्ती मुद्रा' की उपलब्धि के लिए पहले की भाँति कानून पास करा सकते।

इसका नतीजा यह हुआ कि एक ओर किसानो मे हर प्रकार की जिन्सो के उत्पादन से आत्म निर्भर बनने की प्रवृत्ति का अन्त होकर व्यापारिक-दृष्टि से खास-खास फसले पैदा करने की प्रवृत्ति पैदा होने से उनकी कृपि-यन्त्रो की आवश्यकता वढी और दूसरी ओर इन यन्त्रो की खरीद के लिए मुद्रा की उपलब्धि कम हो गई। मुद्रा की उपलब्धि मे कमी होने से किसानो को अपनी ज़मीने या फसले वन्धक रखकर जो कर्ज लेना पडता था उसकी व्याज-दरे वहुत ऊँची हो गई। एक पश्चिमी राज्य मे सन् 1870 मे व्याज की औसत दर 9 4 प्रतिशत थी। फिर भी किसान के पास कृपि-यन्त्र खरीदने, अपने फार्म मे उपज का स्टाक जमा करने या नया खेत खरीदने के लिए ज़मीन वन्धक रखकर ऋण लेने के सिवाय और कोई चारा नहीं था। सन् 1890 मे यह अनुमान लगाया गया था कि कन्साम, नेब्रास्का, डकोटा और मिनेसोटा राज्यो का एक भी फार्म ऐसा नही था जो वन्धक न रखा गया हो।

परिवहन के भाडे की दरो मे किसानो के साथ भेद-भाव किये जाने और उनसे अधिक ऊँची दरो की वसूली से किसानो की समस्या और भी विकट हो गई थी। एक बुशल गेहूँ के परिवहन का भाडा उतना ही था जितनी कि उसकी मूल कीमत। कभी-कभी शिकागो से लिवरपूल तक गेहूँ भेजने पर जितना जहाज-भाडा लगता था, उससे ज्यादा भाडा डकोटा राज्य से मिनेपोलिस तक उसे भेजने पर लग जाता था। यही नहीं, कृपि-जिन्सो की कीमतें घटने पर भी उनके भाडे की दरो मे कोई कमी नहीं होती थी।

इनके अलावा हर इलाके मे परिवहन के भाडे की दरे अलग-अलग थी तथा छोटे और वडे परिवहन-व्यवसायियो की दरे भी जुदा-जुदा थी। रेल-

कम्पनियो के माल गोदामो मे अनाज रखने के लिए भाडे की दरे भी बहुत ऊँची थी, जिससे रेलो से माल की ढुलाई और भी महँगी हो जाती थी। इसमे सन्देह नही कि रेल-कम्पनियो ने किसानो पर ढुलाई भाडे और गोदाम भाडे की जो शर्ते लादी थी उनमे से कुछ आवश्यक भी थी, क्योकि उनके बिना रेले मुनाफा न कमा सकती। लेकिन जब किसानो को रेल-कम्पनियो के सचालको के रिश्वतखोरी, बिना वास्तविक परिसम्पत्ति के शेयर जारी करने और सार्वजनिक हित को नुकसान पहुँचाने के अन्य हथकडो का पता चला तो उनका रेल-कम्पनियो के प्रति क्रुद्ध हो उठना स्वाभाविक ही था।

कृषि-जिन्सो के उत्पादन और वितरण के व्ययो मे वृद्धि और उनके मूल्यो मे कमी से हजारो किसान बरबादी के कगार पर पहुँच गए। एक समय ऐसा आ गया कि किसान को एक बुशल गेहूँ की कीमत 42 सेंट मिल रही थी, जबकि उसका उत्पादन व्यय 52 सेंट था। ऐसे वक्त भी आये, जबकि कन्सास और डकोटा राज्यो के मक्का और गेहूं उत्पादक किसानो को अपना अनाज बेचकर ईंधन खरीदने के बजाय खुद अनाज का ही ईंधन के रूप मे जलाना अधिक सस्ता प्रतीत होता था।'

कई किसानो की जमीने अपने कर्जो पर व्याज न चुका सकने के कारण बैंको या अन्य ऋणदाता साहूकारो के हाथो मे चली गई। इस प्रकार पट्टे पर खेत लेकर काश्त करने वाले किसानो की तादाद बढ गई। सन् 1880 मे खुदकाश्त के बजाय पट्टेदारी वाले फार्मो की सख्या कुल फार्मो का चौथाई भाग थी। बीस वर्ष बाद यह सख्या 35 प्रतिशत हो गई।

सन् 1870 के दशक के प्रारम्भिक वर्षो मे समस्त पश्चिमी राज्यो मे किसान इतने सकटग्रस्त हो चुके थे कि वे अपने रोष और क्षोभ को प्रकट करने के लिए किसी प्रभावकारी उपाय की खोज करने लगे। इसके लिए सबसे प्रमुख साधन 'पैट्रन्स ऑफ हसबैंडरी' (कृषि के सरक्षक) नामक सगठन था, जिसका अधिक प्रचलित नाम 'ग्रेंज' था। किसान जैसे-जैसे यह अनुभव करने लगे कि एक ओर विश्व के बाजार मे उनकी उपज की कीमते गिर रही है और दूसरी ओर सयुक्त राज्य मे उद्योग-सम्पन्न पूर्वी राज्यो की राजनीतिक शक्ति बढती जा रही है, वैसे-वैसे उनका क्षोभ और भी बढने लगा। फलत 'ग्रेंज' ने स्वतन्त्र (खुदकाश्त करने वाले) किसानो की बलवो

के साथ मिलकर राष्ट्र की रेल-कम्पनियो और अन्य 'विचौलियो' से किसानो के लिए अधिक न्याय प्राप्त करने का प्रयत्न किया।

किसानो ने सरकार द्वारा रेल-कम्पनियो और अन्य व्यवसायो को अनुपूर्तियो (सब्सिडीज) के द्वारा सहायता दिये जाने के तरीके पर भी कडा विरोध प्रकट किया। उनका उद्देश्य किसानो को नये औद्योगिक परिवेश मे आय के अधिक न्यायपूर्ण वितरण का साधन बनाना था।

किसानो ने इस सम्बन्ध मे सुधार-कानून पास कराने के लिए जो आन्दोलन चलाया था, वह बहुत आसान नही था और न वह जल्दी प्रभावकारी बनने वाला ही था। फिर भी वह आन्दोलन शुरू अवश्य हो गया था।

किसानो की दुर्दशा, 1866-1890
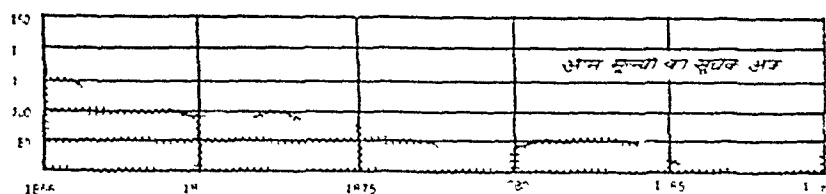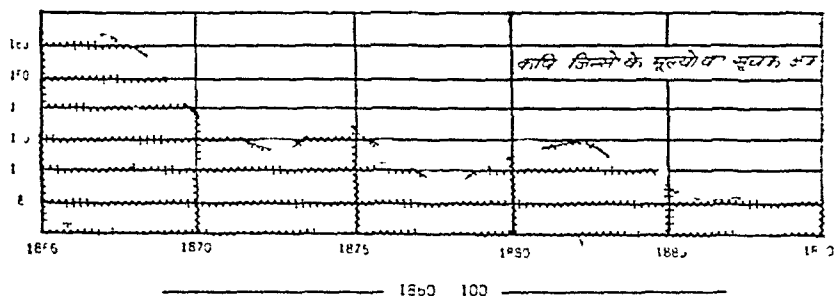
गृह-युद्ध की महँगाई के बाद कीमतो मे गिरावट का जमाना आया। लेकिन किसानो को अपने उत्पादनो के बदले मे मिलने वाली कीमते 50 प्रतिशत गिरी, जबकि वे जो चीजे खरीदते थे, उनकी कीमतो मे कुल 37 प्रतिशत गिरावट आई। इससे किसानो की आय मे काफी कमी हो गई।

दो मुझे तुम अपने श्रान्त और दरिद्रजन,
दो स्वतन्त्रता की साँस लेने के इच्छुक जनगण,
भेजो अपने लहराते सागर तट के इस तलछट को,
इस बेघर, तूफान-प्रताडित मानव दल को,
मै लिए खडा हूँ दीप इनके लिए स्वर्ण-द्वार पर।
—स्वतन्त्रता की प्रतिमा पर अकित एमा लजारस की कविता

बड़े पैमाने पर उत्पादन की अर्थ-व्यवस्था की चुनौती

उन्नीसवी शताब्दी के आखिरी दशको मे औद्योगिक पूँजीवाद ने जहाँ सयुक्त राज्य के कृषि के ढाँचे मे परिवर्तन किया वहाँ उसने राष्ट्र की श्रम-शक्ति को भी वहुत रूपान्तरित कर दिया। नये ढग की कम्पनियो की स्थापना, नई उद्योग-विद्या (टैकनोलॉजी) और 'फैक्टरी प्रणाली' के द्रुत विकास से ऐंड्रयू जैक्सन और अब्राहम लिंकन के जमाने के ग्राम-प्रधान अमेरिका के अस्तित्व का अन्त हो जाना स्वाभाविक था । सन् 1890 मे यह स्थिति थी कि राष्ट्र की कुल श्रम-शक्ति का मुश्किल से चालीस फीसदी भाग ही कृषि के व्यवसाय मे लगा हुआ था। और 1920 तक तो खेती मे राष्ट्र की कुल 25 प्रतिशत ही श्रम-शक्ति रह गई।

नए औद्योगिकवाद ने शहरो के विकास का मार्ग प्रशस्त कर दिया। सन् 1840 मे राष्ट्र की आवादी का कुल वारहवाँ हिस्सा 8,000 से अधिक आवादी के कस्वो मे रहता था। सन् 1860 मे यह अनुपात छठा हिस्सा हो गया। परन्तु सन् 1900 मे हर तीन अमेरिकनो मे से एक शहर का निवासी था । शिकागो की आवादी तो आश्चर्यजनक रूप से वढी । सन् 1850 मे उसकी आवादी 30,000 थी किन्तु 1880 मे वह 5,00,000 हो

गई और सन् 1900 तक शिकागो की आबादी बीस लाख के आस-पास थी।

बडे शहर बेतरतीब ढग से बढ रहे थे । सन् 1894 मे न्यूयार्क के 32 एकड के एक इलाके मे आबादी की घटना 906 4 व्यक्ति प्रति एकड थी। उसी समय यूरोप के सबसे अधिक सघन आबाद शहर प्राग मे सबसे घनी आबादी वाले खण्ड की जनसख्या कुल 485 4 व्यक्ति प्रति एकड थी।

शहरो की आबादी मे इतनी तेजी से वृद्धि होने का एक बडा कारण यह था कि 1865 के बाद यूरोप से आवासी लोग अमेरिका मे बसने के लिए धडाधड आ रहे थे। गृह-युद्ध के बाद के पन्द्रह वर्षो मे 45 लाख आदमी सयुक्त राज्य मे बाहर से आए। अगले चालीस वर्ष मे 2 35 करोड व्यक्ति और आए। इन वर्षो मे सयुक्त राज्य की आबादी मे आधी वृद्धि इन आगुन्तक प्रवासियो के कारण ही हुई।

सन् 1880 से पूर्व 90 प्रतिशत आवासी जर्मनी, आयरलैंड, ब्रिटेन, कनाडा और स्कैंडेनेवियन देशो के थे। इन लोगो को अक्सर 'पुराने आवासी' कहा जाता है। अगली पीढी मे आवासियो के स्वरूप मे परिवर्तन हो गया और आस्ट्रिया, हगरी, रूस, पोलैंड, इटली और बालकन देशो से बहुत अधिक सख्या मे लोग सयुक्त राज्य मे आने लगे। ये लोग अक्सर 'नए आवासी' कहलाते है। सन् 1900 तक न्यूयार्क मे इटालियनो की सख्या नेपल्स शहर की कुल आबादी के बराबर हो गई। शिकागो की आबादी का 80 प्रतिशत भाग या तो आवासी लोग थे या उनके बच्चे।

थियो के रूप मे भी अमेरिका आ रहे थे ।

फिर भी यूरोप से अटलांटिक महासागर पार कर अमेरिका आने के लिए लोगो की मुख्य प्रेरणा आर्थिक थी। अमेरिका मे लोग रोजगार पाने की, अपने रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाने की और स्वय अपने लिए नही तो कम-से-कम अपने बच्चो के लिए नए अवसरो की आशा करते थे। दुर्भाग्य से ये आशाएँ हमेशा पूरी नही होती थी। नए आवासियो को अमेरिका मे आकर इतनी कम मजदूरी पर काम करना पडता था कि उसमे मुश्किल से उनका निर्वाह ही हो पाता था और अनेक बार जिन परिस्थितियो मे वे काम करते थे, वे उनके पुराने देश से, जहाँ से वे नई दुनिया मे आते थे, किसी भी कदर बेहतर नही होती थी। अपने नए देश की भाषा का अज्ञान और अमेरिका के रहन-सहन के तौर-तरीके की अनभिज्ञता उनकी परेशानी को और भी बढा देती थी।

उद्योगो की दृष्टि से देखा जाय तो नए आवासियो का अमेरिका मे आगमन और 'फैक्टरी-प्रणाली', दोनो का बहुत अच्छा मेल था। अदक्ष खेतिहर नवागन्तुक एक ऐसे देश मे आ रहे थे, जहाँ कारखानो का निरन्तर विस्तार हो रहा था और जहाँ अदक्ष और आसानी से प्रशिक्षित होने वाले अर्ध-दक्ष श्रमिको की बहुत आवश्यकता थी। एक अनुमान के अनुसार, 1910 मे 'नए' आगन्तुक आवासियो की जिनमे दक्षिण से आने वाले नीग्रो भी शामिल थे, सख्या अमेरिकन उद्योगो की 21 प्रमुख शाखाओ मे लगे कुल कर्मचारियो की सख्या का दो-तिहाई भाग थी।

कारखानो की नई प्रणाली ऐसी थी कि उसमे स्त्रियाँ और बच्चे भी बहुत बडी सख्या मे काम पर लगाए जाते थे। सन् 1880 की जनगणना के अनुसार दस से पन्द्रह वर्ष तक की आयु के दस लाख से कुछ अधिक बच्चे रोजगार पर लगे हुए थे। सन् 1910 मे राष्ट्र की कुल श्रम शक्ति का 5 2 प्रतिशत भाग, यानी बीस लाख के लगभग, बच्चे थे।

श्रमिक स्त्रियो की सख्या भी बढ गई थी। सन् 1830 मे 25 लाख स्त्रियाँ काम पर लगी हुई थी। बीस वर्ष के भीतर श्रमिक स्त्रियो की सख्या बढकर दुगुनी यानी कुल श्रम-शक्ति का 14 प्रतिशत भाग हो गई।

औद्योगिकीकरण के द्रुत विकास के इस युग मे मजदूरी, कमाई और

श्रमिको की काम की परिस्थितियाँ क्या थी, इस वारे मे पर्याप्त ऑकडे उपलब्ध नही है। फिर भी सन् 1895 मे इन मामलो पर सीनेट की एक रिपोर्ट प्रकाशित हुई थी। इस रिपोर्ट के अनुसार गैर-खेतिहर मजदूरो की प्रति घण्टा आय 1860 और 1890 के वीच 85 प्रतिशत बढ गई, जबकि रहन-सहन का व्यय केवल 18 प्रतिशत वढा था।

लेकिन अदक्ष मजदूरो की आमदनी दक्ष मजदूरो की आमदनी की अपेक्षा कम तेजी से वढी क्योकि दक्ष मजदूर आसानी से उपलब्ध नही थे। सन् 1890 मे आय के वितरण के वारे मे जो मोटा अनुमान लगाया गया था, उसके अनुसार दो लाख परिवारो की वार्षिक आमदनी 5,000 डालर से अधिक थी, 13 लाख परिवारो की 1,200 डालर से 1,500 डालर तक और 1 करोड 10 लाख परिवारो की 1,200 डालर से कम थी। इस अन्तिम वर्ग की औसत वार्षिक आमदनी 380 डालर थी।

इन ऑकडो मे उन्नीसवी शताव्दी के उत्तरार्द्ध की काम की परिस्थितियो को हिसाव मे नही लिया गया है। सन् 1860 मे आम तौर पर लोगो से प्रतिदिन दस से चौदह घण्टे तक काम लिया जाता था। यद्यपि 1890 तक ऐसी स्थिति आ गई थी कि कुछ उद्योगो मे दक्ष श्रमिको से अन्य श्रमिको की अपेक्षा कम घण्टे काम लिया जाता था, तो भी इस्पात, कागज और तेल-शोधन के कारखानो और अन्य 'भारी' उद्योगो मे सामान्य मजदूर सप्ताह मे छ या सात दिन काम करते थे और प्रतिदिन उनसे 12 घण्टे काम लिया जाता था।

निर्माण-उद्योगो मे वर्ष की कुछ खास अवधियो मे श्रमिक वेरोजगार रहते थे और इस मौसमी वेरोजगारी से उनकी कठिनाई और वढ जाती थी। मैसाचुसेट्स मे 1885 मे किये गए एक अध्ययन के अनुसार उस वर्ष उस राज्य के 30 प्रतिशत मजदूर पाँच महीने के लगभग वेकार रहे। व्यापार मे आने वाले मन्दी के चक्रो से श्रमिको का सकट वढता रहता था। उदाहरण के लिए 1873 और 1878 के वीच और 1893 और 1897 के वीच जबर्दस्त मन्दियाँ आई और समय-समय पर इसी तरह के मन्दी के कुछ और झटके भी आए।

यही नही, कभी-कभी काम की परिस्थितियाँ वहुत खराब और

ख़तरनाक भी होती थी। कारखानो के निरीक्षण के लिए सरकारी इंस्पेक्टरो की नियुक्ति की व्यवस्था बहुत धीरे-धीरे और बेतरतीब ढग से हुई। कोयला खानो मे रोशनी और हवा की व्यवस्था बहुत अपर्याप्त होती थी। कई कारखाने 'स्वैट शॉप' (पसीना चुआने वाले कारखाने) कहलाते थे क्योकि वहाँ बहुत कम मजदूरी पर घटो श्रमिको को प्रतिकूल परिस्थितियो मे काम करना पडता था। बडे शहरो के बाहर श्रमिक अक्सर कम्पनियो के बनाए क्वार्टरो मे रहते थे और कम्पनियाँ उन्हे वेतन के रूप मे अपने निज के कूपन देती थी, जो कम्पनियो की अपनी दूकानो मे ही चलते थे।

कारखाना-मजदूरो को जो कठिनाइयाँ उठानी पडती थी, उनमे से बहुत-सी कठिनाइयाँ ऐसी थी, जिन्हे महज दुष्टतापूर्ण शोषण ही नही कहा जा सकता। दरअसल प्रगति सभी के लिए सकट का आह्वान कर रही थी और स्वय उद्योग-व्यवसायो के मालिक भी अक्सर दिवालिये हो जाते थे। ये वर्ष बहुत ज़बर्दस्त औद्योगिक परिवर्तन के वर्ष थे, इनमे कष्ट उठाकर भी पूँजी को सग्रह करना आवश्यक था। कीमतो की प्रतिस्पर्धा बहुत तीव्र थी। अकुशल और कम योग्य उद्योगपतियो पर व्यापारिक मन्दी के चक्र भयकर मुसीबत बरपा कर देते थे। लोगो के पास पैसा अपर्याप्त होने से बहुत लम्बे अर्से तक कीमतो मे मन्दी का दौर चलता था। ये सब कारण थे, जिनको दृष्टि मे रखकर ही कारखानो के मालिक मजदूरो के बारे मे अपना रुख निर्धारित करते थे। व्यापारियो को एक के बाद एक सकटो का सामना करना पडता था, इसलिए वे अपने माल के उत्पादन-व्यय पर बहुत नजर रखते थे और मजदूरी उस समय अधिकतर मालिको के लिए उत्पादन-व्यय का एक बडा अग थी।

फिर भी परिस्थितियो मे सुधार की सख्त जरूरत थी, क्योकि पूँजीगत सामग्री के उद्योगो मे आई तेजी ने मानवीय आवश्यकताओ को बढा दिया था। लेकिन सामान्य आर्थिक समृद्धि के बावजूद जब श्रमिको की स्थिति मे गिरावट आती चली गई तो उनमे अशान्ति और निराशा बहुत बढ गई और उसके परिणामस्वरूप बार-बार हडताले और श्रमिक-विद्रोह होने लगे।

श्रमिको की परिस्थितियाँ उन उद्योगो मे अधिक खराब थी जिनमे मशीनरी का अधिक उपयोग किया जाता था, जैसे कि लोहा और इस्पात के

कारखाने, मशीनें बनाने के कारखाने, ढलाई और जूते के कारखाने और छापाखाने। देश के औद्योगिक विकास के साथ-साथ जो श्रमिक आन्दोलन चले, उनका नेतृत्व इन्ही कारखानो के लोग करते थे।

सन् 1873 से पहले के दस वर्षो मे इन उद्योगो मे 24 राष्ट्रीय मजदूर यूनियनें बनी। इनमे रेल इजनो के ड्राइवरो, लोहा ढालने वालो, मशीनें बनाने वालो, लुहारो, खान मजदूरो और जूता बनाने वालो की यूनियनें शामिल थी। इजन ड्राइवरो की यह यूनियन रेल कर्मचारियो की सबसे पहली यूनियन थी। इन यूनियनो की सदस्य संख्या 1873 मे लगभग तीन लाख थी।

किन्तु अलग-अलग उद्योगो मे राष्ट्रीय यूनियनें सगठित करना पर्याप्त नही था। अगला कदम उन्हे मिलाकर एक सगठन मे बाँधना था। सन् 1866 मे नेशनल लेबर यूनियन (राष्ट्रीय मजदूर सघ) बनाकर यह कदम उठाया गया। इस सगठन ने अपने सबसे पहले सम्मेलन मे ऐसा कानून पास करने की माँग की, जिसके अनुसार काम के दैनिक घण्टे आठ कर दिये जाएँ। इसका दूसरा उद्देश्य था सहकारी समितियो के निर्माण, मुद्रा सुधार, बाहर से आने वाले आवासियो पर रोक और एक सघीय श्रम विभाग की स्थापना के लिए आन्दोलन करना।

नेशनल लेबर यूनियन का झुकाव और दृष्टिकोण अधिकाधिक राजनीतिक होता जा रहा था, इसलिए उसका ध्यान श्रमिको के तात्कालिक हितो से दूर हटता गया और यही कारण है कि कोई ठोस परिणाम प्राप्त नही कर सकी। फिर भी सयुक्त राज्य के श्रमिक आन्दोलन के इतिहास मे उसका एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसी ने सबसे पहले एक राष्ट्र-व्यापी मोर्चे पर काम करने की आवश्यकता पर जोर दिया, इसी ने श्रमिको के विभिन्न वर्गो के प्रतिनिधियो को श्रमिको की सर्वसामान्य समस्याओ पर विचार करने के लिए एक मच पर एकत्र किया और इसीने श्रमिको की शिकायतो के बारे मे एक राष्ट्रव्यापी चेतना पैदा की।

सन् 1880 के दशक के मध्य मे श्रमिको का एक अन्य संगठन नेशनल लेबर यूनियन से भी अधिक महत्त्व प्राप्त करने लगा था। सन् 1869 मे एक गुप्त सगठन के रूप मे गठित 'नाइट्स आफ लेबर' (श्रमिको के सरक्षक)

नामक इस सगठन का विकास प्रारम्भ मे बहुत धीरे-धीरे हुआ, क्योकि इस पर गोपनीयता और रहस्य का जो आवरण पडा हुआ था, उससे उसके बारे मे कुछ गलतफहमियाँ रहती थी। सन् 1878 मे इस सगठन ने रहस्य का पर्दा उतार दिया और उसकी सदस्य सख्या तेजी से बढने लगी और 1885 मे वह एक लाख तक पहुँच गई। उस वर्ष इस सगठन ने वैवास और मिसूरी पैसिफिक रेल-कम्पनियो मे श्रमिको की हडताल की इतने जबर्दस्त पैमाने पर तैयारी की कि जे गोल्ड जैसे चतुर और धूर्त पूँजीपति को भी हडताल रुकवाने के लिए उससे बातचीत करने को झुकना पडा। 'नाइट्स ऑफ लेबर' की इस सनसनीखेज विजय ने अगले वर्ष ही उसकी सदस्य सख्या एक लाख से बढाकर 7,30,000 कर दी और इस प्रकार वह सबसे बडी और प्रभावशाली मजदूर यूनियन बन गई।

किन्तु 1886 के बाद नाइट्स ऑफ लेबर की शक्ति भी क्षीण होने लगी। कई बडी हडताले, जिनके लिए यह सगठन पूरी तरह से तैयार नही था, असफल हो जाने से श्रमिको मे उसकी इज्जत कम हो गई। यद्यपि नाइट्स ऑफ लेबर के नेताओ ने इन हडतालो के साथ किसी भी तरह की हिंसात्मक या तोड-फोड की कार्रवाइयो का आयोजन नही किया था, फिर भी इस तरह की कार्रवाइयॉ मजदूरो ने की, जिसका नतीजा यह हुआ कि आम जनता इस सगठन को कानून की अवहेलना करने वाला सगठन समझने लगी। शिकागो मे श्रमिको की एक सभा मे एक अराजकतावादी ने एक बम फेंक दिया, जिससे 11 व्यक्ति मारे गए और बीसियो घायल हो गए। हालॉकि इस अराजकतावादी का नाइट्स से कोई सम्बन्ध नही था, फिर भी बहुत-से लोगो ने नाइट्स को ही इस प्रकार की आतकवादी अत्याचारपूर्ण कार्रवाई के लिए दोषी ठहराया।

नाइट्स के सहकारी समितियॉ स्थापित करने के परीक्षण और उसकी कुछ अन्य सुधारात्मक प्रवृत्तियो के असफल हो जाने से भी उसकी प्रतिष्ठा और शक्ति को बहुत धक्का लगा। किन्तु उसकी मौत का सबसे बडा कारण उसके सदस्यो मे सगठन का अभाव था। भ्रातृत्व के अस्पष्ट विचार और आदर्श विभिन्न उद्योगो के श्रमिको को समान और सयुक्त कार्रवाई की एकता के बन्धन मे बाँधने के लिए काफी नही थे। दक्ष और अदक्ष श्रमिको

मे अक्सर शत्रुता चलती रहती थी। दक्ष मजदूर जानते थे कि हडताल मे विजय पाने के लिए अदक्ष मजदूरो की अपेक्षा वे अधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योकि उन्हे आसानी से हटाया नही जा सकता। इसलिए अगर हडताल सफल हो जाती तो वे दक्ष और अदक्ष दोनो प्रकार के मजदूरो को उसका समान लाभ मिलने पर बिगडते और यदि हडताल असफल हो जाती तो भी नाराज़ होते।

नाइट्स ऑफ लेवर के धीरे-धीरे अस्त हो जाने पर बची हुइ ट्रेड यूनियनो ने, जिनमे अधिकतर विभिन्न व्यवसायो के दक्ष मजदूर शामिल थे, एक अधिक स्थायी राष्ट्रीय श्रमिक सगठन बनाने के लिए कदम उठाया। सेम्युअल गोम्पर्स के नेतृत्व मे इन सगठनो ने मिलकर अमेरिकन फेडरेशन ऑफ लेवर (अमेरिकन श्रमिक सघ) का निर्माण किया। गोम्पर्स ने स्वप्नलोक की वडी-वडी कल्पनाओ से भरे आदर्शो, अस्पष्ट सुधारो और राजनीति मे फँसने की प्रवृत्ति से बचने की चेष्टा की, क्योकि यही चीजे नेशनल लेवर यूनियन और नाइट्स ऑफ लेवर को ले डूबी थी। उसका विश्वास था कि यूनियन को मजदूरी वढवाने, काम के घटे कम कराने और अपने सदस्यो की काम की परिस्थितियो मे सुधार कराने के व्यावहारिक उद्देश्यो के लिए ही प्रयत्न करना चाहिए। और सामूहिक सौदेवाजी, जिसके पीछे हडताल का वल हो, इन उद्देश्यो की प्राप्ति का साधन होनी चाहिए।

विभिन्न श्रमिक आन्दोलनो की प्रगति के बावजूद बीसवी शताब्दी के प्रारम्भ तक राष्ट्र के 1 70 करोड मजदूरी अर्जन करने वाले लोगो मे से पॉच लाख से अधिक व्यक्ति ट्रेड यूनियनो के सदस्य नही थे। इनमे से भी अधिकतर दक्ष मजदूर थे, जो अमेरिकन फेडरेशन ऑफ लेवर के अन्तर्गत सगठित थे। अदक्ष मजदूर सौदेवाजी की वार्त्ताओ मे तव तक प्रभावकारी नही वन सके, जव तक कि वीसवी शताब्दी मे निर्मित श्रमिक सुधार कानून पास नही हो गया।

महान् व्यवसायी

उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे आर्थिक दृष्टि से अत्यधिक उन्नत पश्चिमी यूरोपियन देशो की तुलना मे सयुक्त राज्य को एक अल्पविकसित देश कहा जा सकता था। राष्ट्र उस समय भी आधार-भूत उद्योगो के विकास और श्रम-शक्ति के प्रशिक्षण मे लगा हुआ था ताकि अपनी प्राकृतिक सम्पदा के दोहन के लिए एक बुनियाद तैयार कर सके।
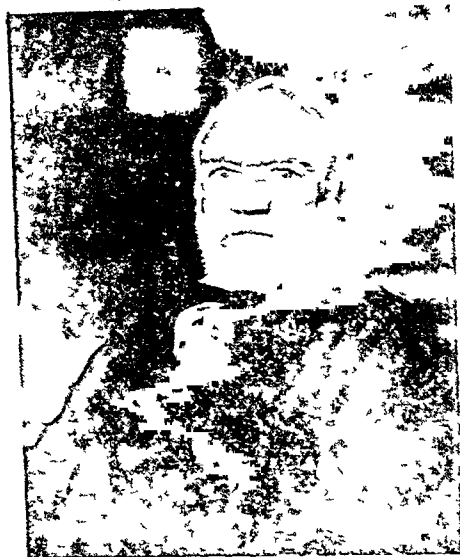
एण्ड्र्यू कार्नेगी

यद्यपि ये उद्देश्य आश्चर्यजनक गति से पूरे कर लिये गए तो भी एक सर्वथा अनगढ और अछूते महाद्वीप को तेजी से उद्योग-सम्पन्न बनाने के लिए बहुत बडी कीमत देनी पडी। सयुक्त राज्य ने तरह-तरह की नई तकनीको के परीक्षण किये, जो कभी असफल हो जाते और कभी सफल हो जाने पर बडे अवॉछनीय परिणामो को जन्म देते। इस प्रक्रिया मे सबके लिए समान अवसर उपलब्ध कराने के विचार को जो 'अमेरिका के स्वप्नो' का मध्यबिन्दु था, बहुत आघात लगा। साथ ही अठारहवी शताब्दी की यह धारणा भी अस्त-व्यस्त हो गई कि यदि लोग अपने निजके उद्देश्यो की पूर्ति के लिए प्रयत्न करे तो उससे राष्ट्र की अर्थ-व्यवस्था स्वत विनियमित हो जाएगी और सही राह पर चल पडेगी।

ये धारणाएँ नये समाज के भीतर नई किस्म की ताकतो के उद्भव के कारण नष्ट हुई। उद्योगो के विकास के साथ-साथ औद्योगिक और वित्तीय सगठनो मे शक्ति अधिकाधिक केन्द्रीभूत होने लगी। सफल उद्योगपति और कम्पनियो के अधिकारी परम्परा से चले आ रहे भूमिपति और व्यवसायी वर्गो का स्थान लेने लगे और इस प्रकार एक नया सामाजिक और आर्थिक उच्चवर्ग धीरे-धीरे उभरने और समाज मे प्रमुख स्थान प्राप्त करने लगा। गृह-युद्ध के बाद दोनो राजनीतिक दल इस नये सत्ताधारी और शक्तिशाली वर्ग के प्रभाव को अनुभव करने लगे।

औद्योगिक विकास के साथ-साथ औद्योगिक और वित्तीय शक्तियो का परस्पर मिलन होने लगा और वे कुछ थोडे-से हाथो मे केन्द्रित होने लगी। सन् 1860 मे कुछ रेल-कम्पनियो को छोडकर बाकी अधिकतर उद्योग-व्यवसाय सार्वजनिक न होकर कुछ व्यक्तियो के हाथो मे थे अथवा कुछ व्यक्तियो की साझेदारी मे चल रहे थे। किन्तु 1904 मे स्थिति कुछ बदली हुई दिखाई दी। एक गणना के अनुसार उस समय 5,300 औद्योगिक सस्थान, जिनमे 7 अरब डालर से अधिक पूँजी लगी हुई थी, 318 औद्योगिक कम्पनियो के हाथो मे थे। ये कम्पनियाँ राष्ट्र की निर्माण-उद्योगो की 40 प्रतिशत क्षमता का नियन्त्रण करती थी। सयुक्त राज्य की सबसे बडी 92 कम्पनियो मे से 78 के हाथो मे 50 प्रतिशत अमेरिकन उद्योग थे।

गृह-युद्ध के वाद हर दशक मे वडे पैमाने के उद्योग अधिकाधिक महत्त्व प्राप्त करने लगे। सन् 1870 के दशक मे निर्माण-उद्योगो की फर्मों की सख्या तो लगभग स्थिर और अपरिवर्तित रही, किन्तु उनमे लगी पूँजी 65 प्रतिशत और उनके उत्पादनो का मूल्य 58 प्रतिशत बढ गया। सन् 1850 से 1909 तक निर्माण कारखानो के कर्मचारियो की औसत सख्या तिगुनी हो गई और निर्माण कम्पनियो मे लगी औसत पूँजी 17 गुनी बढ गई।

अलग-अलग उद्योगो के विकास का ढाँचा भी सामान्य विकास के ढाँचे के अनुरूप ही था। सन् 1869 के वाद के दो दशको मे लोहा और इस्पात के कारखानो की सख्या 808 से गिरकर 719 हो गई, किन्तु लोहा-इस्पात फर्मो मे लगी औसत पूँजी 1,49,000 डालर से बढकर 5,75,850 डालर हो गई। इसी अवधि मे कृषि उपकरण बनाने वाली फर्मो की सख्या लगभग

एक-तिहाई कम हो गई, लेकिन इन फर्मों मे लगी औसत पूँजी 14 गुनी बढ गई।

टैकनोलॉजी के क्षेत्र मे हुए नये आविष्कारो ने छोटे कारखानो के बजाय बडे कारखानो की स्थापना को प्रोत्साहन दिया, जो आर्थिक दृष्टि से अधिक लाभकारी ढग से चलाये जा सकते थे। यद्यपि कारखानो का यान्त्रिकीकरण और उनमे नई तकनीको का प्रयोग, दोनो के लिए पूँजी की बहुत आवश्यकता थी, किन्तु उसे जुटाने मे बहुत कठिनाई नहीं होती थी, क्योंकि कम्पनी गठित कर उसके शेयर जारी करने से पूंजी आसानी से मिल जाती थी। एक बार लग जाने के बाद नये ढग की मशीन, उत्पादन क्षमता को कई गुना बढाकर और उत्पादन व्यय को घटाकर औद्योगिक दौलत पैदा करने का स्रोत बन जाती थी। कम्पनी और कारखाने का विस्तार करने से उत्पादन व्यय घट जाता है, इसलिए दूरदर्शी उद्योगपति अपना उत्पादन बढाने के लिए या तो अपने प्रतिस्पर्धी कारखानो को खरीद लेते थे, या उनके साथ मिलकर अपने कारखानो का विस्तार कर लेते थे।

इन वर्षों मे व्यापार मे कई बार खूब तेजी आई और बाजारो का खूब विस्तार हुआ। हर आर्थिक उन्नति और तेजी के समय सामान की माँग बढती, जिससे व्यापारी ग्राहको को आकृष्ट करने के लिए आपस मे जबर्दस्त प्रतिस्पर्धा मे जुट जाते। इसका परिणाम अनेक बार यह हुआ कि उद्योगो ने अनियन्त्रित होकर इतना उत्पादन बढाया कि वह जनता की आवश्यकता से अधिक हो गया और उससे बाजार कुछ समय के लिए असन्तुलित हो गया। इस प्रकार आधुनिक व्यापार मे आने वाले तेजी और मन्दी के क्रमिक चक्र दिखाई देने लगे। हर मर्तबा समृद्धि के बाद मन्दी का जबर्दस्त झोका आता। उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे मन्दी के ऐसे चार सकटकाल आए—1857 से 1862 तक, 1873 से 1879 तक, 1883 से 1885 तक और अन्त मे 1893 से 1897 तक।

मन्दी के इन सकटो के समय कारखानो के यान्त्रिकीकरण मे होने वाले नये भारी और बधे हुए खर्चो ने औद्योगिक सस्थानो मे कटु और तीव्र प्रतिस्पर्धा को और भी बढाया। अन्य कई दृष्टिकोण भी कीमते घटाने की इस तीव्र प्रतिस्पर्धा को बढाने वाले थे, जिसका परिणाम स्वय उसके

अपने उद्देश्य को नष्ट कर देता था। रेलो का राष्ट्रव्यापी जाल बिछ जाने से हर जगह स्थानीय व्यापारियो का एकाधिकार समाप्त हो गया। सन् 1860 के दशक के मध्य से 1890 के दशक के मध्य तक कीमतो मे जो विश्वव्यापी मन्दियाँ आई उन्होने मुद्रा की अवस्फीति (डिफ्लेशन) को प्रोत्साहन दिया। इससे इन वर्षो मे राष्ट्र की द्रव्योपलब्धि की अपर्याप्तता ने व्यावसायिक उतार-चढाव के इन चक्रो की कठोर वास्तविकता को और भी अतिरजत कर दिया।

प्रतिस्पर्धा की इस निर्मम दौड मे ऐसे सभी उद्योगपति और व्यवसायी, जो कार्यकुशल नही थे और जिनके पास आर्थिक सामर्थ्य भी पर्याप्त नही था, पीछे रह गए और छिटककर दूर जा पडे, जो बच गए वे अपने उद्योग-व्यवसाय को नियन्त्रित करने और उनमे स्थिरता और स्थायित्व लाने के उपाय करने लगे। आत्म-रक्षण की भावना से प्रेरित होकर इन लोगों ने बाजारो को अपने हाथ मे करने की कोशिश प्रारम्भ कर दी। इसके लिए उन्होने अनेक तरीको से 'मेल' कर अपने सघ बनाये। कम्पनियो के सघ बनाने की इस पद्धति को जॉन डी० रॉकफेलर के 'आधुनिक आर्थिक प्रशासन की सारी प्रणाली का मूलस्रोत' कहा है।

प्रारम्भ मे कम्पनियो ने परस्पर मिलकर जो 'मेल' किये, वे सिर्फ आपस मे किये गए अलिखित समझौते थे। रेल कम्पनियो ने इस कार्य मे विशेष रूप से हिस्सा लिया। अनेक रेल-कम्पनियो ने अपने प्रतिस्पर्धियों के साथ मिलकर पारस्परिक सहयोग से 'रेल-भाडे' तय किये और हर कम्पनी ने यह वचन दिया कि वह अपना भाडा इस निर्धारित भाड़े से कम नही करेगी। कुछ रेल-कम्पनियो ने अपनी कुछ वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपनी आमदनियो को भी मिलाकर एक 'पूल' बना लिया (उनका एकत्रीकरण किया)। इस प्रकार उन्हे इस 'पूल प्रणाली' द्वारा निर्धारित भाडे की दरो को कायम रखने के लिए प्रोत्साहन मिला।

उद्योगो के स्थायित्व के लिए रेल कम्पनियो के अलावा जिस अन्य उद्योग मे सबसे पहले इस तरह का समझौता हुआ, वह था जहाजी रस्से का उद्योग। इस उद्योग मे हुए समझौते के अनुसार जहाजी रस्से बनाने वाली सभी कम्पनियो ने यह स्वीकार किया कि वे इस उद्योग के कुल

व्यापार मे समान हिस्सा बटाएँगी। यदि कोई कम्पनी निर्धारित मात्रा से अधिक माल बेचती तो उस पर जुर्माना किया जाता और वह जुर्माना निर्धारित कोटे से कम बिक्री करने वाली कम्पनी को क्षतिपूर्ति के रूप मे दे दिया जाता। इसी प्रकार का एक उदाहरण मिशिगन के नमक उत्पादको का सघ था, जिसने आपसी समझौते से सारे क्षेत्र मे नमक का उत्पादन सीमित कर दिया था ताकि अधिक उत्पादन से नमक की कीमते न गिरे। मास के व्यापारियो, ढलवाँ लोहे के पाइपो और तार की कीलो के निर्माताओ ने भी इसी तरह के समझौते कर अपने-अपने लिए व्यापार के प्रदेश बाँट लिये थे।

किन्तु जब माँग बहुत घट जाती तो ये अनौपचारिक, अलिखित समझौते अनिवार्यत पालनीय नही रहते थे और विभिन्न कम्पनियो के व्यापार के आपसी मेल और उस पर प्रतिबन्ध के लिए और भी कडे तरीके अपनाने की आवश्यकता होती थी। इसलिए अमेरिका के इतिहास मे ही सबसे पहला वास्तविक ट्रस्ट (कम्पनियो का गुट)स्थापित किया गया। गृह-युद्ध के बाद जॉन डी० रॉकफेलर के सचालकत्व मे स्टैडर्ड ऑयल कम्पनी ने अनेक वर्ष तक बहुत-सी तेल-कम्पनियो के व्यापार मे परस्पर मेल स्थापित किया। रॉकफेलर के चतुर निर्देशन मे कम्पनियो के इस सयोजन ने परिवहन के भाडो मे बहुत कमी करा ली, तेल ढोने के लिए अपनी निज की ढोलो (वैरल) की फैक्टरियाँ स्थापित की और पाइप लाइनो के जरिये तेल को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाने के लिए पूँजी लगानी शुरू कर दी। एक-न-एक तरीके से इस सयोजन ने सभी तेल कम्पनियो को अपने भीतर समाना शुरू किया और यदि कोई कम्पनी इसके लिए तैयार न होती तो उसे खत्म ही कर दिया जाता। इसका परिणाम यह हुआ कि जल्दी ही स्टैडर्ड ऑयल कम्पनी के हाथ मे तेल की प्राय सभी पाइप लाइनो का और 90 प्रतिशत तेल शोधक कारखानो का नियन्त्रण आ गया।

सन् 1879 मे इस सगठन को विधिवत् एक ट्रस्ट (कम्पनियो के गुट का न्यास) बना दिया गया। यह ट्रस्ट बन जाने पर इसमे सम्मिलित सब कम्पनियो के अधिकाश शेयर नौ ट्रस्टियो के हाथ मे आ गए और वे इन सब कम्पनियो के सयोजित कार-बार की देख-रेख करने लगे। अगले कुछ

वर्षो मे 'ट्रस्ट' का अर्थ मोटे तौर पर किसी खास उद्योग का नियन्त्रण उसकी किसी एक कम्पनी के हाथ मे चला जाना समझा जाने लगा।

स्टैण्डर्ड ऑयल ट्रस्ट की सफलता का परिणाम यह हुआ कि 'बिनौले का तेल बनाने वाली कम्पनियो, चीनी शोधक कारखानो और इसी प्रकार के अन्य कारखानो ने भी मिलकर ट्रस्ट बनाने शुरू किये। इनमे से अधिकतर ट्रस्टो के हाथ मे इतनी अधिक ताकत थी कि पुरानी गल-घोटू प्रतिस्पर्धा के जमाने मे उतनी ताकत किसी भी कम्पनी के हाथ मे नही रही थी। शुगर ट्रस्ट के बारे मे न्यूयार्क के एक जज ने एक बार कहा था, "यह ट्रस्ट जब चाहे तमाम चीनी शोधक कारखानो को बन्द कर सकता है ' और नये कारखाने खोल सकता है, कच्चे माल की खरीद को सीमित कर सकता है, शोधित चीनी के उत्पादन पर कृत्रिम रूप से सीमा लगा सकता है; जनता को लूटकर अपनी कम्पनियो को धनी बनाने के लिए चीनी की कीमते बढा सकता है और जब चाहे अपने बेवकूफ प्रतिस्पर्धियो को कुचलने के लिए कीमतो को कृत्रिम रूप से गिरा भी सकता है।"

यह कहने की आवश्यकता नही कि इस प्रकार के व्यावसायिक ट्रस्टो की स्थापना की अधिकाधिक आलोचना होने लगी। किन्तु नई-नई विचार-धाराएँ और नए-नए शक्ति स्रोत अमेरिकन समाज पर धीरे-धीरे प्रभाव डाल रहे थे। भौतिकवाद, प्रत्ययवाद और 'वैज्ञानिक नियततत्ववाद' ने अधिकतर व्यवसायियो के मन मे यह आश्वासन पैदा कर दिया था कि स्वार्थ और परार्थ यानी आत्महित और जनहित मे कोई विरोध नही है। वे यह अनुभव करने लगे कि सरकार की अबन्ध नीति (लेसेफेयर अर्थात् व्यापार-वाणिज्य मे हस्तक्षेप न करने की नीति) न केवल 'न्यायपूर्ण' है बल्कि प्रगति और सभ्यता के लिए आवश्यक भी है।

इस विचारधारा के समर्थन मे अधिक निराशावादी पुराने अर्थशास्त्रियो के मत उद्धृत किये जाने लगे और डार्विन के 'प्राकृतिक चयन' (नेचुरल सिलेक्शन) और 'योग्यतम की अतिजीविता' (सर्वाइवल ऑफ दि फिट्टेस्ट) आदि के नियमो की दुहाई दी जाने लगी। सामाजिक डार्विनवाद डार्विन के विकासवाद के सिद्धान्तो की आर्थिक जगत् मे भी अनुकूलता प्रकट करने लगा। जब एक आलोचक ने इस बात की ओर सकेत किया कि समाज को

औद्योगिकीकरण की कितनी वडी कीमत चुकानी पड रही है, तव उसे यह उत्तर दिया गया, "हम केवल समुचित विकास की प्रतीक्षा ही कर सकते हे। यह सम्भव है कि चार या पॉच हजार वर्षो मे विकास के द्वारा मनुष्य आज की सामाजिक परिस्थितियो से वहुत आगे पहुँच जाएँ।"

उन्नीसवी शताव्दी की समाप्ति के नजदीक पहुँचकर आर्थिक अभिवृद्धि मे एक नया मोड आया और औद्योगिक पूँजीवाद के स्थान पर वित्तीय पूँजीवाद का अर्थात् वैको और साहूकारो का सामान्य व्यापारिक गति-विधि पर अधिक प्रभाव और नियन्त्रण होने लगा। निवेश वैकर (इन्वेस्ट-मेट वैकर) निवेशक और उद्योग स्थापना के इच्छुक उद्यमी के वीच की महत्त्वपूर्ण कडी वन गया। जैसे-जैसे लागते वढने लगी और कारखानो का यान्त्रिकीकरण होने लगा, उद्योगपतियो को अधिकाधिक पूँजी की आवश्यकता होने लगी और वे निवेश-वैकरो पर निर्भर करने लगे। लेकिन निवेश-वैकर किसी उद्योगपति को तव तक पैसा नही देते थे, जब तक कि उन्हे यह भरोसा नही हो जाता था कि वह जिसका पैसा उद्योगपति को निवेश के लिए देगे, उसका यह धन सुरक्षित रहेगा। इस प्रकार वैकर कुछ उद्योगो का पुनर्गठन कर देता था और इस प्रकार उस पर अक्सर नियन्त्रण भी स्थापित कर लेता था।

सन् 1890 के दशक की मन्दी के दिनो मे और उसके वाद भी पूँजीगत सामग्री (कैपिटल गुड्स) के उद्योगो मे पूँजी-निवेश की गति कम हो गई और निवेश-वैकर लोगो के पास जमा धन के अप्रयुक्त और 'वेकार' पडे अश को उनसे लेकर इस्तेमाल कर सकते थे। उद्योगो के परस्पर विलय के प्रयत्नो ने भी वेकरो के प्रभाव को वढाने मे सहायता दी। वास्तव मे उद्योगो के पुनर्गठन ने कम्पनियो के प्रवर्तक वैकरो को भारी लाभ पहुँचाना शुरू किया।

किन्तु निवेश-वैकर अक्सर उद्योग मे स्थिरता और स्थायित्व लाने के लिए अपने प्रभाव का उपयोग करते थे। जिस तरह अमेरिका के आर्थिक टोटम स्तम्भ (अमेरिका की पुरानी जन जातियो द्वारा अपने जातीय प्रतीक पशु, पक्षी या वनस्पति का चिह्न अकित करने के लिए लगाया जाने वाला खम्भा) के शिखर पर किसान के चिह्न का स्थान किसी समय उद्योगपति के

चिह्न ने ले लिया था, उसी प्रकार अब उद्योगपति के स्थान पर उद्योगों के लिए पैसा देने वाला पूंजीपति अमेरिका की आर्थिक प्रगति का प्रतीक बन गया था, क्योंकि वह उद्योगपति को उसकी अपनी ज्यादतियों के दुष्परिणामों से बचाता था।

इस नये वित्तीय पूंजीवाद का एक विशिष्ट प्रतीक था जॉन पीयरपॉट मॉर्गन। इसने पूर्व की मुख्य रेल-कम्पनियों को पैसा देकर वित्तीय दृष्टि से अधिक सुदृढ आधार पर प्रस्थापित करने मे बहुत बडी सफलता प्राप्त की थी। इसके बाद उसने डगमगाते इस्पात और अन्य उद्योगों को भी इसी प्रकार का वित्तीय सहारा देना प्रारम्भ किया। वित्तीय क्षेत्र मे उसके बराबर शक्तिशाली आदमी इस देश मे और कोई नही हुआ।

सन् 1901 मे मॉर्गन संस्थान ने युनाइटेड स्टेट्स स्टील कार्पोरेशन का गठन किया जिसमे छोटी बडी 800 इस्पात फर्मे शामिल थी। ये फर्मे राष्ट्र का आधा पिण्ड लोह, कोक और लोह की पटरिया तैयार करती थी और राष्ट्र का कँटीले तारो, कीलो, डिब्बे बनाने वाली इस्पात की चादरो और इस्पात के पाइपो का तो प्राय समूचा उत्पादन ही इन कम्पनियो के हाथ मे था। इसके अतिरिक्त इस्पाती ढाचो का भी आधे से अधिक उत्पादन ये फर्मे करती थी। मॉर्गन संस्थान ने इन सब कम्पनियो को मिलाकर इस 'युनाइटेड स्टेट्स स्टील कार्पोरेशन' को खडा किया था, इसलिए अमेरिका के इस विशाल औद्योगिक कम्बाइन (कम्पनियों का संयोजन) पर उसका नियन्त्रण हो गया। जब मॉर्गन ने इस नई संयोजित कम्पनी मे अपने शेयरो के मूल्य के रूप मे आधा अरब डालर की रकम इस्पात उद्योगपति ऐण्ड्रयू कार्नेगी को दी, तो इस विशाल राशि का हस्तान्तरण उद्योगपतियो पर पूंजीपतियो की विजय का एक प्रतीक बन गया।

बीसवी शताब्दी प्रारम्भ होते-होते उद्योगो की आत्म-रक्षण के उपायो की खोज ने सारे आर्थिक ढाचे को ही बदल दिया। उन्नीसवी शताब्दी के 'प्रतिस्पर्धा' और 'स्वतन्त्र बाजार' के सिद्धान्त को नई औद्योगिक और वित्तीय व्यवस्था की आवश्यकताओ के अनुरूप परिवर्तित कर दिया गया। यद्यपि इन ताकतो के दुरुपयोग और इनसे अमेरिका के आर्थिक जीवन मे उत्पन्न असमानताओं ने विरोध का एक बडा तूफान खडा किया तो भी अमेरिका इन

ताकतो के प्रभाव से पैदा हो रही नई दौलत का उपयोग कर रहा था और वही आर्थिक जीवन की इस नई व्यवस्था का सबसे बड़ा औचित्य और लाभ था।

लेकिन इन नई ताकतो को लोगो ने वस्ता नहीं, भले ही वे नई दौलत पैदा कर रही थीं। जैसे-जैसे ये ताकते वढ रही थी, वैसे-वैसे उन पर अकुश लगाने के लिए कानून भी वढते गए। धीरे-धीरे किन्तु दृढता से लोकतन्त्रीय व्यवस्था यह सिद्ध करती जा रही थी कि सबके लिए अवसरो की समानता के राष्ट्रीय आदर्श को आँच आने पर वह आवश्यक सुधार भी कर सकती है।

निर्माण उद्योगो मे पूँजी द्वारा अदा किया गया भाग 1849-1909
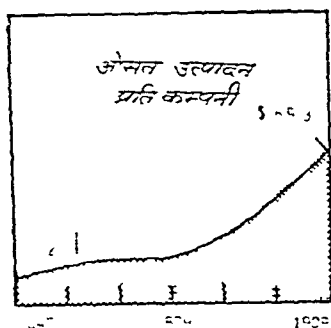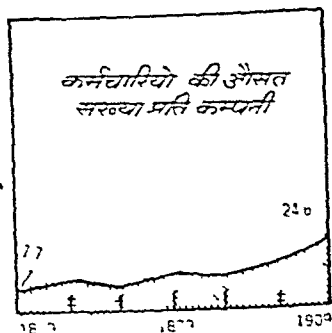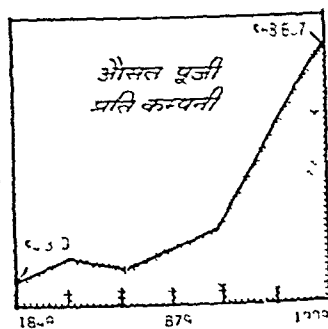
सुधार का युग

आर्थिक इतिहास के प्रसिद्ध लेखक रॉस रॉबर्ट्सन ने लिखा है "सन् 1870 तक हमारे पूर्वजो के लिए यह सम्भव था कि वे अबन्ध नीति वाली अर्थ-व्यवस्था मे बिना इस भय के रह सके कि कोई उन पर हावी हो सकेगा, यह व्यवस्था लगभग वैसी ही थी, जैसी कि ऐडम स्मिथ ने चाही थी—यानी ऐसी व्यवस्था जिसमे सरकार देश के लोगो को बाहर के शत्रुओ और अन्दर के अपराधियो से बचाने और कुछ आवश्यक सेवाएँ करने के सिवाय समाज मे और कोई हस्तक्षेप नही करेगी ."[1]

लेकिन सरकार के शासन सम्बन्धी हस्तक्षेप-हीन कर्तृत्व के बारे मे यह आशावादी दृष्टिकोण सन् 1870 के बाद कायम नही रह सका। उद्योग-व्यवसाय की तेजी से बढ रही शक्ति ने राष्ट्र के इस विश्वास को हिलाना शुरू कर दिया कि लोकतन्त्र के हितो को समुन्नत करने के लिए सर्वोत्तम उपाय बन्धन और हस्तक्षेप से पूर्णत मुक्त अर्थ-व्यवस्था को खुलकर अपना काम करने देना है।

सन् 1900 से पहले के दो दशको के बारे मे लिखते हुए एक और इतिहासकार मार्क सुलिवन ने अमेरिकन जनता की भावनाओ को इन शब्दो मे व्यक्त किया था—"अमेरिका का औसत नागरिक यह अनुभव करता था कि कोई ऐसी शक्ति जिसे वह देख नही पाता और जिसकी ओर वह निश्चित इगित नही कर सकता उसके ऊपर हावी होने का प्रयत्न कर रही है, उसे ऐसा लगता था जैसे कोई उसे घोडा बनाकर उसपर सवारी कर रहा है और मनमानी दिशा मे ले जा रहा है। भीतर-ही-भीतर वह अव्यक्त रूप से यह महसूस करता था कि यह शक्ति उसकी काम करने की स्वतन्त्रता को, उसके इच्छानुसार कार्य करने के अवसर को निष्फल कर रही है "इस अदृष्ट शत्रु

---

1 'हिस्ट्री ऑफ दि अमेरिकन इकॉनमी' न्यूयार्क, हार्कोर्ट ब्रेस, 1955।

को एक व्यक्ति के रूप मे प्रकट करने के लिए वह उसे अदृश्य सरकार, पैसे वाले लोग, धन कुबेर वाल स्ट्रीट या ट्रस्ट आदि नामो से पुकारता था।"[1]

सन् 1870 और 1917 के बीच इस सुधार आन्दोलन का समय और स्थान बदलते रहे और विभिन्न वर्गो ने उसका समर्थन किया। गृह-युद्ध के बाद के दशको मे अमेरिकनो का एक छोटा, किन्तु बहुत शोर-गुल मचाने वाला वर्ग समाजवाद की ओर झुका था, किन्तु उद्योग-व्यवसाय के अधिकतर आलोचक 'स्वतन्त्र व्यापार' व्यक्तिगत सम्पत्ति और व्यक्तिगत उद्योग के विचार को स्वीकार करते थे। उनके सुधार आन्दोलन का मुख्य आशय यह था कि अत्यधिक एकाधिकार को सीमित किया जाय, आय के वितरण के ढाँचे को बदला जाय, एक नियामक और प्रतिसन्तुलनकारी शक्ति के रूप मे राज्य को सुदृढ बनाया जाय और लोकतत्रीय प्रक्रिया को शुद्ध किया जाय।

इन सुधार-आन्दोलनकारियो के उद्देश्य एक-दूसरे से बहुत भिन्न थे। सन् 1880 के दशक मे कुछ धनी, किन्तु विचारशील, सम्भ्रान्त वर्गीय लोग राजनीति मे सिर्फ इसलिए आए कि उस जमाने के सार्वजनिक जीवन मे जो भ्रष्टाचार और भौतिकवाद घुस आया था, उसे चुनौती दे सके। इससे भी पूर्व किसान, छोटे व्यापारी और बडे पोतवणिक (शिपर) रेल-कम्पनियो की मनमाने भाडे नियत करने की नीति के विरोध मे आन्दोलन कर भाडो के नियमन की माँग करते रहे थे, जिसका परिणाम यह था कि 1887 मे अमेरिका का पहला अन्तर्राज्यीय व्यवसाय अधिनियम पास हुआ। इस क़ानून ने रिबेट, पूल और भाडे की दरो मे बरते जाने वाले कुछ अन्य भेदभावो का निषेध कर दिया था। इस कानून मे यह भी कहा गया था कि— 'व्याज की दरे वाजिब' होनी चाहिएँ, किन्तु उसमे यह नही बताया गया था कि 'वाजिब व्याज-दर' की कसौटी क्या होगी। इस कानून के द्वारा सघीय सरकार के सगठन के रूप मे एक अन्तर्राज्यीय व्यापार कमीशन भी बैठाया गया था।

---

1 'अवर टाइम्स दि युनाइटेड स्टेट्स', 1900-1925, खड 2, न्यूयार्क, चार्ल्स स्क्रिब्नर्स सस, 1927।

इसके साथ ही छोटे व्यापारियो, किसानो और श्रमिको की ओर से बराबर आन्दोलन होता रहने के कारण एकाधिकार विरोधी और भी कानून बने। अनेक राज्यो ने खासकर दक्षिण और पश्चिम के राज्यो ने, कम्पनी-गुट विरोधी कानून पास किए, जिनमे एकाधिकार और व्यापार-नियन्त्रण सम्बन्धी सामान्य कानून बनाये गए थे। सन् 1890 मे काग्रेस ने शेरमन ऐंटी ट्रस्ट ऐक्ट (शेरमन कम्पनी-गुट विरोधी कानून) पास किया जिसमे 'ऐसे सब करारो, ट्रस्ट या अन्य रूप मे बनाये गए कम्पनियो के गुटो और सघो या अन्य षड्यत्रो को जो विभिन्न राज्यो के पारस्परिक अथवा अन्य देशो के साथ होने वाले व्यापार को प्रतिबन्धित करते हो, 'गैरकानूनी' ठहराया गया था। यह पहला मौका था, जबकि किसी सरकार ने उद्योग-व्यवसाय मे हरेक को प्रतिस्पर्धा का खुला मौका देने के लिए एकाधिकार के विरुद्ध कदम उठाया था। इस प्रकार शेरमन कम्पनी-गुट विरोधी कानून अमेरिका के आर्थिक इतिहास मे प्रगति की एक बडी मजिल का सूचक है।

परन्तु शुरू के वर्षो मे न अन्तर्राज्यीय व्यापार अधिनियम प्रभावकारी सिद्ध हुआ और न ही शेरमन कम्पनी-गुट विरोधी कानून। इसका एक कारण यह था कि ये कानून पूरी तरह गठे हुए नही थे, और उनमे बहुत-सी त्रुटियॉ थी। दूसरी बात यह कि अमेरिका की न्यायपालिका विचारो की दृष्टि से बहुत अनुदार थी और उसने इन कानूनो के प्रभाव को बहुत हल्का कर दिया था। सन् 1887 से 1905 तक सुप्रीम कोर्ट (उच्चतम न्यायालय) मे इन कानूनो के विरुद्ध 16 मामले गए, जिनमे से 15 मामलो मे कोर्ट ने कमीशन के विरुद्ध फैसला दिया। इसी तरह 1890 और 1901 के बीच न्याय विभाग ने गुटो के विरुद्ध कुल 18 मामले चलाए और उनमे से भी चार मामले दरअसल ट्रेड यूनियनो के विरुद्ध थे।

इसके अलावा कुछ राज्यो मे शेरमन ऐक्ट का प्रभाव कम होने का एक कारण यह भी था कि वहॉ राज्यो के कानूनो ने विशेष कानूनी अनुमति लिये बिना ही कम्पनियो को दूसरी कम्पनियो के शेयर खरीदने का अधिकार दे दिया था। जब किसी कम्पनी के पास किसी अन्य कम्पनी के इतने शेयर होते थे कि वह उस पर नियन्त्रण कायम कर सके तो उस कम्पनी को 'होल्डिग कल्पनी' (नियन्त्रक कम्पनी) कहा जाता था। मॉर्गन कम्पनी दर-

असल इन अनेक नियन्त्रक कम्पनियो की भी नियन्त्रक कम्पनी थी। उसके इस उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि अमेरिका मे एकाधिकार कितना प्रबल था और उसका विस्तार कितना व्यापक था। कम्पनियो के अनेक महत्त्वपूर्ण विलय, खासकर 1893-96 की मन्दी के बाद हुए विलय, इसी प्रणाली से हुए थे।

सन् 1893 के आतक के बाद व्यवसायियो और उद्योग-पतियो की असीमित ताकत को सीमित और नियन्त्रित करने के आन्दोलन ने फिर ज़ोर पकडा। सन् 1893 से प्रथम विश्व-युद्ध के प्रारम्भ तक अबन्ध व्यापार नीति (लेसे फेयर) की खूब आलोचना हुई, उसपर अनेक बार विचार और सशोधन हुए। जैसा कि हमने देखा है, स्वय व्यापारी ही 'आत्मनियन्त्रण' और अनेक प्रकार के सघो और गुटो के निर्माण से स्वतन्त्र व्यापार मे होने वाली ज्यादतियो को रोकने की माँग कर रहे थे।

पोपुलिस्ट आन्दोलन (सरकारी नियन्त्रणवादी दल का आन्दोलन) ने इन ज्यादतियो को दूर करने के लिए राजनीति और सुधार-कानूनो के द्वारा समस्या के समाधान का उपाय प्रस्तुत किया। यह आन्दोलन व्यापार मे 'आत्म नियन्त्रण' की बात का खूब मजाक उडाता था और यही कारण है कि सन् 1890 के दशक के मन्दी के वर्षो मे सारे राष्ट्र मे उसने लोगो का ध्यान अपनी ओर काफी आकृष्ट किया। पोपुलिस्ट दल का कहना था कि व्यापरियो के आत्म-नियन्त्रण के बजाय सरकार को ही व्यापार मे हस्तक्षेप करके उसका नियन्त्रण करना चाहिए। इस दल के लोग यह माँग करते थे कि राष्ट्र की सम्पत्ति का वितरण अधिक व्यापक होना चाहिए, सरकार को लोगो को कर्ज और हल्की व्याज-दरो पर धन देना चाहिए और क्रमिक आय-कर लगाना चाहिए। यह दल काम के घटे आठ करने, गुप्त मतदान प्रणाली प्रारम्भ करने और रेलो और अन्य 'प्राकृतिक साधनो की इजारेदारियो' पर सरकार का स्वामित्व स्थापित करने का भी समर्थक था।

पोपुलिस्ट दल के सिद्धान्तो का प्रमुख प्रवक्ता था नेब्रास्का का विलियम जेनिंग्स ब्रायन, जिसे 1896 के चुनाव मे डेमोक्रेटिक पार्टी ने अपने उम्मीद-वार के रूप मे खडा किया था। उस वर्ष डेमोक्रेटिक पार्टी मे सस्ती व्याज-

दरो पर लोगो को धन मुहैया करने के सवाल पर मतभेद पैदा हो गए थे। राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार का चयन करने के लिए डेमोक्रेटिक पार्टी का जो सम्मेलन हुआ, उसमे ब्रायन ने, जो स्वर्णमान के पूरक के रूप मे चाँदी के सिक्के चलाने का पक्षपाती था, कहा था कि उसका यह चुनाव-सघर्ष धनियो और गरीब श्रमिक वर्ग के बीच होगा। सम्मेलन मे भाषण देते हुए उसने प्रतिनिधियो को गोल्ड डेलीगेट (स्वर्ण प्रतिनिधि) कहकर सम्बोधित किया था और कहा था कि "आप मजदूर के सिर पर काँटो का यह ताज मत रखिए। आप मानव समाज को सोने की इस सूली पर मत लटकाइए।" उसके इस भावपूर्ण भाषण ने सारे सम्मेलन को अत्यधिक प्रभाविक किया।

ब्रायन की इस भावुकताभरी वाक्‌पटुता ने उसे जनता का भी, खासकर पश्चिम और दक्षिण के छोटे किसानो का, काफी समर्थन प्राप्त कराया। किन्तु उसकी लोकप्रियता इतनी व्यापक नही थी कि वह राष्ट्रपति चुन लिया जाता। सन् 1896 के चुनाव मे रिपब्लिकन उम्मीदवार विलियम मैकिनले के हाथो ब्रायन के पराजित होने के बाद पोपुलिस्ट विचारधारा की शक्ति बहुत कमजोर हो गई।

किन्तु सुधारके लिए आन्दोलन फिर भी जारी रहा। उन्नीसवी शताब्दी को समाप्ति से लेकर प्रथम विश्वयुद्ध मे सयुक्त राज्य के प्रवेश तक इस आन्दोलन का नेतृत्व प्रगतिवादी लोग कर रहे थे। इन प्रगतिवादी लोगो का उद्‌गम और उनका झुकाव पोपुलिस्ट लोगो के उद्‌गम और झुकाव से बिलकुल भिन्न था। पोपुलिस्ट विचारधारा को कृषको के असन्तोष से पोषण मिलता था और जनता मे फैली निराशा से उसका जन्म हुआ था, लेकिन प्रगतिवाद की जड शहरी मध्यवर्ग मे थी और वह आर्थिक अभिवृद्धि और जनसाधारण की खुशहाली के युग मे पनपता था।

लेकिन प्रगतिवादी तत्त्व कोई एक ही नही था। प्रगतिवादी आन्दोलन मे अनुदार विचारधारा के उद्‌बुद्ध लोग, उदार विचारधारा के कृषिजीवी पेशेवर राजनीतिज्ञ सभी शामिल थे। किन्तु मुख्यत प्रगतिवादी आन्दोलन व्यापारिक केन्द्रीकरण, नये आवासियो सयुक्त राज्य के पुराने नागरिको मे शामिल करने और राजनीतिक भ्रष्टाचार की समस्याओ पर ही अधिक ध्यान देता था।

'राजनीतिक' प्रगतिवादी लोग राजनीतिक लोकतन्त्र की पुन स्थापना और शासन को फिर से जनता के हाथो मे सौपने की वाते करते थे। उनका कहना था कि राजनीतिक दल प्रशासनिक पदो के लिए अपने उम्मीदवारो का चयन प्रत्यक्ष प्रारम्भिक चुनाव के जरिये करे। वे 'प्रत्यक्ष' लोकतन्त्र की जनमत सग्रह आदि पद्धतियो के भी समर्थक थे।

अन्य प्रगतिवादी लोगो ने नेशनल चाइल्ड लेवर कमेटी (राष्ट्रीय वाल श्रम समिति), नेशनल कज्यूमर्स लीग (राष्ट्रीय उपभोक्ता सघ) और जनरल फेडरेशन ऑफ वीमेन्स क्लव (महिला क्लवो का महासघ) आदि सस्थाएँ वनाई थी। इन सस्थाओ और इसी तरह की अन्य सस्थाओ ने भी अनेक कानून बनाने का प्रस्ताव किया और उनके लिए सघर्ष भी किया। इन कानूनो का उद्देश्य वच्चो और स्त्रियो को शोपण से वचाना, श्रमिको को विशिष्ट परिस्थितियो मे मुआवजा देना, सार्वजनिक स्वास्थ्य की रक्षा करना और न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करना था। सन् 1902 से 1907 तक 43 राज्यो ने, मुख्यत इन प्रगतिशील तत्त्वो के प्रयत्न से ही, वाल श्रम सम्वन्धी कानून पास किये।

प्रगतिवादी तत्त्वो मे एक वर्ग पुराने सम्भ्रान्त सामन्त वर्ग का भी था। इस वर्ग के कुछ लोग इस वात से डरते थे कि कही जन आन्दोलन के परिणामस्वरूप उग्र और आमूल परिवर्तन न हो जाएँ, इसलिए वे नर्म सुधारो के पक्षपाती थे। थ्योडर रूजवेल्ट ने, जो स्वय सम्भ्रान्त उच्च कुल मे उत्पन्न एक अनुदार राष्ट्रवादी था, इस प्रकार के लोगो के दृष्टिकोण को वडे सुविचारित ढग से व्यक्त किया। सन् 1906 मे उसने लिखा था "मैं आज की सामाजिक परिस्थितियो को कतई पसन्द नही करता। आज के अत्यधिक धनी लोग निपट अन्धे और मूर्ख है, वे लोभी और घमण्डी है और योग्यतम वकीलो की सहायता से और अवसर जजो की कमजोरियो और अदूरदर्शिता से अनुचित रूप से समृद्ध हो गए है। इन तथ्यो ने तथा व्यापार और राजनीति मे फैले भ्रष्टाचार ने जन-मानस मे उत्तेजना और रोप की एक अत्यन्त अस्वस्थ अवस्था पैदा कर दी है, जिसकी अभिव्यक्ति हम समाजवादी प्रचार मे हुई असाधारण वृद्धि के रूप मे देख रहे है।"

सन् 1898 मे वह स्पेन और अमेरिका की लडाई मे अश्वारोही सेना

की 'रफ राइडर्स' टुकड़ी के नेता के रूप में राष्ट्र का एक वीर नायक बन गया था। यह युद्ध स्पेनिश प्रभुत्व के विरुद्ध क्यूबा के संघर्ष का परिणाम था। क्यूबा के युद्ध में कर्नल रूजवेल्ट ने जो ख्याति अर्जित की उसने उसे सन् 1900 में उपराष्ट्रपति पद के लिए रिपब्लिकन पार्टी का उम्मीदवार बनवा दिया। उस चुनाव में राष्ट्रपति पद के लिए उम्मीदवार मैकिनले था। एक वर्ष बाद मैकिनले की हत्या हो जाने पर थियोडर रूजवेल्ट राष्ट्रपति पद पर आरूढ़ हो गया। उसकी ख्याति थी कि वह काम करने वाला आदमी है वह
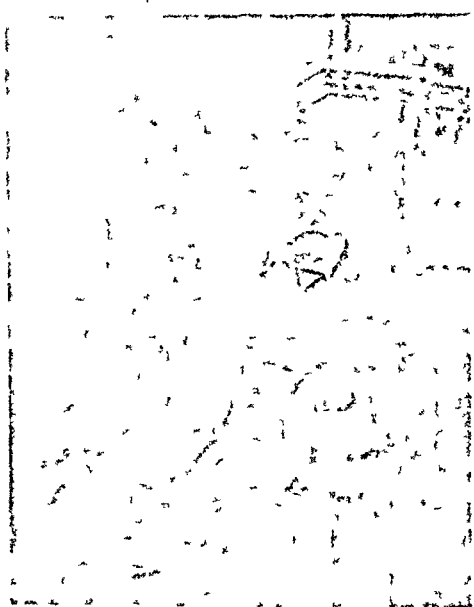
थियोडर रूजवेल्ट

"बात बहुत नर्मी से करता है परन्तु अपने साथ एक बड़ी छड़ी रखता है।" इस ख्याति ने उसे सुधारवादियों और पवित्र व्यापारियों, दोनों में से बहुत-से समर्थक जुटा दिये। वह एक निपुण राजनीति कुशल नेता बन गया जो 'अच्छे' और 'बुरे' कम्पनी-गुटों के भेद को समझता था, एकाधिकारवाद को नियमित और नियन्त्रित करने का समर्थन करता था और सामाजिक न्याय के लिए प्रयत्न करता था। उस जमाने के व्यंग्य चित्रों में उसे कम्पनियों के गुटों और गठजोड़ों को तोड़ने वाला चित्रित किया जाता था। व्यंग्य चित्रकार उसे बड़े आकार के 'कलादंडों' से विशाल सर भारी और लम्बा डंडा लिये हुए चित्रित करते थे।

थियोडर रूजवेल्ट के प्रशासन ने देश की अर्थ-व्यवस्था में सरकार की भूमिका और हस्तक्षेप को बहुत बढ़ा दिया। उस जमाने के कानूनों ने न्यायालयों को इजारे-दारों नियन्त्रित और विनियमित करने के विस्तार

को चुनौती दी गई थी। उनमे इस विचार को भी अस्वीकार किया गया था कि यदि हर आदमी को बिना किसी नियत्रण या बन्धन के अपने हित को समुन्नत करने की छूट दे दी जाय तो उनसे अन्तत जनता का भला ही होगा। रूज़वेल्ट ने व्यापार को नियन्त्रित करने वाले कानूनो को मज़बूत बनाया। अन्तर्राज्यीय व्यापार कानून को अनेक बार सशोधित किया गया।

राष्ट्रपति पद छोडने के बाद रूज़वेल्ट का सुधारो का जोश और भी बढ गया। उनके उत्तराधिकारी विलियम हावर्ड टॉफ्ट के, जिसे उनने स्वय अपना उत्तराधिकारी चुना था, अनुदार प्रशासन ने बहुत जल्दी ही उनका भ्रम भग कर दिया और उनका परिणाम यह हुआ कि जून, 1912 मे प्रोग्रेसिव पार्टी का जन्म हुआ, जिसने राष्ट्रपति पद के लिए थ्योडर रूज़वेल्ट को अपना उम्मीदवार मनोनीत किया।

इससे रिपब्लिकनो के वोट टॉफ्ट और रूज़वेल्ट मे बँट गए और परिणाम यह हुआ कि डेमोक्रेटिक पार्टी के उम्मीदवार वुडरो विल्सन की जीत हो गई। विल्सन ने भी सुधारवादी कार्यक्रम को पूरा करने की शपथ ले रखी थी। सन् 1913 मे राष्ट्रपति पद पर आरूढ होते समय विल्सन ने राष्ट्र को सम्बोधन कर कहा था, "हमे अपनी औद्योगिक सफलता का गर्व रहा है, लेकिन हमने अब तक एक बार भी यह नही सोचा कि इसके लिए हमे कितनी बडी मानवीय कीमत चुकानी पडी है।" इस भाषण मे आगे चलकर उनने 'नई स्वतन्त्रता' का एक कार्यक्रम प्रस्तुत किया जिसका उद्देश्य था

वुडरो विल्सन

विशेषाधिकारो को खत्म करना और 'नियन्त्रित प्रतिस्पर्धा' की प्रणाली का निर्माण करना।

बाद मे अपने कार्यकाल मे विल्सन ने जन-कल्याण के कानूनो को बुद्धिमत्तापूर्ण बताया था। उसने कहा था, "प्रशासन का सुदृढ आधार है न्याय ...जन-जीवन मे न्याय के लिए सबसे पहली आवश्यकता है सबके लिए अवसरो की समानता, और यह समानता तब तक नही हो सकती, जब तक कि पुरुषो स्त्रियो और बच्चो को उनके जीवन मे महान् औद्योगिक और सामाजिक प्रक्रियाओ के परिणामो से, जिन्हे वे परिवर्तित और नियन्त्रित नही कर सकते और न जिनका मुकाबला कर सकते है, सरक्षण प्रदान न किया जाय।"

विल्सन के प्रशासन के प्रथम कार्यकाल की कहानी सुधार कानूनो के निरन्तर निर्माण की कहानी है। क्लेटन कानून ने शेरमन कम्पनी-गुट विरोधी कानून की कुछ मनमानियो का स्पष्टीकरण किया और खास तौर से श्रमिक यूनियनो और कृषि-सहकारी सस्थाओ को उसके अनुबन्धो से मुक्त कर दिया।

सन् 1913 के फेडरल रिजर्व ऐक्ट (सघीय आरक्षित निधि कानून) से केन्द्रीय बैंकिंग प्रणाली का एक ढांचा तैयार किया गया, प्राइवेट महाजनो और बैंकरो की शक्ति को कम किया गया और मुद्रा उपलब्धि पर सरकारी नियन्त्रण को मजबूत किया गया। इसी समय अण्डरवुड तटकर कानून भी लागू किया गया, जो गृह-युद्ध के बाद आयात कर मे कटौती करने का पहला प्रयत्न था। इनके अतिरिक्त ऐडम्सन कानून पास कर रेल कर्मचारियो के दैनिक काम के घण्टे घटाकर आठ किये गए और सघीय कृषि-ऋण कानून से किसानो को सस्ती दर पर ऋण देने की व्यवस्था की गई।

किन्तु सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य था 1914 मे फेडरल ट्रेड कमीशन (सघीय व्यापार कमीशन) की स्थापना था, जिसने उत्पादन क्षेत्र मे भी सार्वजनिक नियन्त्रण और नियमन के सिद्धान्त का विस्तार किया। कमीशन का काम था एकाधिकार की वृद्धि को रोकना और जनता की आँखो मे धूल झोकने वाले विज्ञापनो के प्रसार पर रोक लगाना।

इस काल का आखिरी महत्त्वपूर्ण काम था सविधान मे दो सशोधन।

एक सशोधन से काग्रेस को श्रमिक आयकर लगाने का अधिकार प्रदान किया गया था और दूसरे मे सयुक्त राज्य के सीनेटरो के चुनाव के लिए प्रत्यक्ष चुनाव की प्रणाली की व्यवस्था की गई थी। इससे पूर्व सीनेटर राज्यो के विधानमण्डल द्वारा अप्रत्यक्ष निर्वाचन से चुने जाते थे।

सन् 1917 मे वुडरो विल्सन का पहला कार्यकाल समाप्त होने तक यह स्पष्ट हो गया था कि लोकतन्त्रीय प्रक्रियाएँ अमेरिकन जनता की स्वतन्त्रता की रक्षा करने और उनके लिए आर्थिक उन्नति के अवसर वढाने मे पुन सफल होने लगी है। विल्सन के दूसरे राष्ट्रपतित्व काल मे सयुक्त राज्य अपनी आन्तरिक समस्याओ की उलझनो से मुक्त होकर विश्व के राष्ट्रो के समूह मे अधिकाधिक उत्तरदायित्व की स्थिति प्राप्त करने लगा।

संयुक्त राज्य अन्तर्राष्ट्रीय रंगमच पर
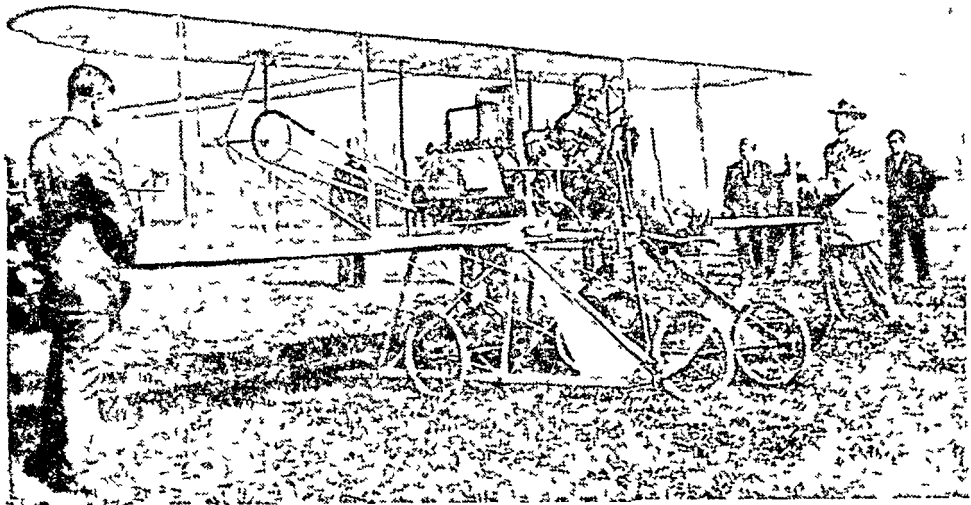
किट्टो मे राइट ब्रदर्स, 1903

सन् 1870 से 1914 तक की साढे चार दशाब्दियो मे विश्व का शक्ति सन्तुलन बदल गया था। आधुनिक उपनिवेशवाद और अन्तर्राष्ट्रीय साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्धाओ के उदय के साथ-साथ उद्योग और वाणिज्य मे देशो का ध्यान लैटिन अमेरिका, एशिया और अफ्रीका आदि ससार के अल्पविकसित क्षेत्रो की ओर जाने लगा और वे उन्हे कच्चे माल के स्रोत और अपने कारखानो मे तैयार सस्ते माल की बिक्री के लिए बाजार के रूप मे देखने लगे। नये उभरते औद्योगिक देशो ने जब ब्रिटेन की सर्वोच्चता और प्रभुत्व की स्थिति को चुनौती देनी शुरू की तो कच्चे माल के स्रोतो और तैयार माल के बाजारो की यह प्रतिस्पर्धा और भी उग्र हो गई। सयुक्त-

राज्य भी, इन उभरते हुए नये औद्योगिक राष्ट्रो मे से एक अधिक महत्त्व-पूर्ण राष्ट्र होने के कारण, स्वभावत इस विश्व सघर्ष का एक भाग बन गया।

गृह-युद्ध से पूर्व सयुक्त राज्य की वैदेशिक नीति मुख्यत कृषि-सम्बन्धी दृष्टिकोणोसे या काटिनेटलिजम (महाद्वीपवाद) अर्थात् आन्तरिक भौगोलिक और आर्थिक प्रसार के दृष्टिकोणो से निर्धारित होती थी। औद्योगिकी-करण ने वैदेशिक नीति को एक सर्वथा नवीन दृष्टिकोण दिया। यह दृष्टि-कोण था समुद्र पारवर्त्ती देशो मे प्रसार का। इससे वैदेशिक नीति मे परि-वर्तन प्रारम्भ हुआ। शुरू मे यह परिवर्तन धीमी गति से था, किन्तु 1893 की मन्दी और 'आवश्यकता से अधिक उत्पादन' के सकट के बाद वह और स्पष्ट हो गया। प्रथम विश्वयुद्ध से पूर्व के दो दशको मे राष्ट्र लैटिन अमेरि-कन देशो के मामलो मे काफी गहराई तक, और यूरोप के मामलो मे भी कुछ हद तक, उलझ गया था।

इन वर्षो के प्रसारवादी दृष्टिकोण का मुख्य आधार व्यापार था। सन् 1869 और 1914 के बीच सयुक्त राज्य का विदेशी व्यापार सचमुच ही राष्ट्रीय आय की अपेक्षा अधिक तेज गति से बढा था। सन् 1870 मे सयुक्त राज्यकासमूचा आयात-निर्यात मूल्य की दृष्टि से 80 करोड डालर था, किन्तु 1914 मे वह 4 अरब 20 करोड डालर हो गया। विदेशो मे अमेरिकन सामान के बाजार के विस्तार के लिए निरन्तर बढ रहे दबाव के पीछे महत्त्वपूर्ण कारण यह था कि एक ओर अमेरिका मे कृपि-उत्पादन देश की आन्तरिक आवश्यकता से बहुत अधिक हो रहा था और अनबिकी फालतू कृषि-जिन्सो के अम्बार लग रहे थे और दूसरी ओर उद्योग और परिवहन मे तेज गति से परिवर्तन हो रहे थे।

औद्योगिक विस्तार और अभिवृद्धि से देश के आयात और निर्यात, दोनो का स्वरुप परिवर्तित हो रहा था। सन् 1865 मे कारखानो मे निर्मित माल सयुक्त राज्य के निर्यात मे कुल 20 प्रतिशत था, किन्तु 1915 मे वह कुल निर्यात के 50 प्रतिशत के लगभग हो गया। इसी अवधि मे अन्य देशो से कारखानो मे तैयार माल का आयात कम हो गया। इस बीच कच्चे माल का आयात, खासकर बढते हुए उद्योगो के लिए आवश्यक रबर, उष्ण-कटिबन्धीय रेशे, निकल, टीन और अन्य धातुओ आदि का आयात,

अधिकाधिक महत्त्वपूर्ण हो गया।

गृह-युद्ध के बाद यूरोप के साथ व्यापार घटने लगा, हालाँकि उस समय भी सयुक्त राज्य के उत्पादनो के लिए वही सबसे महत्त्वपूर्ण बाज़ार था। सन् 1860 मे सयुक्त राज्य से निर्यात किया गया 77 प्रतिशत माल यूरोप गया था, परन्तु 1914 मे यह अनुपात गिरकर 63 प्रतिशत हो गया।

लैटिन अमेरिका, कनाडा और सुदूर पूर्व अमेरिकन माल के बाजार और आवश्यक कच्चे माल के स्रोत का काम करने और इस कमी को पूरा करने लगे। किन्तु सयुक्त राज्य को इग्लैड, जर्मनी और अन्य उभरते औद्योगिक राष्ट्रो से सबसे अधिक प्रतिस्पर्धा का सामना करना पडा लैटिन अमेरिका मे। परिणाम यह हुआ कि अमेरिका का निर्यात व्यापार करने वाला वर्ग सरकार से ऐसी वैदेशिक नीति अपनाने की माँग करने लगा, जो इन क्षेत्रो मे सयुक्त राज्य के व्यापार को बढा सके।

सन् 1893 के बाद सरकार पर यह दबाव और भी बढने लगा, क्योकि कुछ औद्योगिक उत्पादनो की माँग देश के भीतर कम होने लगी थी। निर्यात व्यापारी यह माँग करने लगे कि सरकार विदेशो मे अमेरिकन माल की बिक्री की सम्भावनाओ के बारे मे जानकारी सग्रह करे, अमेरिकन सामान के साथ बरते जाने वाले भेद-भाव का प्रतिरोध करे और वाणिज्य दूतावासो की सेवा को सुधारे। जहाज़रानी सर्विसो के मालिक भी इस आन्दोलन मे शामिल हो गए और उन्होने व्यापारिक जहाज़रानी के लिए सरकारी सहायता की माँग प्रारम्भ कर दी।

पूँजी-निवेशको ने एक और आन्दोलनकारी वर्ग का भी निर्माण किया, जो समुद्रपार के क्षेत्रो मे प्रसार का समर्थक था। सन् 1900 के बाद विदेशो मे लगी अमेरिकन पूँजी अधिकाधिक महत्त्वपूर्ण हो गई। सन् 1900 और 1912 के बीच विदेशो मे, खासकर कच्चे माल के दोहन मे और कनाडा, मैक्सिको, मध्य अमेरिका और कैरेबियन क्षेत्रो मे परिवहन उद्योगो मे, लगी अमेरिकन पूँजी की मात्रा 44 5 करोड डालर से बढकर 1 7 अरब डालर हो गई। उसके बाद दो वर्षो मे यह मात्रा और भी बढकर 2 5 अरब ालर हो गई।

इस पूँजी-निवेश के पीछे 'स्पष्ट नियति' की एक नई भावना काम कर

रही थी, जो आर्थिक उद्देश्यो, मानव सेवा और राष्ट्रवाद का एक सम्मिश्रण थी। परन्तु यह भावना बीसवी शताब्दी की नई उपज नही थी। प्राय शुरू से ही पश्चिम की ओर अमेरिकन लोगो के फैलाव का समर्थन यह कहकर किया जाता था कि "नियति ने हमारे भाग्य मे स्पष्ट रूप से लिख दिया है कि हम इस महाद्वीप मे आगे-आगे फैलते जाएँ, क्योकि भगवान् ने हमारी बढती हुई करोडो की जनसख्या के स्वतन्त्र विकास के लिए यह महाद्वीप हमे दिया है।" बहुत-से सीमावर्ती लोग तो, द तोकविले के शब्दो मे, पश्चिम की ओर आगे बढना ईश्वर की ओर से किया गया एक पवित्र काम समझते थे।

महाद्वीपवर्ती सयुक्त राज्य के एक बार समूचे आबाद हो जाने और उसकी सारी मुफ्त प्राप्य भूमि खत्म हो जाने पर अमेरिकन लोग नए प्रसार के लिए देश के बाहर नजर दौडाने लगे। किन्तु यह साम्राज्यवादी महत्त्वाकाक्षा राष्ट्रीय ज्वर के रूप मे कदापि नही थी। गृह-युद्ध से प्रारम्भ करके 1890 के दशक तक अमेरिका अपने आन्तरिक मामलो मे ही इस कदर व्यस्त और उलझा हुआ था कि उसके लोगो मे एक जबर्दस्त पृथक्कत्ववाद की भावना पैदा हो गई थी। वास्तव मे इन वर्षो मे अमेरिका ने राजनयिक क्षेत्र मे केवल एक ही बडी चाल चली जिसके परिणामस्वरूप अन्तत 1867 मे उसने रूस से अलास्का प्रदेश खरीद लिया, किन्तु देश के प्राय सभी लोगो ने अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे किये गए इस एकमात्र कार्य की भी यह कहकर निन्दा की कि यह काग्रेस की मूर्खता थी।

किन्तु उन्नीसवी शताब्दी समाप्त होने तक व्यापार की आवश्यकताओ, यूरोपीय शक्तियो के आक्रमण साम्राज्यवाद और अमेरिकन लोगो मे अपने स्वतन्त्रता और लोकतन्त्र के आदर्शो को दूसरे लोगो तक भी पहुँचाने की 'स्पष्ट नियति' की भावना के पुन उदय ने पृथक्कत्ववादी भावना को बदलकर बहुत हद तक प्रसार के लिए अत्युत्साह मे परिणत कर दिया।

इन सब दबावो का परिणाम यह हुआ कि सयुक्त राज्य ने दोनो महासागरो मे कुछ स्थानो पर अधिकार कर लिया और कुछ को अपने सरक्षण मे ले लिया। उसने लैटिन अमेरिका और पूर्वी एशिया दोनो मे महत्त्वपूर्ण अमेरिकन हितो की रक्षा के समर्थन मे भी जबर्दस्त रुख अपनाया। सन्

जमाने के सम्मान के विरुद्ध था। उनकी आवाजे प्रादेशिक विस्तार के लिए किये जा रहे प्रबल आन्दोलन मे नक्कारखाने मे तूती की आवाज़ साबित हुई।

नई शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों मे थ्योडर रूजवेल्ट एक शक्तिशाली विदेश नीति का जोर-शोर से समर्थन करने लगा। रूजवेल्ट के प्रथम राष्ट्रपतित्व काल मे उसका एक प्रिय काम था पनामा स्थल-सयोजक मे, जो उस समय कोलम्बिया का एक भाग था, नहर निकालने का अधिकार प्राप्त करना।

सन् 1903 के मार्च मे सयुक्त राज्य ने कोलम्बिया के साथ एक सधि की और एक करोड डालर देकर उससे इस स्थूल-सयोजक मे छ मील चौडा एक नहर प्रदेश प्राप्त करने का फैसला कर लिया। सधि के अनुसार सयुक्त राज्य ने बाद मे भी इसके लिए प्रति वर्ष 2 5 लाख डालर देना स्वीकार किया। लेकिन जब यह सन्धि कोलम्बिया की सीनेट के सामने पेश की गई तो उसने यह कहकर, कि सयुक्त राज्य ने इसके लिए जो रकम देनी स्वीकार की है वह थोडी है, सधि की पुष्टि करने से इन्कार कर दिया।

कुछ महीने के भीतर ही पनामा के लोगो ने, सयुक्त राज्य सरकार के भडकाने पर कोलम्बिया की सरकार के खिलाफ विद्रोह कर दिया। यह ठीक है कि पनामा की अधिकाश जनता कोलम्बिया के शासन से मुक्ति चाहती थी, किन्तु तो भी यदि अमेरिकन नौसेना ने पनामा स्थल-सयोजक के आर-पार कोलम्बियन सेना को जाने से रोका न होता तो यह विद्रोह अवश्य दबा दिया जाता। जो हो, पनामा ने कोलम्बिया से मुक्त होते ही उस सधि को हस्ताक्षर कर पुष्ट कर दिया जिसे कोलम्बिया की सीनेट ने पुष्ट करने से इन्कार कर दिया था।

इस स्थल-सयोजक पर नहर का निर्माण प्रारम्भ होते ही रूजवेल्ट ने यह अनुभव किया कि कैरेबियन क्षेत्र के साथ अमेरिका के सम्बन्धो को दृढ करना जरूरी है। मुनरो सिद्धान्त की दुहाई देकर उसने यूरोपियन राष्ट्रो को चेतावनी दे दी कि यदि उन्होने मध्य अमेरिका मे किसी भी तरह का हस्तक्षेप किया तो सयुक्त राज्य उसे सहन नही करेगा। किन्तु सयुक्त राज्य यह आश्वासन देने के लिए तैयार था कि कैरेबियन क्षेत्र मे आमतौर पर

शान्ति वनाए रखने के लिए जरूरी हुआ तो वह अवश्य हस्तक्षेप करेगा।

किन्तु इसी बीच सयुक्त राज्य के साम्राज्यवाद (याकी इम्पीरियलिज्म) के विरुद्ध लैटिन अमेरिकन देशो मे रोष बढने लगा, जो स्वाभाविक ही था, और उससे अमेरिका के दोनो खडो के सम्बन्ध बिगडने लगे। रूजवेल्ट के वाद जव टॉफ्ट और विल्सन राष्ट्रपति बने तो उनके शासनकालो मे भी यह रोष समाप्त नही हुआ। लैटिन अमेरिकन देशो के साथ सयुक्त राज्य के सम्बन्ध 'डालर कूटनीति' पर आधारित थे—अर्थात् अमेरिका के वैंक मध्य अमेरिकन देशो को जो ऋण देते थे, उनके पीछे सयुक्त राज्य के परराष्ट्र विभाग का वल और समर्थन रहता था। इस प्रकार जव इनमे से किसी देश के आर्थिक ढाँचे पर खतरा पैदा होता तो सयुक्त राज्य सरकार अपने हितो की रक्षा के लिए उसमे तुरन्त हस्तक्षेप करती। यह हालत तब तक चलती रही, जव तक कि दूसरे रूजवेल्ट ने मुनरो सिद्धान्त के इस एकतरफा उपयोग के स्थान पर अच्छे पडौसीचारे की नीति की प्रस्थापना नही की। यह नई नीति अमल मे आने पर सयुक्त राज्य और लैटिन अमेरिका के सम्बन्धो मे सुधार होने लगा।

इधर लैटिन अमेरिका मे यह सब चल रहा था और उधर सयुक्त राज्य पूर्वी एशिया मे अपने प्रभाव का विस्तार कर रहा था। सयुक्त राज्य की सुदूरपूर्वीय नीति चीन के वाजार पर खासकर कच्चे माल से भरपूर मचूरिया पर, केन्द्रित थी। सन् 1890 के दशक के अन्तिम वर्षो मे रूस, जर्मनी, ब्रिटेन और जापान धीरे-धीरे चीनी साम्राज्य पर अधिकार किए जा रहे थे। सयुक्त राज्य इस बात के लिए चिन्तित था कि चीन के लड-खडाते राजनीतिक ढाँचे के परिणामस्वरूप कही उसका वाजार अमेरिका के लिए वन्द न हो जाय।

इसलिए इस बाजार को अमेरिका के लिए खुला रखने के उद्देश्य से सयुक्त राज्य के परराष्ट्र सचिव जॉन हे ने 1899 मे चीन पर अधिकार करने वाली विभिन्न शक्तियो को अपना प्रसिद्ध 'खुला द्वार' पत्र भेजा, जिसमे उनसे यह गारटी करने के लिए कहा गया था कि वे चीन मे अपने-अपने प्रभाव क्षेत्र मे सयुक्त राज्य के व्यापार के लिए समान अवसर प्रदान करेंगे और उससे किसी प्रकार का भेद-भाव नही वरतेंगे। एक वर्ष वाद, चीन मे

विदेशी लोगो के विरुद्ध हुए हास्यास्पद बॉक्सर विद्रोह के बावजूद सयुक्त राज्य ने चीन की स्वतन्त्रता को स्वीकार कर, अपनी 'खुला द्वार' नीति को आगे बढाने और चीन पर विदेशी कब्जे को आगे बढने से रोकने के लिए, एक और कदम उठाया।

'खुला द्वार' नीति की सफलता इस बात पर निर्भर थी कि अमेरिका चीन मे परस्पर प्रतिस्पर्धी साम्राज्यवादी ताकतो मे शक्ति-सन्तुलन किस हद तक रख सकता है। थ्योडर रूजवेल्ट को यह आशा थी कि उत्तरी चीन मे जापान को रूस के खिलाफ खडा करके वहाँ सयुक्त राज्य के व्यापार के लिए 'खुला द्वार' नीति को अधिक सुनिश्चित बनाया जा सकेगा। लेकिन सयुक्त राज्य ने एक गलती कर दी और वह यह कि उसने एक दिशा मे बहुत अधिक जोर दे दिया जिससे जापान का उस क्षेत्र मे अधिक प्रभुत्व और प्रभाव हो गया।

इसलिए जब टॉफ्ट राष्ट्रपति पद पर आसीन हुआ तो उसने दूसरी ही चाल चलना पसन्द किया। उसने यह विचार किया कि अमेरिका की प्राइवेट पूँजी चीन और मचूरिया की रेल कम्पनियो और बैंको मे लगवा दी जाय। किन्तु इसमे भी सरकार असफल रही। शक्तिशाली यूरोपियन देशो और जापान की प्रतिस्पर्धा मे सयुक्त राज्य को 1900 मे अपनाए रुख से बार-बार तब तक पीछे हटते रहना पडा, जब तक कि दिसम्बर, 1941 मे पर्ल हार्बर पर जापान के हमले से मामला बिलकुल चरम सीमा पर नही पहुँच गया।

सन् 1870 से 1914 तक अमेरिका के समुद्रपार प्रसार के बारे मे चाहे कोई भी निष्कर्ष निकाला जाय, एक बात स्पष्ट है कि अमेरिका इस अवधि मे एक विश्व-शक्ति बन चुका था। उसका व्यापार भी उसके अपने पक्ष मे सन्तुलित था और उसने पूँजी और सामान दोनो का निर्यात करना प्रारम्भ कर दिया था। राजनीतिक दृष्टि से भी एक शक्तिशाली नौसेना और दूर-दूर तक फैले अपने समुद्रपारीय प्रदेशो और सरक्षित क्षेत्रो के कारण सयुक्त राज्य एक महा-शक्ति बन गया था। एक सर्वथा अक्षत और नये महाद्वीप के तट पर स्थापित यह कमजोर और लडखडाता देश, जिसके अपने इर्द-गिर्द के गम्भीर खतरो के कारण बचे रहने की बहुत कम आशा थी, अब ससार के महान् राष्ट्रो मे से एक हो गया था।

तीसरा भाग

शक्ति और उत्तरदायित्व

विश्व-युद्ध का प्रभाव

सन् 1914 मे यूरोप मे एकाएक युद्ध छिडने से सयुक्त राज्य चकित रह गया। सयुक्त राज्य के समुद्रपारीय प्रयत्नो और अभियानो से अमेरिकन जनता मे विदेशी मामलो मे एक नई दिलचस्पी अवश्य पैदा हुई थी, किन्तु उसने यूरोप के गठवन्धनो और समझौतो की ओर, जो 1914 की शक्ति-परीक्षा की दिशा मे सकेत करते, पर्याप्त ध्यान नही दिया था।

युद्ध के प्रारम्भिक वर्षो मे राष्ट्रपति विल्सन सयुक्त राज्य की तटस्थता कायम रखने के लिए दृढ सकल्प थे, हालाँकि अमेरिका वित्तीय दृष्टि से मित्र राष्ट्रो की ओर से इसमे काफी उलझा हुआ था। लेकिन जैसे-जैसे समय बीतता गया, विल्सन के लिए यह तटस्थता कायम रखना मुश्किल हो गया। तटस्थ बेल्जियम पर जर्मनी के आक्रमण और युद्ध क्षेत्र मे सयुक्त राज्य के नि शस्त्र व्यापारिक जहाजो पर जर्मन पनडुब्बियो के निरन्तर हमलो ने अमेरिकन जनता को उत्तेजित कर दिया। ब्रिटिश जहाज **ल्युसिटेनिया** के डुबाये जाने से, जिस पर सवार 1153 व्यक्तियो मे 114 अमेरिकन भी थे, अमेरिकन जनता इतनी विक्षुब्ध हुई कि उसने प्रतिशोधात्मक कार्रवाई की माँग प्रारम्भ कर दी। इस शोरोगुल मे विल्सन के पर-राष्ट्र मन्त्री विलियम जेनिंग्स ब्रायन ने, जो पक्का पृथक्कतावादी था और शुरू से ही मित्रराष्ट्रो की ओर से इस मामले मे अमेरिका के किसी भी तरह उलझने के विरुद्ध था, इस्तीफा दे दिया।

इसके बाद जब भी जर्मनो ने सयुक्त राज्य के जहाजो पर हमला किया, विल्सन ने जर्मनी को जिम्मेदार ठहराया और उससे जवाब तलब कर हरजाने की माँग की। धीरे-धीरे यह हालत हो गई कि अप्रैल, 1917 मे उसे काग्रेस से जर्मनी के विरुद्ध युद्ध घोषणा करने का अनुरोध करना पडा। अन्तिम क्षण तक वह यूरोप के राष्ट्रो से अनुरोध करता रहा था कि वे युद्ध को हार-जीत के फैसले तक पहुँचाए बिना समझौता करके शान्ति स्थापित कर दें।

परन्तु अब उसकी शक्ति एक-दूसरे ही मार्ग पर प्रभावित होने लगी और वह 'ससार को लोकतन्त्र के लिए सुरक्षित करने' के धर्मयुद्ध मे जुट गया।

सयुक्त राज्य की सघीय सरकार ने व्यापक आर्थिक नियन्त्रण और साधनो के बँटवारे के लिए जो युद्ध-कालीन कार्यक्रम बनाया, वह अमेरिका के इतिहास मे अभूतपूर्व था। गृह-युद्ध के दौरान मे सयुक्त राज्य और महासघ दोनो की सरकारो ने अपनी-अपनी अर्थ-व्यवस्थाओ पर नियन्त्रण स्थापित किये थे। प्रगतिवादी युग मे द्रुत औद्योगिकीकरण मे उत्पन्न असमानताओ को रोकने और नियन्त्रित करने के लिए काफी कानून बनाये गए थे। लेकिन इनमे से कोई भी कानून इतना व्यापक नही था, जितने कि प्रथम विश्व-युद्ध काल मे बनाये गए कानून थे।

विश्वयुद्ध मे अमेरिका के प्रवेश से पूर्व अमेरिका की अर्थ-व्यवस्था यूरोप के युद्धरत पक्षो को आवश्यक सामान बेचकर और उन्हे ऋण देकर फल-फूल रही थी। जनवरी, 1915 से अप्रैल, 1917 तक अकेले मित्रराष्ट्रो ने अमेरिका से जो ऋण लिया उससे सयुक्त राज्य के अर्थतन्त्र की क्रय-शक्ति मे 5 अरब डालर की वृद्धि हो गई। उस समय सयुक्त राज्य की राष्ट्रीय आय का यह काफी बडा प्रतिशत अश था।

यूरोप मे युद्ध छिडने के बाद मित्रराष्ट्र अपनी आवश्यक सामग्रियो की उपलब्धि के लिए सयुक्त राज्य पर बहुत अधिक निर्भर करने लगे। अमेरिकन उत्पादनो की उनकी भारी माँग ने सयुक्त राज्य मे व्यापार के उत्कर्ष का ऐसा दौर पैदा किया कि यहाँ गडबडी सी मच गई। अमेरिकन कारखानो मे कच्चे माल की कमी हो गई। तैयार माल के अपूर्ण आर्डरो के ढेर लगने लगे। श्रमिको की कमी और हडतालो मे वृद्धि की मुसीबते भी पैदा हो गई। यूरोप को निर्यात करने के लिए इतना माल पूर्वी तट की ओर भेजा जाने लगा कि सयुक्त राज्य की रेलो के लिए उसे ढोना मुश्किल हो गया। जैसे-जैसे लडाई आगे बढने लगी, सयुक्त राज्य मे मित्रराष्ट्रो के ऋण-स्रोतो मे कमी होने लगी। उनके लिए अपनी भारी खरीद का मूल्य चुकाने की समस्या अधिकाधिक विकट हो गई। मुद्रा स्फीति बढने से कीमते भी तेजी से बढने लगी।
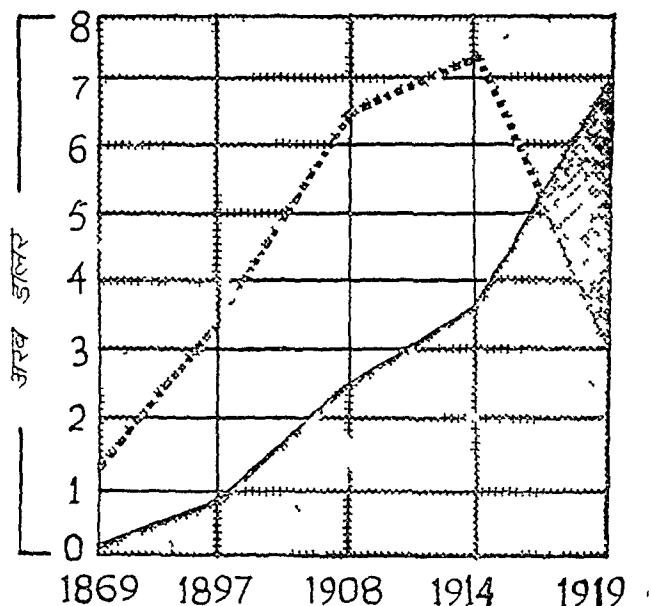
सयुक्त राज्य मे लगी विदेशी पूजी
विदेशो मे लगी सयुक्त राज्य की पूजी
सयुक्त राज्य की अन्तिम स्थिति (देनदार
सयुक्त राज्य की अन्तिम स्थिति (लेनदारी)

सन् 1915 के अन्त मे यह स्पष्ट हो गया कि इन आन्तरिक और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओ का समाधान तव तक नही हो सकता, जब तक कि सघीय सरकार ही आयोजन और समजन का एक व्यापक राष्ट्रीय प्रोग्राम न वनाए। फलत काग्रेस ने एक राष्ट्रीय रक्षा परिषद् का निर्माण किया और उसे राष्ट्र को तैयार करने का एक कार्यक्रम वनाने का काम सौंपा। इसका लाभ यह हुआ कि अप्रैल, 1917 मे सयुक्त राज्य के युद्ध मे प्रवेश करने तक इस परिषद् द्वारा ऐसी अनेक सस्थाओ और सगठनो का जाल विछ चुका था, जो युद्ध-प्रयत्नो को तेजी से आगे वढा सकते थे। इनमे से

अनेक सगठनो के प्रमुख पदो पर औद्योगिक जगत् के ऐसे नेता थे, जो सरकार से 'एक डालर वार्षिक' का नाममात्र का वेतन लेकर मुफ्त काम कर रहे थे।

औद्योगिक वर्ग और सैनिक सस्थानो के बीच सम्पर्क स्थापित करने का भार 'युद्ध उद्योग वोर्ड' पर डाला गया, जिसके सभापति प्रतिष्ठित वित्तदक्ष पूँजीपति वर्नार्ड वारुच थे। वोर्ड ने सयुक्त राज्य मे उपलब्ध तमाम सामारिक आवश्यकता की वस्तुओ और दुर्लभ कच्चे माल की सूचियाँ तैयार की। उसने अत्यावश्यक कच्चे माल की उपलब्धि और खरीद के लिए ससार के सभी देशो को अपने आदमी भेजे। माँगो का विश्लेपण किया गया और यह निर्धारित किया गया कि किन चीजो की खरीद को प्राथमिकता दी जाय, ताकि जहाँ सवसे ज्यादा जरूरत हो वहाँ आवश्यक सामग्री ठीक समय पर पहुँच सके। वोर्ड ने इस सामग्री के विक्रय मूल्य निर्धारित किये और तैयार वस्तुओ के वितरण को नियन्त्रित किया। इसके अलावा उसने निर्माताओ को अपने उत्पादनो के डिजायन और स्टाइलो मे कमी करने की भी प्रेरणा दी। वच्चा गाडियो से लेकर रसोईघरो मे वर्तन साफ करने के लिए लगाए जाने वाले वेसिनो तक, हर चीज के स्टैडर्ड और मानक निर्धारित किये गए और साथ ही उनका सरलीकरण भी किया गया, ताकि उनका उत्पादन वढे और वितरण आसानी से किया जा सके।

वर्नार्ड वारुच, तत्कालीन सरकार के आर्थिक मामलो के सलाहकार और पूँजी-निवेशक

माल के एक स्थान से दूसरे स्थान तक भेजने के लिए राष्ट्र की रेल कम्पनियो को रेल प्रशासन के नियन्त्रण मे सौप दिया गया और उसने सव

रेलो को मिलाकर एक राष्ट्रव्यापी रेल प्रणाली मे परिणत करने की दिशा मे कार्य प्रारम्भ किया। इससे प्रशासन को छोटे-से-छोटे रास्ते से माल इधर-उधर भेजने की सुविधा हो गई और वह बिना किसी बाधा के इजनो और डिब्बो को जहाँ अधिक आवश्यकता होती वहाँ भेज सकता था और एक रेल के अन्तिम स्टेशनो का सभी रेले इस्तेमाल कर सकती थी। इस समन्वित और सगठित रेल कार्यक्रम का परिणाम यह हुआ कि 1916 मे जहाँ एक रेल वैगन का औसत परिवहन 24·96 टन था वहाँ 1918 मे वह 29 28 हो गया। सन् 1917 के प्रारम्भ मे रेलो पर वैगनो की कमी थी, किन्तु वर्ष की समाप्ति तक उनके पास तीन लाख वैगन फालतू हो गए।

खाद्य पदार्थो के उत्पादन और वितरण को नियन्त्रित करने का कठिन काम हर्बर्ट हूवर के खाद्य प्रशासन के ज़िम्मे पडा। उसने कुछ जिन्सो के लिए अधिकतम मूल्य निर्धारित किये। खाद्य पदार्थो का राशनिग करने के बजाय हूवर ने लोगो को अपने लिये प्रति सप्ताह या प्रति मास कुछ दिन गेहूँ और माँस आदि के स्वेच्छया त्याग के लिए प्रोत्साहन दिया और दुर्लभ खाद्य पदार्थो की जगह दूसरे सुलभ खाद्य पदार्थ अपनाने की अपीले की। कुछ विलासिता के खाद्य पदार्थो, जैसे शराब और मिठाई आदि, के उत्पादन को सीमित कर दिया गया।

युद्ध के दिनो मे एक और नई बात हुई और वह यह थी कि सरकार के स्वामित्व मे पहली बार कम्पनियाँ स्थापित हुई। इनके दो मुख्य उदाहरण है यूनाइटेड स्टेट्स ग्रेन कार्पोरेशन (सयुक्त राज्य अनाज कम्पनी), इमर्जेन्सी फ्लीट कार्पोरेशन (आपातकालीन जहाजी कम्पनी)। किन्तु इन कम्पनियो का सगठन और सचालन प्राइवेट कम्पनियो की भाँति ही किया गया। अन्तर सिर्फ इतना ही था कि उनकी पूँजी सरकारी थी और उनका सचालन राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त व्यक्ति करते थे। इन कम्पनियो की सफलता का परिणाम यह हुआ कि बडी मन्दी के दिनो मे इसी तरह के सरकारी कार-बार और भी स्थापित हुए।

सयुक्त राज्य सरकार को प्रथम विश्वयुद्ध की कीमत करीब 24 अरब डालर चुकानी पडी। इसके अलावा करीब 9 5 अरब डालर उसने युद्ध के दिनो मे मित्र देशो को ऋण के रूप मे भी दिए। सन् 1914 से 1918 तक

सरकार का सामान्य खर्च कुल 3 37 अरव डालर हुआ। यह महत्त्व की वात है कि राष्ट्रीय ऋण (सरकार द्वारा जनता से लिया गया ऋण) युद्ध से पूर्व के 1 अरव डालर के स्तर से वढकर 30 अगस्त, 1919 को 26 6 अरव डालर की चरम सीमा पर पहुँच गया।

युद्ध काल की असाधारण माँगो की सभावनाओ को देखकर काग्रेस ने अक्टूवर, 1917 मे एक रैवेन्यू ऐक्ट (राजस्व अधिनियम) पास कर दिया था। नये कानून ने सामान्य आयकर को 2 प्रतिशत से दुगुना यानी 4 प्रतिशत करके कर की आमदनी वढा दी। यही नही, आयकर की दरो मे भी आय की वृद्धि के साथ-साथ वृद्धि कर दी गई जिससे उच्चतम आय वर्ग के लोगो को आमदनी का 68 प्रतिशत आयकर के रूप मे दे देना पडता था। उत्पादन-कर और अतिरिक्त लाभ-कर मे भी भारी वृद्धि कर दी गई। करो और आर्थिक गतिविवि, दोनो मे वृद्धि का परिणाम यह हुआ कि राज्य-कोष मे सामान्य से 10 7 अरव डालर अधिक धन आया। लिवर्टी वाडो (स्वतन्त्रता वाडो) की विक्री से 21 अरव डालर और प्राप्त हुए।

ऊँचे करो और सरकारी नियन्त्रणो के वावजूद युद्ध काल मे मूल्यो के आम सूचक अको मे वरावर वृद्धि होती गई। सन् 1918 मे सभी जिन्सो के थोक मूल्य 1913 के स्तर से 94 3 प्रतिशत ऊँचे थे। इसी अवधि मे खाद्य पदार्थो के मूल्य 108 प्रतिशत और कारखानो मे निर्मित वस्तुओ के मूल्य 98 4 प्रतिशत ऊँचे गए थे।

मूल्य-वृद्धि से कृषि और निर्माण उद्योग, दोनो को लाभ हुआ। कृषि-फार्मो के सचालको और कृषि-जीवी श्रमिको, दोनो की आय 1918 तक 25 प्रतिशत वढ गई। निर्माताओ को भी, खासकर सामरिक महत्त्व की वस्तुओ के निर्माताओ को, इससे लाभ हुआ।

युद्ध की समाप्ति तक औसत वार्षिक वेतन 1914 के स्तर से 63 प्रतिशत ऊँचे हो चुके थे। किन्तु इसका अर्थ यह नही था कि लोगो की क्रय शक्ति भी इसी हिसाव से वढ गई थी। वास्तव मे औद्योगिक श्रमिको की क्रय शक्ति तो 25 प्रतिशत घटी थी। सरकारी कर्मचारियो को भी नुकसान ही रहा था, क्योकि उनके वेतन कानून से वढते थे और उनमे वहुत कम वृद्धि की गई थी। इससे भी वुरी वात यह कि अनेक कर्मचारियो की आय अव कर-

मुक्त नही रही थी।

सम्भवत सबसे अधिक नाटकीय युद्ध-कालीन आर्थिक परिवर्तन विदेशी व्यापार और अन्तर्राष्ट्रीय वित्त के क्षेत्र मे हुआ। सयुक्त राज्य के निर्यात का मूल्य 1914 मे 2 3 अरब डालर था। किन्तु 1917 मे वह बढकर 9 2 अरब डालर हो गया। दूसरी ओर उसके आयात मे 1 अरब डालर से कुछ ही अधिक की वृद्धि हुई। सन् 1914 मे वह 1·8 अरब डालर था, किन्तु 1917 मे वह सिर्फ 2 9 अरब डालर ही हुआ। युद्ध के वर्षो मे मित्र राष्ट्रो को अमेरिकन सामग्री की कीमत चुकाने के लिए 80 करोड डालर का सोना सयुक्त राज्य को देना पडा। इसी बीच विदेशो मे लगी अमरीकी पूँजी भी 1914 के 3 5 अरब डालर के स्तर से बढकर 1919 मे 6 9 अरब डालर तक पहुँच गई। इसी अवधि मे अमेरिका मे विद्यमान विदेशी परिसम्पत्ति 7·2 अरब डालर से घटकर 3 3 अरब डालर रह गई। यह पहला मौका था कि सयुक्त राज्य एक महत्त्वपूर्ण साहूकार (उत्तमर्ण) देश बन गया था।

नवम्बर, 1918 मे विश्वयुद्ध की समाप्ति पर अमेरिकन जनता के मानसिक रुझान मे परिवर्तन हो गया। युद्ध से पूर्व लोगो मे समुद्र पार के प्रदेशो मे पाँव फैलाने का जो आवेग था और जिस देशभक्ति की भावना से प्रेरित होकर उन्होने मित्र राष्ट्रो के 'स्वतन्त्रता और विश्वशान्ति' के सघर्ष मे सहायता दी थी—वे दोनो ही इस युद्ध मे बहुत कुछ क्षीण हो गए थे। युद्ध समाप्त होते ही लोग 'फिर से सामान्य स्थिति की स्थापना' की कामना करने लगे। वे अब किसी भी प्रकार का अन्तर्राष्ट्रीय दायित्व लेने के लिए तैयार नही थे और चाहते थे कि देश उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध के पृथक्त्ववाद मे फिर से लौट जाय।

इस अपसरण का एक कारण यह था कि लोग युद्ध मे उठाई कठिनाइयों और कुर्बानियो को मन से झाड-पोछकर फेक देना और नई युद्धोत्तर कालीन समृद्धि का उपभोग करना चाहते थे। दूसरा कारण यह था कि युद्ध की समाप्ति के बाद जो शान्ति स्थापित हुई थी, उसने उनका भ्रम दूर कर दिया था। शान्ति-सधि सम्मेलन एक दु खद छलना सिद्ध हुआ था। मित्र राष्ट्रो को विलसन के ऐसी शान्ति-सधि के प्रयत्नो मे कोई उत्साह नही था, जिसमे पराजित शत्रु को दड देने की कोई व्यवस्था न हो। इस प्रकार आधुनिक युद्ध

और समुद्र पार के देशो मे व्यापार के लिए चल रही वडे राष्ट्रो की पारस्परिक प्रतिस्पर्धाओ मे अमेरिका ने पहली वार वडे पैमाने पर नैतिक उत्साह से हस्तक्षप किया और उससे जो विजय प्राप्त की वह लोकतन्त्र के लिए एक खोखली विजय सिद्ध हुई। अमेरिकन जनता का मन इससे तुरन्त कडवाहट से भर गया और उसने यूरोप की समस्याओ की ओर से मुँह फेर लेना पसन्द किया।

राष्ट्रपति विल्सन ने अमेरिकन जनता मे उत्तरदायित्व की भावना जगाने और राष्ट्र सघ (लीग ऑफ नेशन्स) के पक्ष मे जनमत का समर्थन प्राप्त करने की वहुत कोशिश की। लेकिन जनता विल्सन के अन्तर्राष्ट्रीय आदर्शवाद को और अधिक सुनने के लिए तैयार नही थी। काफी कटु वाद-विवाद के वाद, जिसने सारे राष्ट्र मे जनमत को भडका दिया, सीनेट ने सयुक्त राज्य को लीग का सदस्य वनाने के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया।

सन् 1920 के चुनाव मे विल्सन के नेतृत्व को लोगो ने ठुकरा दिया। यह स्पष्ट था कि रिपब्लिकन पार्टी ने वक्त की नब्ज को पहचान लिया था। उसने 'फिर से सामान्य स्थिति स्थापित करने' और 'पहले के समान कारवार करने' के नारो के साथ खूब आन्दोलन किया और उनके वल पर वह अपने उम्मीदवार वारेन हार्डिग को वहुत वडे बहुमत से राष्ट्रपति के रूप मे ह्वाइट हाउस मे ले आई। इस प्रकार सयुक्त राज्य के अन्तर्राष्ट्रीयवाद के एक युग पर पटाक्षेप हो गया और उसके साथ ही सरकारी हस्तक्षेप के युग पर भी यवनिकापात हो गया और यह यवनिका तव तक नही उठी, जव तक कि फ्रेंकलिन रूजवेल्ट के 'पुनर्व्यवस्था प्रशासन' का सूत्रपात नही हुआ।

पुन. सामान्य स्थिति की ओर

युद्ध ने जो उखाड-पछाड किये और उससे विश्व मे जो व्यापक परिवर्तन हुए उनसे 'फिर सामान्य स्थिति' की ओर लौटना वास्तव मे एक असम्भव स्वप्न-मात्र सिद्ध हुआ। कुछ समय तक ऐसा लगा कि यह स्वप्न अवश्य सत्य और साकार होगा, लेकिन घटनाओ के कदम जिस ढग से और जिस दिशा मे पड रहे थे, उनसे यह स्वप्न धीरे-धीरे विलीन होने लगा।

युद्ध काल मे जो सैनिक सरचना स्थापित हुई थी और सामरिक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए विशाल औद्योगिक ढॉचा खडा किया गया था, उसे बहुत द्रुत गति से शान्तिकालीन परिस्थितियो के अनुकूल ढाल लिया गया। यद्यपि युद्धकालीन नियन्त्रणो के जल्दबाजी और हडबडी मे समाप्त किये जाने से कीमतो मे एकदम बहुत वृद्धि हो गई, किन्तु सैन्य विघटन मे प्रारम्भ मे कोई खास कठिनाई और बाधा प्रतीत नही हुई और वह आशातीत सफलता के साथ चलता रहा। सघीय सरकार ने अपने व्यय मे बहुत बडी कमी कर दी थी और लगभग चालीस लाख सैनिक हथियार छोडकर फिर से औजार उठाने के लिए देश की श्रम-शक्ति मे लौट आए थे, तो भी 1919 मे पूर्ण रोजगार की स्थिति मे प्राय कोई कमी नही आई थी।

सन् 1920 मे देश की 4·2 करोड की कुल श्रम-शक्ति मे से सिर्फ 1 6 करोड व्यक्ति ही बेरोजगार थे। यह सख्या युद्ध से पूर्व की बेरोजगारी की औसत सख्या से काफी कम थी। किन्तु यह स्थिति किसी सुव्यवस्थित आयोजन का परिणाम नही थी, बल्कि एक सयोग मात्र थी। रोजगार की यह स्थिति सिर्फ इसलिए सम्भव हुई कि सघीय सरकार के व्यय-कार्यक्रमो मे कमी और कृषि-जिन्सो के अत्युत्पादन के दुष्प्रभाव बहुत हद तक असैनिक उद्योगो की नई अभिवृद्धि और यूरोप को किये जाने वाले निर्यात के बढने से हल्के हो गए।

लेकिन दुर्भाग्य से युद्धोत्तर काल की प्रारम्भिक समृद्धि और खुशहाली

ऊषा की मिथ्या लाली थी। यह बात कृषि के क्षेत्र मे और भी अधिक सत्य थी। युद्धकाल मे सरकारी गारटियो से व्यापार मे जो तेजी आई थी और देश के भीतर और विदेशो मे अन्न की जो कमी हो गई थी, उसने युद्ध के एकदम वाद कृषि-उत्पादन को असाधारण रूप से वढा दिया। उदाहरण के लिए 1917 मे जितने रकवे मे गेहूँ की खेती होती थी, 1919 मे उससे 66 प्रतिशत अधिक रकवे मे हुई। किसानो को अपनी उपज का जो मूल्य मिलता था, वह रहन-सहन के व्यय के अनुपात मे अधिक था। इसलिए उनके पास जो फालतू धन बच रहता था उसे जमीनो के सट्टे और बन्धक-व्यापार मे लगाने लगे और जमीनो की कीमते वढने लगी। कृषि के यान्त्रिकीकरण ने उत्पादकता बहुत वढा दी, किन्तु इससे किसानो के सचालन-व्यय भी वढ गए थे। इसलिए 1920 मे जव यूरोप मे कृषि फिर उभरी तो सयुक्त राज्य के किसान सकटापन्न स्थिति मे पड गए।

सन् 1621 मे कृषि-जिन्सो के मूल्यो मे वहुत अधिक मन्दी आ गई और वे युद्धकाल के स्तर से 50 प्रतिशत ही रह गए। यद्यपि कृषि-सगठनो के नेताओ ने हमेशा की तरह फिर अपने उद्धार के लिए काग्रेस का सहारा लिया और इसके लिए काग्रेस की दोनो पार्टियो मे कृपको के पक्ष मे प्रचार किया, तो भी उनका आन्दोलन वहुत कारगर नही हुआ। इस आन्दोलन के फलस्वरूप कुछ कानून वने अवश्य, परन्तु वे इस ढीले-ढाले और छुटपुट ढग से वने कि किसानो की तकलीफ दूर करने मे उनसे अधिक मदद नही मिली।

गाँवो के लोगो की क्रय-शक्ति कम हो जाने और युद्ध समाप्ति के वाद शुरू-शुरू मे पैदा हुए वस्तुओ के अभाव की पूर्ति होने से 1920 मे सामान्य आर्थिक गतिविधि मन्द होने लगी। सन् 1921 मे वह और भी तेज़ी से गिरी जिससे करीव 50 लाख व्यक्ति वेरोज़गार हो गए और व्यापार ठप्प होने और दिवाले निकलने की घटनाएँ वढने लगी। लेकिन कृषि-भिन्न व्यवसायो मे 1921 को मन्दी वहुत स्वल्पकालीन सिद्ध हुई, किन्तु इसलिए नही कि सरकार ने आर्थिक पुनरुद्धार के लिए कुछ विशेष कदम उठाये, वल्कि इसलिए कि सयुक्त राज्य की अर्थ-व्यवस्था बुनियादी तौर पर स्वस्थ आर सवल थी।

युद्धोत्तरकाल मे पुन सामान्य स्थिति की स्थापना की आशा के मिथ्या

सिद्ध होने का एक कारण यह भी था कि राष्ट्र ने विल्सन के उदार नेतृत्व को अस्वीकार कर हार्डिंग के अनुदार प्रशासन को अंगीकार कर लिया था। दुर्भाग्य से नए प्रशासन ने जिसका जनता ने बहुत उत्साह और उमंग के साथ स्वागत किया था, उसकी आशाओ और विश्वास को पूरा नहीं किया।

हार्डिंग प्रशासन के नए अनुदार रूढ़िवादी सब मिलाकर थ्योडर रूजवेल्ट जैसे पिछली पीढ़ी के समादृत रूढ़िवादियो से बिलकुल भिन्न नस्ल के थे। पिछली पीढ़ी के अनुदार पन्थी यह मानते थे कि जिसके हाथ मे अधिकार और सत्ता है, उसके कुछ उत्तरदायित्व भी है। साथ ही वे अबन्ध नीति (जैसे फेयर) की ज्यादतियो के बारे मे भी सजग थे और उन्हे दूर करने के लिए गम्भीरता से कृत सकल्प थे। लेकिन नए युद्धोत्तर कालीन शासन मे निरे राजनीतिक अवसरवादी भरे हुए थे।

हार्डिंग के जमाने मे शासन मे वैसा ही भ्रष्टाचार व्याप्त था जैसा कि गृह-युद्ध के बाद के पुनर्निर्माण के वर्षो मे था। उस समय जो सबसे अधिक सनसनीखेज मामला जनता के सामने आया वह यह था कि स्वराष्ट्र मन्त्री ने सरकार की तेल भडार से भरी जमीने प्राइवेट उद्योगपतियो को रिश्वत लेकर पट्टे पर दे दी थी।

उद्योग-व्यवसाय, श्रम, कृषि, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और वित्त, सभी क्षेत्रो मे युद्ध ने कुछ नई पेचीदगियाँ और उलझने पैदा कर दी थी, जो आसानी से सुलझने वाली नही थी।

युद्धकालीन आयात-स्थिति मे राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था मे सरकार के हस्तक्षेप का विचार बहुत बद्धमूल हो गया था। सरकार ने जिन उद्योगो को अपने हाथ मे लिया था, उनकी सफलता को देखकर कृषको और श्रमिको ने यह आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया कि युद्ध के बाद भी रेलो का सचालन सरकार के हाथ मे ही रहना चाहिए। लेकिन सरकार ने उन्हे पूर्णत अपने नियन्त्रण मे रखने के बजाय प्राइवेट कम्पनियो को लौटाकर सिर्फ उनको विनियमित करने का अपना अधिकार बढा देना पसन्द किया। इसके साथ ही सरकार ने रेल-कम्पनियो को रेलो के सचालन मे होने वाले नुकसान के लिए अतिरिक्त अनुपूर्ति (सब्सिडीज) भी दी।

रेल कम्पनियो और कुछ अन्य उद्योगो के नियमन का अर्थ यह नही था कि युद्ध से पहले के प्रगतिशील युग की स्थिति फिर लौट आई है। यद्यपि देश राजकीय हस्तक्षेप न करने की अबन्ध नीति की ओर फिर से नही लौटा था और युद्ध से पूर्व कम्पनियो की गुट बनाने की प्रवृत्ति और उससे होने वाली हानियो को रोकने का कानून भी ज्यो के त्यो विद्यमान थे, तो भी यह बात जल्दी ही जाहिर हो गई कि युद्धकाल मे सरकार अर्थ-व्यवस्था मे जो हस्तक्षेप करती रही है, उसने वास्तव मे व्यवसायी वर्ग और सरकार के बीच सम्पर्क और सम्बन्धो को अधिक सुदृढ बना दिया है। उद्योग-व्यवसाय पर कानून द्वारा लागू किये गए प्रतिबन्ध काफी शिथिल हो गए, क्योकि इन कानूनो को लागू करने और उनकी व्याख्या करने का भार जिन नियामक कमीशनो, कम्पनी-गुट विरोधी कानून प्रतिपालक डिवीजन और अदालतो पर था, उनमे अधिकाधिक सख्या मे ऐसे लोग शामिल हो गए थे, जिनकी दिलचस्पी स्वय उन हितो के पक्ष मे हो गई थी, जिनके नियमन और नियन्त्रण का भार उन्हे सौपा गया था।

उद्योग-व्यवसायी वर्ग की शक्ति बढ जाने से श्रमिक मोर्चेपर भी स्थिति मे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुआ। युद्धकाल मे उत्पादन बढाने के लिए सरकार ने श्रमिको और मालिको, दोनो को सामूहिक सौदेबाजी के लिए

सफल प्रोत्साहन दिया था, किन्तु अब मालिकों को इस सम्बन्ध मे सरकार के किसी निर्देश या प्रोत्साहन का सामना नही करना पड रहा था। इसलिए जीवन-व्यय मे वृद्धि के कारण श्रमिकों की तदनुकूल मजदूरी बढाने की माग का वे दृढता से मुकाबला करने लगे। परिणाम यह हुआ कि 1919 मे कई हजार हडताले हुई, जिनमे 40 लाख से अधिक औद्योगिक श्रमिकों ने भाग लिया। किन्तु अधिकतर मामलों मे उद्योगों के प्रबन्धकों ने श्रमिकों की माँगों के आगे झुके बिना ये हडताले सफलतापूर्वक तोड दी। सन् 1920 के दशक मे दक्ष कर्मचारियों मे एक स्थायी अनुदार ट्रेड यूनियनवादी प्रवृत्ति बनी रही, परन्तु अदक्ष कर्मचारी यूनियनों की सदस्यता से काफी सख्या मे हट गए और उनकी उग्रता भी कम हो गई।

कैल्विन कूलिज के राष्ट्रपतित्व काल के 'समृद्धि' के जमाने मे भी किसानों और श्रमिकों की हालत कमजोर थी, हालाँकि मोटे आँकडों को देखने से यह बात सही प्रतीत नही होती। इन आँकडों के अनुसार औद्योगिक उत्पादन और राष्ट्रीय आय, दोनों मे 25 प्रतिशत के लगभग वृद्धि हुई और प्रति व्यक्ति वास्तविक आय भी 13 प्रतिशत के करीब बढी।

फिर भी यथार्थ स्थिति यही थी कि श्रमिकों और किसानों को समृद्धि का पूर्ण लाभ नही मिला था और यह बात इन आँकडों का बारीकी से विश्लेषण करने पर पता चल जाती है। निर्माण-उद्योगों मे 1923 और 1929 के बीच प्रति मानव घटा उत्पादकता मे 32 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी,

1929 मे शेयर बाजार के आकस्मिक और जबर्दस्त ध्वस (क्रैश) के रूप मे। कीमतें ऊँची हो जाने से कम्पनियो के शेयर भी ऊँची कीमतो मे बिके। इस बिक्री से लोगो के हाथो मे जो पैसा आया उसके दो परिणाम हुए। या तो उससे बाजार मे ऐसी चीजो की बाढ आ गई, जिन्हे काफी लोग खरीद नही सकते थे, या उससे अन्य कम्पनियो के शेयरो का सट्टा होने लगा। सघीय आरक्षित निधि बोर्ड (फेडरल रिजर्व बोर्ड) की नीति के परिणामस्वरूप उधार और ऋण को प्रोत्साहन मिला और उससे लोगो के हाथो मे सस्ती ब्याज दरो पर बहुत बडी मात्रा मे पैसा आ गया। इस पैसे से लोगो मे शेयर खरीदने की प्रवृत्ति बढी और देखते-ही-देखते उनकी कीमतें उनके वास्तविक मूल्यो से कई गुनी बढ गई। बहुत कम लोगो ने इस अवाछनीय और अवास्तविक स्थिति और शेयरो की आन्तरिक कमजोरी की ओर ध्यान दिया। अन्त मे 1929 मे ऐसी स्थिति आ गई कि तेजी से उत्कर्ष की ओर बढते हुए उद्योगो मे माँग और उत्पादन लगभग बराबर हो गए और शेयर बाजार बुरी तरह टूट गया।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे भी युद्ध ने कुछ पेचीदा उलझने और अन्योन्य विरोध पैदा कर दिये थे। युद्धकाल मे यूरोप के देशो को दी गई सामग्री और ऋणो के कारण सयुक्त राज्य एक अन्तर्राष्ट्रीय साहूकार देश बन गया था। यूरोपियन राष्ट्रो पर अमेरिका का 10 अरब डालर का युद्धकालीन ऋण चढ गया था और यह ऋण चुकाने की आशा वे तब तक नही कर सकते थे। जब तक कि सयुक्त राज्य उनके यहाँ अपनी पूँजी का निवेश न करे और उन्हे अमेरिका को अपना माल निर्यात करके डालरो की प्राप्ति न हो। इस स्थिति को अनुभव कर सयुक्त राज्य के प्राइवेट निवेशको ने यूरोप के देशो मे अपनी पूँजी का काफी निवेश किया भी, क्योकि उनका यह विश्वास था कि यूरोप की युद्धध्वस्त अर्थ-व्यवस्था जैसे ही सँभलने लगेगी, वैसे ही उसकी सामान और सेवाओ की आवश्यकता बहुत बढ जाएगी। किन्तु यूरोप के अधिकतर देशो मे लोगो की क्रय-शक्ति इतनी कम थी कि उनके लिए अपने अधिकाश उत्पादनो को निर्यात करने के सिवाय और कोई उपाय नही था।

किन्तु दुर्भाग्य से सयुक्त राज्य ने अपने उद्योगो को विदेशी प्रतिस्पर्धा

से सरक्षण देने के लिए तटकर बढा कर यूरोपियन देशो के निर्यात के लिए अपने द्वार एक तरह से बन्द कर रखे थे। इन तटकरो का अमेरिका और यूरोप दोनो की अर्थ-व्यवस्थाओ पर बडा विनाशकारी प्रभाव पडा। अमेरिकन किसान की हालत और भी बदतर हो गई, क्योकि यूरोप इन तटकरो के कारण अपने कारखानो मे निर्मित सामान सयुक्त राज्य को निर्यात कर उसके बदले मे अमेरिकन कृषि-जिन्से नही खरीद सकता था। इस स्थिति मे यूरोप अपनी गेहूँ और रूई की आवश्यकता पूरी करने के लिए अन्य देशो के बाजार टटोलने लगा।।

यूरोप की खरीद के अभाव मे सयुक्त राज्य मे कृषि उत्पादनो के भारी ढेर लगने लगे, क्योकि अमेरिका मे उनकी उतनी खपत नही थी। इसका स्वाभाविक परिणाम था मूल्यो मे कमी। किसान इससे एक और मुसीबत मे भी फँस गया। वह मुसीबत यह थी कि उसे अपना उत्पादन तो खुले बाजार मे कम कीमतो पर बेचना पडता था, लेकिन अपनी आवश्यकता की चीजे उसे यूरोप से आयात के अभाव मे एक प्रकार से सीमित और सरक्षण प्राप्त बाजार से खरीदनी पडती थी।

ऊँचे सयुक्त राज्यीय तटकरो के परिणाम अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे और भी गम्भीर थे। यूरोप के युद्ध-ध्वस्त और दरिद्रता-ग्रस्त देशो मे सयुक्त राज्य के ऋणो को चुकाने की सामर्थ्य नही थी। इसलिए धीरे-धीरे अनिच्छा से सयुक्त राज्य को इस ऋण का एक हिस्सा स्वय ही छोडकर बट्टेखाते डाल देना पडा। इसके अलावा अमेरिका के ऊँचे तटकरो के कारण यूरोप के भी अनेक देशो ने अपने यहाँ तटकरो की दरे ऊँची कर दी। अन्तत इसका नतीजा यह हुआ कि सयुक्त राज्य के विदेशी व्यापार के सब स्रोत सूख गए, जबकि उस समय उनकी सबसे अधिक आवश्यकता थी।

सक्षेप मे यह कहा जाता है कि 'पुन सामान्य स्थिति' स्थापित करने की आकाक्षा ऐसी अनेक उलझनो और विरोधात्मक गुत्थियो मे फँस गई, जिनके परिणाम किसी भी दशा मे महासकट से कम नही थे। जस्टिस ब्रैडीज़ का यह कहना बिलकुल सही था कि "यूरोप युद्ध से ध्वस्त हुआ और हम उसके परिणामो से।"

फिर भी इस बात से इन्कार नही किया जा सकता कि अपनी अर्थ-

व्यवस्था मे इतनी मन्दी और ह्रास आ जानेपर भी अमेरिकन समाज भविष्य के लिए आशान्वित था। सन् 1920 के दशक मे ऐसी बहुत-सी आर्थिक उपलब्धियाँ थी, जिन्होने उत्पादन के और देश की जनता के भीतर उस की खपत के स्तर को एक नये ऊँचे स्तर पर पहुँचा दिया था। अन्य अनेक देशो की तुलना मे सयुक्त राज्य मे आर्थिक गति-विधि और उन्नति के अवसर और सामाजिक गतिशीलता का स्तर अधिक ऊँचा और लचीला था। अधिकतर बाहरी ससार अमेरिका की सफलताओ और उपलब्धियो की प्रशसा करता था।

सयुक्त राज्य की जनसख्या, श्रम-शक्ति और रोजगार की स्थिति, 19-1929
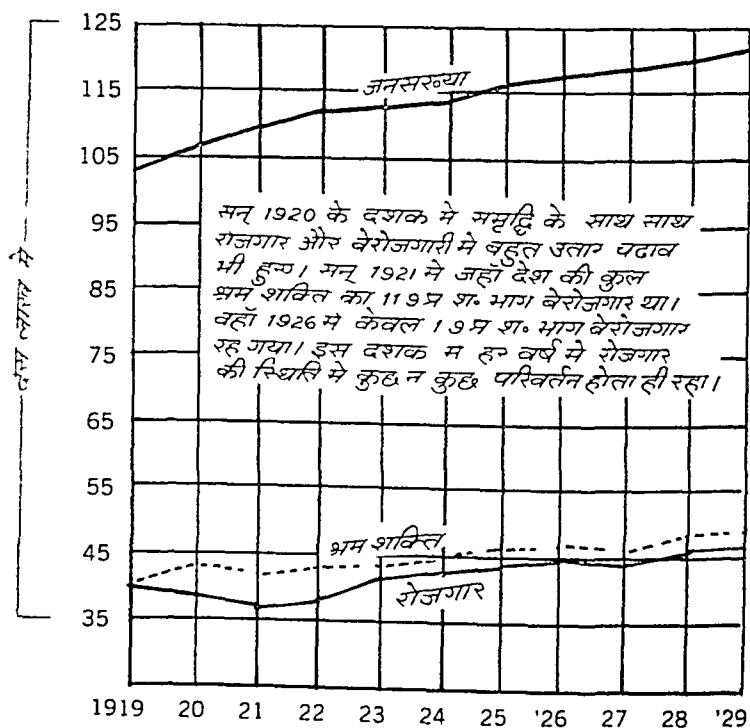
वास्तव मे 1920 का दशक एक 'लाभकारी विडम्बनाओ' का युग था। जिस पुराने जमाने को याद करके लोग तरसते थे, उसे फिर से लौटा लाने के बजाय उसने एक सर्वथा नवीन युग के लिए द्वार खोल दिया। आज हमारे सामने जो अत्यधिक जटिल आर्थिक समस्याएँ है, उनकी नीव इस दशक मे ही पड रही थी। ये समस्याएँ है—नई तकनीकी विधियो के आविष्कार से कुछ लोगो का अस्थायी तौर पर स्वल्पकाल के लिए बेरोजगार हो जाना, उपनगरो की स्थापना और उसके फलस्वरूप शहरी क्षेत्रो की स्थिति मे ह्रास, मूल्यो के स्तर का बराबर ऊँचा चढते जाना, और निरन्तर बढ रही जनसख्या के लिए देश के उपलब्ध साधनो का यथासम्भव समुचित उपयोग।

तब प्रश्न यह उठता है कि जब हम 1920 के इस दशक का सिहावलोकन करते है, और यह दशक हमारे वर्तमान दशक से बहुत दूर भी नही है, तो हमे वह इतना विचित्र क्यो लगता है ? इसका उत्तर यह हो सकता है कि 'आश्चर्यजनक विचित्र बेहूदगियो' का यह युग—एक अन्य समकालीन प्रेक्षक के शब्दो मे,' पुरानी व्यवस्था का पतझड' था।

शेयर बाज़ार टूटा

सन् 1929 मे शेयर वाजार मे हुए जवर्दस्त ध्वस और 1930 के दशक की जवर्दस्त मन्दी, दोनो ने अमेरिकन अर्थ-व्यवस्था को इतने जोर के झटके से झकझोरा कि उसका कम्पन अभी तक विद्यमान है। शेयर वाज़ार को लगा झटका इतना जवर्दस्त और आकस्मिक था कि लोग चकित रह गए और सहसा उसपर विश्वास ही नही कर सके। अमेरिकन लोगो का आम खयाल यह था कि वे समृद्धि के विशाल शान्त सागर पर विहार कर रहे है। किन्तु एकाएक उनकी नैया तूफानी सागर को चचल लहरो के थपेडे से गरीवी और मन्दी की कठोर चट्टान से जा टकराई। यह तूफान एकाएक कैसे आ गया ?

सन् 1920 के दशक मे सयुक्त राज्य का अपनी अर्थ-व्यवस्था के प्रति निश्चिन्तता का जो भाव था, वह उतना मूर्खतापूर्ण नही था, जितना कि आज सिहावलोकन करते हुए प्रथम दृष्टि मे लग सकता है। उस दशक मे व्यापार-व्यवसाय के उत्कर्ष को देखते हुए आशावादी होना किसी भी तरह स्वाभाविक नही था। इसमे सन्देह नही कि 1921 मे कुछ मन्दी आई थी और 1924 मे और उसके वाद 1927 मे वृद्धि की गति मन्द हुई थी, परतु हर वार अर्थ-व्यवस्था मन्दी और शिथिलता से उवर कर ऊपर आ गई थी। इसलिए लोगो का यह समझना अस्वाभाविक नही था कि मन्दी के ये हल्के झोके प्रकृति की तेज धारा मे उठने वाली लहरो से अधिक नही है। यही कारण है कि वहुत-से लोगो ने विश्व-युद्ध के वाद अर्थ-व्यवस्था मे हुए इन तीन समजनो को काफी चिन्ताहीन और निरुद्विग्न दृष्टि से देखा।

सन् 1929 तक, सघीय आरक्षित निधि (रिजर्व) के सूचक अको के अनुसार, औद्योगिक उत्पादन 1922 के स्तर से लगभग 50 प्रतिशत ऊँचा था। सन् 1923 से 1926 तक निर्माण-उद्योगो मे नई मशीनरी और सयन्त्र लगाने पर औसतन दो अरव डालर प्रति वर्ष व्यय किया जाता रहा। इस अवधि

मे एक तरह से पूर्ण रोजगार की स्थिति थी और यही नही, कारखानो मे काम के साप्ताहिक घटो मे भी कुछ कमी हो गई थी।

इन प्रभावोत्पादक आँकडो के पीछे प्रेरक शक्ति के रूप मे कुछ तकनीकी आविष्कार और नवीन प्रक्रियाएँ विद्यमान थी। निर्माण की कुछ नई विधियो का आविष्कार होने और शक्ति (पावर), परिवहन और सचार के साधनो मे सुधार से नये पूंजी-निवेश और आर्थिक अभिवृद्धि की एक लहर आ गई। उद्योग-विद्या और तकनीक की क्रान्ति के साथ-साथ अमेरिका मे और अमेरिकन जनता की जीवन-पद्धति मे कुछ स्पष्ट और असाधारण परिवर्तन हुए।

किस्तो पर खरीद और बिक्री की पद्धति ने मोटर कार और अन्य टिकाऊँ उपभोग्य वस्तुओ की माँग पैदा कर दी। देश मे सडको के जाल का तेजी से विस्तार हो रहा था और शहर सडको के जरिये गाँवो और ऐसे मनोरम और स्वास्थ्यवर्धक स्थानो से जुडते जा रहे थे, जहाँ लोग छुट्टी मनाने के लिए जाते थे। शहरो से मुहल्ले के मुहल्ले उठकर उपनगरो मे जा रहे थे।

असेम्बली लाइन पद्धति (कारखानो मे एक के बाद एक पुर्जो को जोड-जोडकर और उन्हे आगे बढाते हुए सामान तैयार करने की 'सयोजन श्रृखला' की प्रणाली) और बडे पैमाने पर सामूहिक बिक्री की प्रणाली अधिकाधिक किस्मो की उपभोग्य वस्तुओ के उत्पादन और बिक्री मे इस्तेमाल की जाने लगी। इस्पात, रबर और काँच आदि बुनियादी और सहायक उद्योगो के उत्पादनो की बिक्री का तेजी से विस्तार होने लगा। सन् 1923 से 1929 तक बिजली का उत्पादन दुगुना हो गया। सन् 1920 के दशक मे रेडियो या अन्य सामूहिक प्रचार साधनो के जरिये वस्तुओ का विज्ञापन अपने-आपमे एक अरब डालर वार्षिक का विशाल उद्योग बन गया। उत्पादको मे टैकनीशियनो, व्यवसाय अधिकारियो और विभिन्न प्रकार के छोटे-छोटे धन्धे चलाने वालो के नये मध्यवर्ग की आवश्यकताओ और इच्छाओ की पूर्ति की होड लग गई।

किन्तु इसके बावजूद देश का आर्थिक चित्र सब मिलाकर किसी भी कदर आकर्षक नही था। सन् 1920 के दशक मे समृद्धि के बीच ही मन्दी

और आर्थिक शिथिलता के बीज अकुरित होने लगे थे। किसान उस समय भी सुदूरव्यापी मन्दी और शिथिलता के भँवर मे फँसे हुए थे, हालाँकि उनमे से बहुतो ने नये यन्त्रो और मशीनो के लिए पैसा उधार ले लिया था। उनकी दुर्दशा मे बीच-बीच मे कभी-कभी कोई छोटा-मोटा कानून बन जाने से कुछ राहत मिल जाती थी। दक्षिणी राज्य गरीबी और अभावग्रस्तता के शिकार थे और यही हाल विदेशो से आए आवासियो से आबाद नई गन्दी शहरी बस्तियो का था। इस दशक मे उत्पादकता मे जो भारी वृद्धि हुई थी, उसके लाभ मे से वेतन-भोगियो को समुचित हिस्सा नही मिला था। आज के स्तर के अनुसार उस समय राष्ट्रीय आय का वितरण बहुत असमान ढग से हो रहा था, इसलिए मोटरकारो, मकानो, घरेलू उपयोग के यन्त्रो और अन्य टिकाऊ उपभोग्य वस्तुओ के व्यापार मे जो तेजी आई थी, उसका आधार बहुत छोटा जन-समुदाय था।

लोगो को सस्ती ब्याज-दर पर धन उपलब्ध कराने की नीतियो का परिणाम यह हुआ कि लोग इस सस्ते सुलभ धन के लोभ से खूब कर्जदार हो गए और कर्ज मे लिये हुए पैसे को सट्टे-फाटके मे लगाने लगे। यद्यपि अधिकाधिक शेयरो की बिक्री के कारण कम्पनियो मे खूब पैसा आ रहा था, किन्तु तो भी कम्पनियो का यह ढाँचा, बुनियादी तौर पर भीतर से पोला और कच्चा था। नये उभर रहे उद्योगो की सुरक्षा का आधार सिर्फ यही था कि उन्हे उपभोक्ताओ की क्रय-शक्ति का एक व्यापक सहारा प्राप्त था। लेकिन मजदूरियो और वेतनो मे वृद्धि इतनी नही हो रही थी कि वेतन-भोगियो और श्रमिको को उपभोग्य वस्तुओ की खरीद के लिए अधिक गुजायश मिल सके। उद्योगो के सचालको की प्रवृत्ति यह थी कि मजदूरियाँ और वेतन बढाए नही जाएँ और उससे कम्पनियो को जो बचत हो उसे फिर से दूसरी कम्पनियो मे ही निवेश कर दिया जाय।

इसका परिणाम यह हुआ कि शेयरो मे धन का निवेश तो बहुत अधिक हो गया, किन्तु उत्पादित वस्तुओ की खपत और बिक्री मे अनुपात की दृष्टि से कमी रह जाने के कारण उन (शेयरो) की असली कीमत कम हो गई। विश्व की अन्तर्राष्ट्रीय वित्त-व्यवस्था के दोषपूर्ण होने और बुनियादी जिन्सो के अन्तर्राष्ट्रीय मूल्यो मे अस्थिरता रहने से कम्पनियो का पहले से ही

असन्तुलित ढाचा और भी कमजोर होने लगा।

परन्तु इन सब पेचीदा घटनाओ के लिए कोई एक वर्ग ही पूर्णत जिम्मेदार नही था। उदाहरण के लिए सघीय आरक्षित निधि बोर्ड (फेडरल रिजर्व बोर्ड) को इस बात के लिए दोषी ठहराया जाता है कि उसने 1920 के दशक मे सस्ती दरो पर लोगो को धन उपलब्ध कराने की नीति अपना कर सट्टे-फाटके की प्रवृत्ति को बेलगाम कर दिया। यद्यपि यह कहा जाता है कि बोर्ड चाहता तो वित्तीय कारबार करने वाली सस्थाओ पर कुछ नैतिक दबाव डाल सकता था, परन्तु वास्तविता यह है कि आज उसे शेयर बाजार को नियन्त्रित और विनियमित करने के जो अधिकार प्राप्त है, वे उसे उस समय प्राप्त ही नही थे। बोर्ड को उस समय अनुसूचित बैको से यह कहने का भी अधिकार नही था कि वे अपनी जमा रकमो का अधिक भाग आरक्षित निधि के रूप मे अपने पास ही रखे, ऋण के रूप मे लोगो को न दे। कानून मे बैको के लिए जमा रकमो का कुछ 13 प्रतिशत ही आरक्षित निधि के रूप मे रखना अनिवार्य था। (आज सघीय आरक्षित निधि बोर्ड बैको को अपनी जमा रकमो की 26 प्रतिशत तक राशि आरक्षित निधि के रूप मे रखने के लिए मजबूर कर सकता है।'

आज सिंहावलोकन करते हुए यह कहना बहुत आसान है कि उस समय राजनीतिक नेताओ ने ऐसे महत्त्वपूर्ण और कठोर निश्चय क्यो नही कर डाले, जो राष्ट्र को उस आर्थिक महाविपत्ति से बचा सकते, जो बाद मे उस पर आ पडी। वस्तुस्थिति यह है कि उस समय सयुक्त राज्य जिस महानतम समृद्धि का उपभोग कर रहा था, उसे देखते हुए मुद्रा की अवस्फीति की वकालत करने के लिए बडे साहस और अन्तर्दृष्टि की आवश्यकता थी।

सामना करना पडे"—उन्होने दूसरे विकल्प को ही पसन्द किया क्योकि वे तात्कालिक विध्वस से होने वाली राजनीतिक प्रतिक्रियाग्रो का खतरा मोल लेने को तैयार नही थे।

किन्तु सब मिलाकर देश की ग्रार्थिक प्रणाली मे जनता का बडा गहरा विश्वास था, क्योकि उसे अर्थशास्त्र के नियमो ग्रौर सिद्धान्तो का कतई ज्ञान नही था। सट्टे-फाटके को लोग एक सम्मानित धन्धे के रूप मे देखते थे। कम्पनियो के ग्रध्यक्षो से लेकर दफ्तरो के छोकरो तक हर ग्रादमी शेयरो के भावो पर नजर रखता था कि कैसे वह ग्रच्छी चल रही कम्पनियो के शेयर खरीद या वेचकर ग्रानन-फानन मे ग्रमीर बन जाय। वास्तव मे इस उत्कर्प के प्रारम्भिक दिनो मे कुछ साधारण कम्पनियो के शेयर उनके वास्तविक मूल्य से भी नीचे थे, पर शेयरो की खरीद का ज्वर जैसे ही देश पर हावी हुग्रा, उन्ही के मूल्य कल्पनातीत ऊँचाई पर पहुँच गए।

स्थावर सम्पत्ति का सट्टा-फाटका भी इसी तरह ग्रन्धाधुन्ध चल रहा था। सन् 1920 के दशक मे फ्लोरिडा पयटन की दृष्टि से वहुत ही लोकप्रिय हो गया, जिसका नतीजा यह हुग्रा कि वहाँ जमीनो की कीमते चढकर ग्रासमान से जा लगी। हालाँकि 1926 मे फ्लोरिडा के जमीन के धन्धे मे वुरी तरह गिरावट ग्रा गई थी, किन्तु फिर भी लोगो की ग्राँखे नही खुली ग्रौर ग्रन्य ग्रार्थिक क्षेत्रो मे ग्रन्धाधुन्ध सट्टा-फाटका करने की प्रवृत्ति पर कोई रोक नही लगी।

सन् 1926 ग्रौर 1929 के बीच शेयरो की कीमते दुगुनी हो गई। सन् 1929 की 15 ग्रक्टूबर को एक प्रमुख ग्रर्थशास्त्री ने घोषणा की कि शेयरो की कीमते जिस ऊँचे स्तर पर पहुँच गई है, वह ग्रब स्थायी रहेगा। लेकिन उसी दिन शेयर वाजार मे ग्रौसतन हर शेयर मे दस ग्रश (मूल्य की मुद्रा इकाई) गिरावट ग्रा गई। यही चीज ग्रगले दिन हुई। ग्रगले सप्ताह फिर पिछले सप्ताह की भाँति शेयर वाजार की स्थिरता का विश्वास प्रकट किया गया। लेकिन 23 ग्रक्टूबर को फिर शेयर वाजार मे हर शेयर मे ग्रौसतन 50 ग्रश की कमी ग्रा गई। ग्रौर ग्रगले दिन यानी 24 ग्रक्टूबर, 1929 को, जिसे ग्रमेरिका के ग्रार्थिक इतिहास मे 'काला गुरुवार' कहा जाता है, शेयर वाजार एकदम उखड गया ग्रौर एक ही दिन मे 1 करोड 30 लाख

शेयर इस हाथ से उस हाथ गए। शेयरो की कीमतें उस दिन इतनी गिरी कि वाल-स्ट्रीट के इतिहास मे पहले कभी नही गिरी थी। इस वित्तीय सकट की चरम सीमा 29 अक्टूबर को आई, जबकि 1 करोड 65 लाख शेयर और बाजार मे बिक्री के लिए झोक दिये गए। धनी बनने की अनि-रजित आशाओ का बुलबुला अन्त मे फूट ही गया।

यह वित्तीय सकट 1932 तक चलता रहा, क्योकि शेयरो की कीमते गिरने पर सट्टा करने वालो से दलालो की मार्जिन की माँग बढती गई। (जब कोई व्यक्ति नकद पैसा दिये बिना, मार्जिन यानी सौदे की सम्भावित क्षति को पूरा करने के वचन पर, कुछ शेयर खरीदता है तो उसे उन शेयरो मे से कुछ इस मार्जिन की जमानत के रूप मे दलाल के पास रखने पडते है। अगर उन शेयरो की कीमत गिरती है तो मार्जिन की जमानत (कोलैटरल) के रूप मे रखे गए शेयरो की कीमत भी गिर जाती है और इस मार्जिन के नुकसान की पूर्ति शेयर को बेचकर की जाती है।)

ग्रीष्म ऋतु से गिरने लगा था। सात वर्ष तक निरन्तर भवन-निर्माण मे वृद्धि और यान्त्रिक साधन-सामग्री और निर्माण-उद्योगो के चरम उत्कर्ष के बाद यह गिरावट का रुझान आया था। उस समय तक जो वास्तविक माँग थी उसके एक बडे भाग की पूर्ति हो चुकी थी। इसलिए भी कुछ गिरावट और शिथिलता आना स्वाभाविक था।

किन्तु 1929 और 1932 के बीच बहुत-सी ऐसी ताकते काम करती रही, जिन्होने अर्थ-व्यवस्था को नीचे गिराने की कोशिश की। यही वजह है कि अर्थ-व्यवस्था को साँस लेने के लिए सीधा खडे होने का अवसर आसानी से नही मिला। राष्ट्रीय आय इस अवधि मे सिकुडकर आधी से भी कम रह गई और बेरोजगारो की सख्या 1 करोड 20 लाख तक पहुँच गई। फर्मों के पास इतनी भी शक्ति नही रही कि वे अपनी पूँजी पर सामान्य मूल्य ह्रास विधि (डेप्रिसियेशन) का अश अपने लाभ मे से काट कर निकाल सके। इसलिए 1932 मे नया वास्तविक पूँजी निर्माण जरा भी नही हुआ, बल्कि मूल्य ह्रास निधि मे धन जमा न किये जाने से सामान्यत जितना पूँजी-निर्माण होना चाहिए था, वह भी नही हो सका। दूसरे शब्दो मे पूँजीगत सामग्री की उपलब्धि कई अरब डालर कम हो गई।

विश्व व्यापार और अन्तर्राष्ट्रीय वित्त उपलब्धि मे गिरावट आ जाने से सयुक्त राज्य मे मन्दी का प्रारम्भिक दौर और भी उग्र हो गया। यूरोप प्रथम विश्वयुद्ध के ध्वस से अभी तक उबर नही सका था और जब अमेरिका ने विदेशो को ऋण देने मे कमी की, तो ब्रिटेन को भी मजबूरन वैसा ही करना पडा। इसका परिणाम यह हुआ कि जर्मनी और आस्ट्रिया के बैंको का सारा ढाँचा ही बैठ गया। यूरोप मे आई इस मन्दी की अमेरिका पर फिर प्रतिक्रिया हुई और यूरोप को सयुक्त राज्य का निर्यात घट गया। अमेरिका के वित्तीय सकट और अमेरिकी ऋण के अभाव के कारण डालरो की कमी हो जाने से न तो युद्ध-जर्जर यूरोप और न ही सदा कमज़ोर रहने वाले कच्चे माल के उत्पादक देश सयुक्त राज्य से अपना आयात का प्रवाह जारी रख सके।

ये सब घटनाएँ मोटे तौर पर एकसाथ ही, ऐसे ज़माने मे हुई, जब कि लोगो की आर्थिक अन्तर्दृष्टि कमज़ोर थी और साहसी सार्वजनिक नीति

अपनाने की इच्छा का अभाव था। एक स्वस्थ आदमी को अगर एक समय मे एक ही रोग घेरे तो वह उस पर विजय पा मकता है, किंतु अगर एक साथ उमे वहुत-से रोग आ घेरे तो वह उनसे पार नही पा सकेगा और वे उसे धराशायी करदेगे। ठीक उसी तरह अनेक प्रतिकूल परिस्थितियो ने मिलकर एकसाथ अमेरिकाकी अर्थ-व्यवस्था को आ घेरा और उसीका परिणाम था कि वह 1929 के वाद आनेवाली भयकर मन्दी से अपने-आपको बचा नही सकी।

यह विचित्र बात है कि 1920 का दशक समाप्त होने पर आमतौर पर सभी की यह राय थी कि 'मूलत परिस्थितियाँ अच्छी' ही है। लोग कहते थे कि यदि हम अपनी अर्थ-व्यवस्था मे कोई परिवर्तन न करे तो देश की समृद्धि फिर

सामान्य शेयरों के मूल्यों के सूचक अंक
1935-39=100
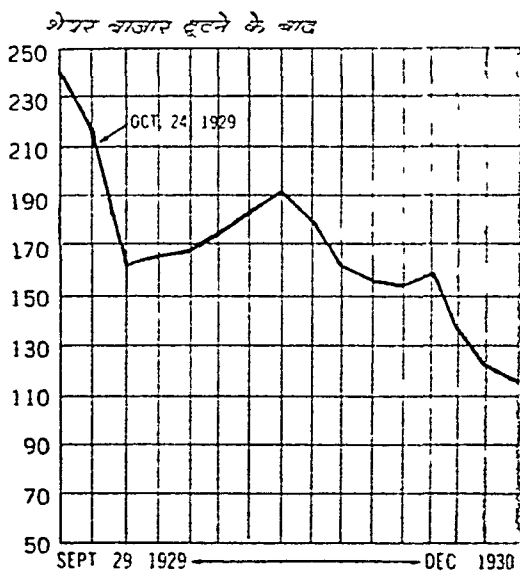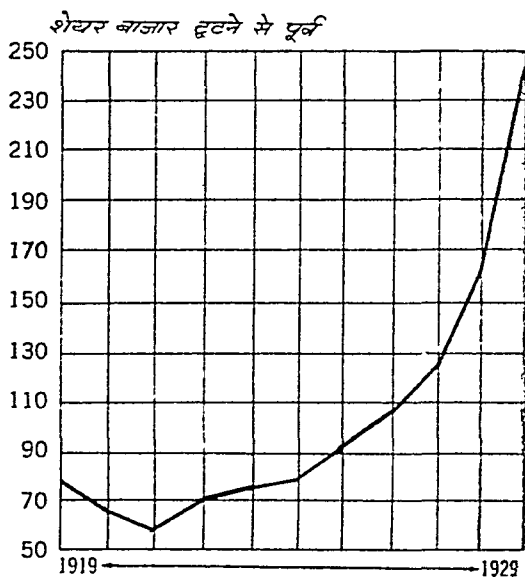
लौट आएगी। जब यह जाहिर हो गया कि मन्दी उससे अधिक गम्भीर है जितनी कि प्रारम्भ मे समझी जाती थी, तब भी लोग यही विश्वास प्रकट करते थे कि अर्थ-व्यवस्था का पुनरुद्धार होगा जरूर, चाहे उसमे कुछ विलम्ब हो जाय। लेकिन उनका कहना था कि अर्थ-व्यवस्था मे किसी तरह की तबदीली या छेडछाड नही की जानी चाहिए, क्योकि वैसा करने का अर्थ और भी अधिक सकट को आमन्त्रण देना होगा।

आज जब हम उन बीते दिनो पर दृष्टिपात करते है तब यह समझ पाना मुश्किल होता है कि मन्दी से हुए इतने भारी आर्थिक विनाश के बावजूद लोगो मे इतना विश्वास क्यो था। किन्तु 1930 मे आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध मे पर्याप्त जानकारी नही थी। आर्थिक विश्लेषण के लिए जिन आँकडो की आवश्यकता थी, वे गलत और अपूर्ण थे। राष्ट्रीय आय और राष्ट्रीय उत्पादन के आधार पर नीति निर्धारण की पद्धति काफी समय बाद अपनाई गई।

उस समय आर्थिक जानकारी का अभाव तो था ही, साथ ही आज जो वित्तीय और मुद्रा सम्बन्धी नीतियाँ है उनका भी उस समय कोई ज्ञान नही था। सन् 1932 मे दोनो राजनीतिक दल मतदाताओ को अपने पक्ष मे करने के लिए एक ही वायदा करते थे कि वे बजट को सन्तुलित कर देगे। उस समय दोनो ही दल स्वर्ण-मान के परित्याग और घाटे की वित्त-व्यवस्था की कल्पना से भी घबराते थे।

सन् 1930 के दशक मे और उसके बाद बहुत-से ऐसे सुधार किये गए जिनसे मालूम होता था कि हमने 1920 के दशक से कुछ सबक लिये है। आज हमे बैकिग प्रणाली, कम्पनियो की रचना, उपभोक्ताओ की क्रय-शक्ति और अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बन्धो के बारे मे उस समय की अपेक्षा अधिक स्पष्ट ज्ञान है।

लेकिन इसके बावजूद आज हम यह सोचकर निश्चिन्त नही हो सकते कि 1920 के दशक मे लोगो ने अन्धाधुन्ध सट्टा-फाटका करने का जो पागल-पन किया था, वह फिर कभी नही होगा। कोई भी जिम्मेदार प्रेक्षक आज यह दावा नही कर सकता कि व्यापार मे होने वाले तमाम उतार-चढाव को

हमेशा के लिए खत्म किया जा सकता है। सिर्फ इतनी ही आशा की जा सकती है कि सही नीति का आश्रय लेकर इस उतार-चढाव को एक सीमित दायरे के भीतर रखा जा सकता है। जैसे-जैसे हमारा ज्ञान बढता जाएगा, वैसे-वैसे हम अपनी अर्थ-व्यवस्था मे अधिक विश्वास कायम रख सकेंगे।'

मन्दी के प्रारम्भिक वर्ष

यद्यपि अमेरिका मे आई भारी मन्दी के राजनीतिक और आर्थिक परिणामो के बारे मे आज भी लोगो की राये अलग-अलग है तो भी इस बात से कोई इन्कार नही करता कि यह मन्दी अमेरिका के आर्थिक इतिहास का एक बडा मोड थी। जिन ताकतो ने 1873 और 1893 की लम्बी मन्दियो के समय अर्थ-व्यवस्था का पुनरुद्धार किया था, वे अब सक्रिय नही थी और इस तथ्य को हृदयगम करने और उसके अनुसार अपने-आपको ढालने मे लोगो को समय लगा और इस प्रक्रिया मे उन्हे कष्ट भी उठाना पडा। गृह-युद्ध के बाद किसी भी अन्य आन्तरिक सकट ने अमेरिका के जीवन को इतना नही झकझोरा था।

सन् 1929 मे शेयर बाजार के एकाएक टूटने के बाद दस वर्ष, यानी दूसरे विश्व-युद्ध के प्रारम्भ, तक सयुक्त राज्य को आर्थिक जडता और गति-हीनता की एक लम्बी अवधि मे से गुजरना पडा। इतनी लम्बी मन्दी इतिहास मे पहले कभी नही आई थी। सन् 1930 और 1940 के बीच सिर्फ 1937 का वर्ष ही ऐसा था जिसमे बेरोजगारी 80 लाख से नीचे गई। सन् 1933 मे लगभग 1 करोड 20 लाख मजदूर बेरोजगार थे, और पॉच वर्ष बाद भी देश की 20 प्रतिशत जन-शक्ति बेरोजगारी का शिकार थी।

मन्दी के प्रारम्भिक वर्षो मे हुए आर्थिक ह्रास को और भी अनेक तरीको से नापा जा सकता है। सन् 1929 और 1932 के बीच औद्योगिक उत्पादन के सूचक अक मे 47 प्रतिशत की, कृषि-जिन्सो के मूल्यो मे 54 प्रतिशत की और कुल राष्ट्रीय उत्पादन मे 28 प्रतिशत की गिरावट आई। इन वर्षो मे टिकाऊ उपभोग्य सामग्री के उत्पादन मे 77 प्रतिशत की, व्यवसाय और उद्योगो द्वारा पूंजीगत सामग्री की खरीद मे 79 प्रतिशत की और औद्योगिक और व्यापारिक भवन-निर्माण मे 82 प्रतिशत की कमी आई।

सन् 1932 तक 85 हजार व्यावसायिक कम्पनियो के दिवाले निकले।

यद्यपि कुछ बडे उद्योग, जिनमे बहुत बडे पैमाने पर सम्पत्ति का केन्द्रीकरण था, अपने उत्पादन को घटी हुई माँग के अनुसार कम करके, अपने मूल्य-स्तर को कायम रख सके, तो भी सब मिलाकर कम्पनियो के मुनाफो मे बहुत कमी हो गई। सन् 1932 मे कम्पनियो का कुल घाटा 3 अरब डालर था।

राष्ट्र के बैंक भी मुसीबत मे थे, क्योंकि उनकी परिसम्पत्तियो का 25 प्रतिशत भाग सिक्योरिटियो (शेयर और सरकारी हुडी आदि) पर और 10 प्रतिशत भाग स्थावर सम्पत्ति पर ऋण के रूप मे लगा हुआ था। जब सिक्योरिटियो और स्थावर सम्पत्ति दोनो के बाजारो मे गिरावट आई (सन् 1931 तक न्यूयार्क के शेयर बाजार मे सिक्योरिटियो के भाव 50 प्रतिशत से अधिक गिर गए थे), तो बैंक लडखडा गए। अन्तर्राष्ट्रीय भुगतान की कठिनाइयो के कारण बडी मात्रा मे सोना देश से बाहर गया, जिससे कुछ और नई दिक्कते पैदा हो गई। दूसरी ओर बैंको मे अपना रुपया निकालने के लिए आतकग्रस्त खातेदारो ने भी हल्ला बोल दिया, जिसका नतीजा यह हुआ कि बैंको के फेल होने की घटनाओ की एक के बाद एक तीन भयकर लहरे आईं।

उद्योग-व्यवसाय मे धन का निवेश करने के अवसर और पूंजी के स्रोत दोनो ही बहुत कम हो गए। सरकार ने कोशिश की कि बैंक सघीय आरक्षित निधि से अधिकाधिक ऋण लेकर आगे लोगो को उद्योग-व्यवसाय मे निवेश के लिए दे, और इसके लिए उसने ब्याज की दर कम कर दी और बैंको पर अपनी परि-सम्पत्ति की जो न्यूनतम मात्रा सघीय आरक्षित निधि मे रखने की पाबन्दी थी, उसमे भी कमी की। लेकिन इन सब प्रयत्नो के बावजूद बैंको के ऋण 1929 के 36 अरब डालर के स्तर से गिरकर 1932 मे 22 अरब डालर पर आ गए।

चुका नही सके।

औद्योगिक क्षेत्र मे उत्पादन और रोजगार मे भारी कमी आई। उदाहरण के लिए 1929 मे 46 लाख मोटरो का उत्पादन हुआ था, किन्तु 1932 मे कुल 11 लाख मोटरे ही तैयार हुई। परिणाम यह हुआ कि औद्योगिक शहरो मे बेरोजगारी खास तौर से बहुत उग्र हो गई। एक समय ऐसा आया, जब कि डोनोरा, पेनसिलवेनिया मे 13,900 श्रमिको मे से कुल 277 ही ऐसे थे, जो नियमित रूप से काम पर लगे हुए थे। यद्यपि 1929 और 1932 के बीच वास्तविक मजदूरी मे कुल 10 से 12 प्रतिशत तक कमी आई, तो भी इससे मजदूरो के कष्टो मे कोई कमी नही हुई, क्योकि बेरोजगार मजदूरो की सख्या की तुलना मे रोजगार पर लगे मजदूरो की सख्या अत्यन्त नगण्य थी।

इस सकट के सामाजिक परिणाम और भी कई गुने भयकर थे, क्योकि राष्ट्र की सस्थाएँ इस विपत्ति को सम्भालने के लिए कतई तैयार नही थी। आय मे कमी होने से राज्य सरकारो और नगरपालिकाओ के राजस्व मे भी गिरावट आ गई। मिसाल के तौर पर एटलाटिक सिटी, न्यू जर्सी की अदालतो ने दीवानी मुकदमे स्थगित कर दिए क्योकि उनकी सुनवाई के लिए जूरी के सदस्यो को देने के लिए उनके पास धन नही था। कुछ शहरो की नगरपालिकाएँ नकद धन के अभाव मे अपने कर्मचारियो को वेतन के रूप मे कूपन या बाड आदि देने लगी। लॉस एजेलेस की नगरपालिका ने तो आर्थिक कठिनाई के कारण अपना चिडियाघर ही नीलाम कर दिया। सबसे अधिक गम्भीर दुष्प्रभाव शिक्षा पर पडा, क्योकि कुछ राज्यो ने अपने यहाँ स्कूलो के सत्र छोटे कर दिये और रोड आइलैड को छोडकर शेष सभी राज्यो ने अध्यापको के वेतन घटा दिए।

बेरोजगार लोगो के परिवारो को राहत और सहायता देने की क्षमता न सरकारी सगठनो मे थी और न गैर-सरकारी सगठनो मे। न्यूयार्क और कुछ अन्य राज्यो को छोडकर कही भी राज्यीय स्तर पर इन लोगो को सहायता नही दी गई। डिट्रॉयट शहर की नगरपालिका ने बेरोजगारी मे सहायता पाने वालो को मदद देने के लिए मोटर कम्पनियो से पैसा उधार लिया और इस उधार से भी वह हर व्यक्ति को प्रतिदिन कुल पाँच सेट ही सहायता दे सकती थी। गैरी, इडियाना मे बीस हजार परिवारो को नगर-

पालिका ने खाद्य सामग्री पैदा करने के लिए सहायता के रूप मे जमीनें दी। सन् 1932 मे 100 से अधिक शहर ऐसे थे जिनके पास गरजमन्द लोगो को आर्थिक सहायता देने को कुछ भी नही था।

एक ओर मन्दी की भयकरता और दूसरी ओर जनता के कष्ट को दूर करने के लिए सुविधाओ की अपर्याप्तता, दोनो ने मिलकर अमेरिकन जनता के व्यक्तिगत जीवनो पर व्यापक प्रभाव डाला। सन् 1929 और 1932 के बीच विवाहो की सख्या मे 30 प्रतिशत की गिरावट आ गई और जन्म-दर भी 19 बच्चे प्रति हजार व्यक्ति से घटकर 17 4 बच्चे प्रति हजार व्यक्ति रह गई। डबल रोटी के लिए लम्बी-लम्बी कतारे लगने लगी और जगह-जगह मुफ्त शोरवा लेने के लिए लोगो की भीड नजर आने लगी।

समाजशास्त्री रॉबर्ट और हेलेन लिण्ड ने अपनी '**मिडिल टाउन इन ट्रान्जिशन**' नामक पुस्तक मे एक औसत दर्जे के अमेरिकन नगर की जनता पर मन्दी के प्रारम्भिक वर्षो के प्रभाव का विशद वर्णन किया है और इस प्रभाव के अध्ययन के लिए यह पुस्तक बहुत लोकप्रिय हुई है। इस पुस्तक मे उन्होने लिखा है "मन्दी के जबर्दस्त और तेज चाकू ने अमीर-गरीब के भेद-भाव के बिना निष्पक्ष होकर राष्ट्र की सारी जनता को ही चीर डाला और उनके जीवन और आशाओ को विदीर्ण कर दिया, 'नगर के इतिहास मे हाल के किसी भी लम्बे भावनात्मक अनुभव ने इतना सर्वव्यापी प्रभाव नही डाला था, जितना इस मन्दी ने डाला। इसका प्रभाव जन्म और मृत्यु के समय की व्यथाओ के समान ही पीडादायक था।"

आर्थिक शिथिलता और जडता ने सरकार के प्रति जनता के रुख को भी बहुत बदला। इस परिवर्तन की झलक उस जमाने के अनुदार विचार-धारा के महत्त्वपूर्ण प्रवक्ताओ के वक्तव्यो से मिल जाती है। सन् 1929 मे इन प्रवक्ताओ ने यह अनुभव नही किया था कि यह मन्दी इतनी विनाश-कारी होगी। उदाहरण के लिए उस समय 'न्यूयार्क टाइम्स' ने लिखा था कि इस मन्दी के 'इलाज के बुनियादी नुस्खे' बहुत आसान है, जैसे कि—"बचत करना, छटनी करना, विवेक से काम लेना और अच्छे दिनो की आशापूर्वक प्रतीक्षा करना।"

एक इस्पात कम्पनी के उच्च अधिकारी चार्ल्स श्वैब ने कहा था,

"मुस्कराते रहो और वेफिक्री से काम किये जाओ।" कोप-मन्त्री ऐण्ड्र्यू मैलन ने कहा कि 'दिवाला और अवस्फीति का क्रूर चक्र' तो चलता ही रहता है। सन् 1930 मे राष्ट्रीय निर्माता सघ (नेशनल एसोसिएशन ऑफ मैन्युफैक्चरर्स) के अध्यक्ष ने कहा था कि 'अपराध' ही आज की राष्ट्र की मुख्य समस्या है।

किन्तु जैसे-जैसे मन्दी उग्र से उग्रतर होती गई, वैसे-वैसे 'प्रवन्ध नीति' और अर्थशास्त्र के 'प्राकृतिक नियमो' मे लोगो का विश्वास कुछ-कुछ विलीन होने लगा। व्यवसायी वर्ग सरकार की ओर सहायता की, याचना की, दृष्टि से अधिकाधिक निहारने लगा। अव श्वैव ने यह स्वीकार किया कि "मै डर रहा हूँ। वल्कि हर आदमी डर रहा है। मैं नही जानता, वल्कि हममे से कोई भी नही जानता कि आज जो कीमते है, वे अगले मास वास्तविक कीमते रहेगी या नही।"

अनेक उद्योगपतियो ने इसके हल सुझाए, किन्तु व्यवहार मे उन सवका अर्थ यह था कि कम्पनियो के गुट-निर्माण के विरुद्ध वनाये गए कानून कुछ समय के लिए स्थगित कर दिये जाएँ। स्टैडर्ड ऑयल कम्पनी (न्यूजर्सी) के अध्यक्ष वाल्टर टीगल ने यह मत प्रकट किया कि उद्योगपतियो को थोडे-से उपलव्ध वाजारो के लिए प्रतिस्पर्धा करते रहने के वजाय कार्यक्रमो को सभावित माँग के अनुसार ढालने के लिए सहयोग से एक कार्यक्रम वनाना चाहिए। वर्नार्ड वारुच ने, जो प्रख्यात वित्त विशेषज्ञ होने के साथ-साथ अनेक राष्ट्रपतियो के सलाहकार रह चुके थे, एव जनरल इलैक्ट्रिक कम्पनी के अध्यक्ष गेरार्ड स्वोप ने उद्योग-व्यवसाय के 'योजना-वद्ध' सचालन की सलाह दी। नवम्वर, 1931 मे राष्ट्रपति हूवर ने शिकायत के स्वर मे घोपणा की कि व्यवसायी-जगत् ने हार मान ली है और अव हाथ ऊपर उठाकर सरकार को सहायता के लिए पुकार रहा है।

इसलिए हूवर ने मन्दी के दवाव और सकट को हल्का करने के लिए जो कार्यक्रम वनाया, उसे इन घटनाओ की रोशनी मे ही परखा जाना चाहिए। मन्दी के प्रारम्भिक वर्षो मे राष्ट्रपति ने कहा था—"इस देश का उद्योग-व्यवसाय वुनियादी तौर पर, यानी वस्तुओ के उत्पादन और वितरण की दृष्टि से, एक सुदृढ और समृद्ध आधार पर प्रतिष्ठित है।" उनका यह कथन

अमेरिका के अधिकतर बडे व्यवसायियो और राजनीतिक नेताओ के विचारो को ही प्रतिध्वनित करता था।

अन्य अनेक राजनीतिक नेताओ की भाँति राष्ट्रपति का भी यह विश्वास था कि यदि सरकार समाज के आर्थिक जीवन मे सीधा हस्तक्षेप करे तो एक स्वतन्त्र समाज का अस्तित्व खतरे मे पड जाएगा। उनका मत था कि यदि मजदूरी को उसके बाजार के स्तर तक गिरने दिया जाय तो बेरोजगारी की समस्या हल हो सकती है और गम्भीर मन्दी और अवस्फीति के बाद भी देश की अर्थ-व्यवस्था फिर से सभलकर उठ खडी होगी।

किन्तु इसका यह अर्थ नही था कि राष्ट्रपति स्थिति की गम्भीरता और कठोरता को हल्का करने के लिए अप्रत्यक्ष रूप मे प्रभाव डालने वाले कदम उठाने के लिए भी तैयार नही थे। राष्ट्रपति ने सघीय आरक्षित निधि बोर्ड को ऋण देने की नीति को अधिक उदार और सरल बनाने और किसानो को सघीय सरकार के राजकोष से ऋण देने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होने पुनर्निर्माण वित्त निगम (रिकन्स्ट्रक्शन फाइनेस कार्पोरेशन) की स्थापना कराई, जिसका काम सकट ग्रस्त बैको और उद्योगो को सघीय सरकार से ऋण दिलाना था। यह निगम अपने ढग की एक नई सस्था समझा जाता था। सन् 1930 के प्रारम्भ मे हूवर की सिफारिशो पर काग्रेस ने 6 करोड डालर बोल्डर बाँध बनाने के लिए, 7 5 करोड डालर सडको के निर्माण के लिए, 50 करोड डालर सर्वाजनिक निर्माण कार्यो के लिए और 15 करोड डालर नदी और बन्दरगाह परियोजनाओ के लिए स्वीकार किये।

किन्तु राष्ट्रपति ने किसी को भी व्यक्तिगत रूप से वित्तीय सकट निवारण के लिए सघीय सरकार के कोश से ऋण देना अस्वीकार कर दिया। इसे वे सैद्धान्तिक रूप से अनुचित समझते थे। उन्होने लोगो को बेरोजगारी का मुआवजा या फसलो के मूल्यो को गिरने से रोकने के लिए सरकारी सहायता देने से इन्कार कर दिया, क्योकि उनका खयाल था कि इससे लोगो की व्यक्तिगत साहस और अभिक्रम की भावना नष्ट होगी, जो अमेरिकन विचारधारा की बुनियाद है।

यद्यपि राष्ट्रपति हूवर के इन विचारो की गम्भीरता मे सन्देह नहीं किया जा सकता, तो भी इन विचारो के आधार पर वह जो कदम उठाते थे, उन्हे

समझ पाना सकट-ग्रस्त जनता के लिए कभी-कभी कठिन हो जाता था। उदाहरण के लिए, दक्षिण-पश्चिमी राज्यो मे सूखा पडने पर हूवर ने अपने सिद्धान्त को इस हद तक त्यागना तो स्वीकार कर लिया कि किसानो को सघीय राजकोप से सहायता दी जाय, किन्तु वह सहायता सिर्फ पशुओ के चारे और फसलो के लिए बीज के रूप मे ही थी। स्वय किसानो को कोई सीधी सहायता नही दी गई। इसके लिए राष्ट्रपति की बडी कटु आलोचनाएँ की गई। लोगो ने कहा कि राष्ट्रपति के दिल मे भूखो मरते खच्चरो और टट्टुओ के लिए तो दर्द है, परन्तु भूख से तडपते और बिलखते मानवो को रोटी देना वे अपना नैतिक उत्तरदायित्व नही समझते।

हूवर ने 1932 की गर्मियो मे जब 'बोनस एक्सपीडिशनरी फोर्स' (बोनस अभियानकारी दल) को टका-सा जवाब देकर टरका दिया, तब भी इसी तरह की आलोचनाएँ हुई। दरअसल, बोनस एक्सपीडिशनरी फोर्स नाम प्रथम विश्वयुद्ध के उन भूतपूर्व सैनिको को दिया गया था, जो मन्दी के आर्थिक सकट से पीडित होकर दल बाँधकर वाशिगटन मे आए थे और यह माँग कर रहे थे कि लडाई के पुरस्कार के रूप मे उन्हे दिये गए बोनस सर्टि-फिकेटो का भुगतान 1945 की निर्धारित अवधि से पूर्व ही, तत्काल कर दिया जाय ताकि वे आर्थिक सकट से मुक्ति पा सके। हालाँकि इन लोगो की सर्टिफिकेटो के नियत अवधि से पूर्व तत्काल भुगतान की माँग अस्वीकार कर दिये जाने का आम तौर पर समर्थन किया गया, तो भी जनता मे ऐसे बहुत-से लोग थे जिनकी सहानुभूति इन भूतपूर्व सैनिको के साथ थी। इन सैनिको मे से बहुत-से ऐसे थे जिनके पास कोई रोजगार नही था और जिन्हे नितान्त गरीबी मे दिन काटने पड रहे थे। इसलिए जब हूवर ने इन गरीब भूतपूर्व सैनिको के दल को तितर-बितर करने के लिए सेना को आदेश दिया तो जनता को बहुत आघात लगा।

हूवर ने निष्ठुर प्रतीत होने वाला यह रुख इसलिए नही अपनाया था कि उनके मन मे इन गरीबो के लिए सहानुभूति का भाव नही था। बल्कि इसका कारण यह था कि वे अपने सिद्धान्त पर कट्टरता से अटल थे। उनका यह विश्वास था कि यदि लोगो को सीधी सहायता दी गई तो उससे व्यक्तिगत और सामाजिक उत्तरदायित्व की परम्परागत अमेरिकन अवधारणाओ को
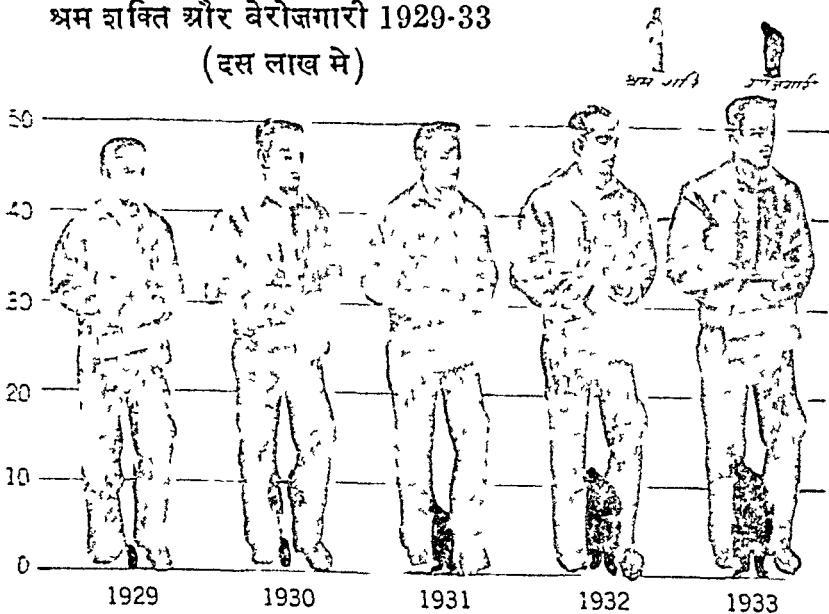
चोट पहुँचेगी और जनता एक दूरवर्ती नौकरशाही की वशवर्ती हो जाएगी। वे लोगो को ऋण देने की बात तो स्वीकार कर सकते थे, किन्तु मुफ्त सहायता देना नही। सीधी सहायता उनकी राय मे अमेरिकन जनता की आध्यात्मिक अनुक्रियाओ को क्षति पहुँचाने वाली थी।

हूवर के आलोचको का कहना था कि वे इस सत्य को पूरी तरह समझ नही सके कि लोगो के लिए स्वाधीनता का तभी कुछ अर्थ हो सकता है, जब कि उन्हे कुछ सुरक्षा भी मिले। उनके आलोचको की एक शिकायत यह भी थी कि वे (हूवर) यह स्वीकार नही करते कि एक औद्योगिक समाज मे पूर्ण व्यक्तिगत स्वतन्त्रता एक भ्रम है, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता एक सीमा तक ही हो सकती है। यही कारण है कि वे व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को यथार्थ बनाने की सरकार की जिम्मेदारी को स्वीकार नही करते। वे एक ऐसी दुनिया का पुनर्निर्माण करने का प्रयत्न कर रहे है जिसका वास्तव मे कोई अस्तित्व नही है और जिसका पुनर्निर्माण और पुनरुज्जीवन हो नही सकता।

किन्तु ये सब आलोचनाएँ हूवर के साथ न्याय नही करती। हूवर के कामो को उस जमाने के प्रसग मे ही कसौटी पर कसा जाना चाहिए। मन्दी

के प्रारम्भिक वर्षों मे राष्ट्रपति हूवर ही नही, डेमोक्रेटिक पार्टी के नेता भी जिनमे रूजवेल्ट भी शामिल थे, देश की आर्थिक प्रणाली मे किसी तरह की तब्दीली करने के लिए तैयार नही थे। वास्तव मे डेमोक्रेटिक पार्टी ने तो हूवर की यह कहकर आलोचना की कि उन्होने बहुत ज्यादा पैसा खर्च किया और बजट को सन्तुलित नही किया।

आज दोनो मुख्य राजनीतिक दल यह स्वीकार करते है कि मन्दी को रोकने का उपाय अवस्फीति (डिफ्लेशन) को अपनी चाल चलने देना नही है। यदि यह मान भी लिया जाय कि अवस्फीति को अपने ढग से चलते रहने देकर अन्तत मन्दी का इलाज किया जा सकता है, तो भी वह मानवीय दृष्टि से बहुत महँगा होगा। इसके अलावा अवस्फीति का बहुत देर तक चलते रहना आर्थिक दृष्टि से अवाछनीय और राजनीतिक दृष्टि से अव्यावहारिक भी है। लेकिन यह विचार आज हम उस जमाने का सिहावलोकन करते हुए ही प्रकट कर सकते है। उस समय के लोगो का तत्कालीन परिस्थितियो मे यह विचार नही था। मन्दी के काले और अन्धकारपूर्ण वर्ष जैसे-जैसे आगे बढ रहे थे, वैसे-वैसे स्थिति को उसके सही परिप्रेक्ष्य मे देख पाना कठिन था। उस समय तक कोई भी यह नही जान सकता था कि अमेरिकन समाज के विकास का एक युग समाप्त हो गया है।

किन्तु अमेरिकन जनता ने 1932 मे राष्ट्रपति पद के अगले चुनाव के आगे तक यह अच्छी तरह जान लिया था कि उस समय तक मन्दी के सकट को हल्का करने के लिए जो कदम उठाये गए है वे पर्याप्त नही है। वह एक नए प्रशासन के लिए, नई नीतियो के लिए उत्सुक और व्याकुल थी। फ्रैंकलिन रूजवेल्ट ने जब अपने चुनाव आन्दोलन मे यह वचन दिया कि वे 'अमेरिकन जनता के लिए एक नई नीति' का निर्माण करेगे तो लोगो को नई आशा की एक किरण दिखाई दी। यह नई नीति (न्यू डील) क्या होगी, यह चुनाव आन्दोलन के भाषणो मे स्पष्ट नही किया गया, किन्तु 'नई नीति' शब्द ही जनता को आश्वासन देने के लिए पर्याप्त थे। रूजवेल्ट ने करीब दो-तिहाई मत प्राप्त करके चुनाव मे शानदार सफलता प्राप्त की।

अगले वर्षो ने हूवर द्वारा चुनाव आन्दोलन मे दिये गए इस वक्तव्य की यथार्थता असाधारण और कल्पनातीत रूप मे सिद्ध कर दी कि "अर्थ-

व्यवस्था मे अधिकाधिक सरकारी हस्तक्षेप के डेमोक्रेटिक पार्टी के प्रस्ताव अमेरिकन जीवन-पद्धति मे एक बहुत बडा परिवर्तन कर देगे यह चुनाव महज एक दल को हटाकर दूसरे दल का सत्तारूढ होना ही नही है। इस चुनाव का अर्थ है अगली एक शताब्दी के लिए राष्ट्र की प्रगति की नई दिशा निर्धारित करना।"

नई नीति

मै आपके साथ और स्वय अपने निज के साथ यह वायदा करता हूँ कि मै अमेरिकन जनता को एक नई नीति प्रदान करूँगा।

—फ्रैंकलिन डी० रूजवेल्ट
(सन् 1932 मे राष्ट्रपति पद के लिए डेमोक्रेटिक पार्टी की ओर से उम्मीदवारी स्वीकार करते हुए दिये गए भाषण का एक अश)

नई नीति के अन्तर्गत प्रशासन मन्दी का मुकावला करने के लिए अपनी समूची ताकत लगाने को तैयार था, इसलिए लोकतन्त्रीय पूँजीवाद और उसकी नये युग की जटिल समस्याओ का सामना करने की क्षमता मे अमेरिकन जनता का विश्वास फिर जम गया। यह वात सही है कि नई नीति ने अर्थ व्यवस्था के कुछ क्षेत्रो मे मन्दी के दुष्प्रभाव की कठोरता को कुछ हल्का कर दिया था, किन्तु अगर पूर्ण रोजगार को ही आर्थिक स्वास्थ्य की कसौटी मानकर चले, तो वह 1930 के दशक के आर्थिक सकट को हल करने मे असफल रही थी। कारण, 1939 मे भी सयुक्त राज्य मे 94 लाख व्यक्ति वेरोज़गार थे।

यद्यपि फ्रैंकलिन डी० रूजवेल्ट के प्रशसक और आलोचक दोनो ही थे, और दोनो ही उसके पक्ष और विपक्ष की वाते करते थे, किन्तु वास्तविकता

यह है कि रूजवेल्ट और उनकी सरकार की न कोई निश्चित सैद्धान्तिक विचारधारा थी और न कार्यक्रम। वे दोनो राजनीतिक व्यवहारवादी थे और जब जो समस्या सामने आती उसे तत्कालीन प्रयोजनो के अनुसार व्यावहारिक दृष्टि से निबटाते। जिन समस्याओ ने नई नीति को जन्म दिया, उनके बारे मे उनकी प्रतिक्रियाओ को दो मुख्य कालो मे बाँटा जा सकता है—(1) नई नीति का प्रारम्भिक काल जब कि आर्थिक पुनरुद्धार पर मुख्यत. जोर दिया जाता था, और (2) सन् 1934 के आखिरी महीनो से प्रारम्भ होने वाला दूसरा काल जिसमे व्यापक समाज-कल्याण सम्बन्धी कानून बनाये गए।

नई नीति सम्बन्धी ये अवधारणाएँ धीरे-धीरे नही बनी और न उनके पीछे कोई निश्चित योजना ही थी। एक इतिहास के शब्दो मे "जो व्यक्ति नई नीति को एक सूत्र मे बधी शृखलाबद्ध नीति के रूप मे या दूरगामी और दूरदर्शी नीति के रूप मे देखने की आशा करता है, वह उसे कभी समझ नही सकेगा। यह वास्तव मे कुछ कृत्रिम रूप से निर्धारित नीतियो की शृखला है, इनमे से कुछ नीतियाँ बिलकुल अचानक ही निर्धारित हुई और कुछ परस्पर विरोधी भी थी। इस नीतियो मे यदि ऐक्य और सामजस्य था भी तो वह अर्थशास्त्रीय सामजस्य नही था, बल्कि आर्थिक रगमच पर रणनीति का ऐक्य और सामजस्य था।"[1]

नई नीति के प्रारम्भिक काल मे टैनेसी घाटी प्रशासन की स्थापना को छोडकर और किसी भी काम मे सरकार ने अपने कोश से व्यय करने पर बल नही दिया—न सामान्य व्यावसायिक शिथिलता और मन्दी की क्षतिपूर्ति के लिए और न व्यापक समाज कल्याण के लिए। इसके विपरीत सरकार ने इस प्रारम्भिक काल मे देश के लडखडाते वित्तीय ढाँचे को सुधारने और उसमे स्थिरता लाने, सकटग्रस्त कर्जदारो और बेरोजगारो को मदद देने और सरकारी कोश से अधिक धन खर्च किये बिना आर्थिक पुनरुद्धार करने के लिए प्रयत्न किया।

---

1 अमेरिकन पोलिटिकल ट्रेडिशन रिचर्ड हॉफस्टेटर न्यूयार्क [illegible] नाफ, इन्कार्पो., 1948।

कांग्रेस ने इमर्जेन्सी बैंकिंग ऐक्ट (आयात कालीन बैंकिंग कानून) पास कर देश की लडखडाती बैंकिंग प्रणाली को वित्तीय स्थिरता प्रदान की। इस कानून से एक संघीय जमाखाता बीमा निगम की स्थापना की गई और यह व्यवस्था की गई कि बैंकों के पास 5,000 डालर तक के जितने भी जमाखाते हो, उन सबका खातेदारो की सुरक्षा के लिए इस निगम मे बीमा कराया जाय (सन् 1950 मे यह सीमा बढाकर 10,000 डालर कर दी गई)। इस कानून मे बैंको के व्यापारिक और निवेश सम्बन्धी कारबार अलग-अलग करने की भी व्यवस्था थी। 1934 मे सिक्योरिटीज एक्सचेंज एक्ट (सिक्योरिटी विनिमय कानून) पास किया गया। इस कानून ने एक अर्धन्यायिक शेयर एव विनिमय कमीशन की स्थापना की जिसका उद्देश्य वाल-स्ट्रीट के शेयर बाजार मे 1929 मे आए जबर्दस्त विध्वस की-सी घटनाओ की पुनरावृत्ति को रोकना था। इसके बाद 1935 मे बैंकिंग ऐक्ट पास किया गया, जिसने संघीय आरक्षित निधि बोर्ड के अधिकारो का काफी विस्तार कर दिया।

सरकार ने सकटग्रस्त कर्जदारो की सहायता का काम दो सरकारी सस्थाओ को सौंपा। इनमे से एक थी पुनर्निर्माण वित्त निगम, जिसकी स्थापना हूवर के प्रशासन ने की थी। यह निगम बडी वित्तीय और व्यावसायिक कम्पनियो को ऋण देता था। दूसरी सस्था फार्म क्रेडिट एसोसियेशन (कृषि ऋण सघ) थी, जो सकटग्रस्त किसानो को ऋण देती थी। कांग्रेस ने मुसीबतजदा किसानो की मदद के लिए 'फ्रेजियर-लेमके ऐक्ट' के रूप मे एक कानून और भी पास किया, जिसमे किसानो को अपनी जमीन-जायदाद बन्धक रखकर लिये गए कर्जो की अदायगी के लिए तीन साल की और मोहलत देने की सुविधा की व्यवस्था थी।

यद्यपि रूजवेल्ट के प्रशासन मे बेरोजगार लोगो को पिछले प्रशासन की अपेक्षा अधिक सहायता दी गई, तो भी नई नीति के प्रारम्भिक काल मे इसके लिए कोई व्यापक दीर्घकालीन कार्यक्रम नही बनाया गया, क्योंकि प्रशासन को यह आशा थी कि मन्दी मे देश वैसे ही जल्दी उभर आएगा। सार्वजनिक निर्माण प्रशासन और असैनिक निर्माण प्रशासन को छोडकर बाकी जितनी भी सहायता परियोजनाएँ अपनाई गई, वे सभी हूवर के जमाने की भाँति राज्यो और नगरो के प्रशासनो के जरिये दी गई अप्रत्यक्ष सहायता के रूप

मे ही अपनाई गई। उपर्युक्त दोनो सघीय कार्यक्रमो मे से भी असैनिक निर्माण प्रशासन अधिक समय तक नही टिका।

सार्वजनिक निर्माण प्रशासन के लिए काग्रेस ने 3 3 अरब डालर की मजूरी दी थी। इस राशि से उसने बेरोजगार लोगो को रोजगार दिलाने के लिए अनेक सार्वजनिक निर्माण परियोजनाएँ प्रारम्भ की—कुछ परियोजनाएँ अन्य सघीय या राज्यीय सगठनो के जरिये और कुछ प्राइवेट ठेकेदारो के जरिये। सन् 1933 से 1939 तक सार्वजनिक निर्माण प्रशासन ने कितनी ही छोटी-बडी सडके बनवाई, जलोपलब्धि और मल-निकासी परियोजनाएँ क्रियान्वित कराई, गैस और बिजली के कारखाने बनवाये, स्कूल, अदालत, अस्पताल और जेल आदि के भवन बनवाए, सिचाई और बाढ नियन्त्रण के काम कराये तथा पुल, जहाजघाट और सुरग आदि का निर्माण कराया।

किन्तु सार्वजनिक निर्माण प्रशासन को लोगो को काम देने से पूर्व हर परियोजना की विस्तृत रूपरेखा तैयार करनी पडती थी। इससे लोगो को रोजगार मिलने मे देरी हो जाती थी, जबकि बेरोजगारी की समस्या इतनी विकट थी कि उसका तत्काल समाधान जरूरी था। इसलिए असैनिक निर्माण प्रशासन के रूप मे एक अन्य विभाग की स्थापना की गई। इस विभाग ने जनवरी, 1934 मे चार लाख परियोजनाओ पर चालीस लाख व्यक्तियो को काम पर लगा रखा था। इनमे से कुछ परियोजनाएँ ऐसी थी, जिनकी विस्तृत रूपरेखा दुर्भाग्य से तैयार नही की जा सकी थी, इसलिए ये परियोजनाएं दरअसल सिर्फ लोगो को रोजगार देने की योजना मात्र थी।

नई नीति के प्रारम्भिक काल मे मूल्य वृद्धि—दूसरे शब्दो मे मुद्रास्फीति—को प्रोत्साहन देने का परीक्षण भी किया गया, क्योकि सरकार की यह धारणा थी कि इससे अवस्फीति, बेरोजगारी और मन्दी का दुश्चक्र टूट सकेगा। इसमे सन्देह नही कि अधिकतर कर्जदार लोगो ने डालर के अवमूल्यन की कार्रवाइयो का स्वागत किया और पश्चिम के उन राज्यो ने भी, जहाँ चाँदी की खाने है, उसका समर्थन किया। सरकार इस दिशा मे जो कार्रवाइयाँ कर रही थी, उसकी अन्तिम परिणति जनवरी, 1934 मे हुई जब कि सरकार ने डालर का अवमूल्यन कर उसकी कीमत उसके पिछले सरकारी स्वर्णमूल्य का 59 06 प्रतिशत कर दी। इसके बाद सरकार ने

डालर की कीमत और गिराना उचित नही समझा ।

नई नीति के अन्तर्गत वस्तुओ के मूल्य बढाने के लिए जो कदम उठाये गए, उनमे इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण कदम यह था कि सरकार औद्योगिक उत्पादनो और कृषि-जिन्सो का बाकायदा योजनापूर्वक कृत्रिम अभाव पैदा करने लगी। इसके लिए काग्रेस ने नेशनल इडस्ट्रियल रिकवरी ऐक्ट (राष्ट्रीय आर्थिक पुनरुद्धार कानून) और एग्रीकल्चरल ऐडजस्टमेट ऐक्ट (कृषि समजन कानून) पास किया।

कृषि समजन कानून फार्म ब्यूरो फेडरेशन और नेशनल ग्रेज के धनी कृषक सदस्यो के दबाव का परिणाम था। इस कानून मे कुछ फसलो के उत्पादन को जान-बूझकर कम करने के लिए यह व्यवस्था की गई थी कि यदि किसान उन फसलो का उत्पादन नही करेगे तो उन्हे क्षतिपूर्ति के रूप मे सरकार पैसा देगी। इस कानून को लेकर सारे देश मे एक जबर्दस्त बहस छिड गई और लोग उसके औचित्य और उसकी प्रभावकारिता पर सन्देह प्रकट करने लगे।

राष्ट्रीय आर्थिक पुनरुद्धार कानून को लेकर भी देश मे काफी वाद-विवाद खडा हो गया, हालाँकि फ्रैंकलिन रूजवेल्ट ने उसे 'अमेरिकन काग्रेस द्वारा उस समय तक पास किया गया सबमे महत्त्वपूर्ण और दूरगामी प्रभाव वाला कानून' कहा था। यह कानून एक तरह से सरकार द्वारा स्थापित कार्टल प्रणाली (उत्पादन और मूल्यो को परस्पर समझौते से नियन्त्रित करने के लिए उत्पादक सघ बनाने की प्रणाली) था। सरकार उसके अन्तर्गत औद्योगिक उत्पादको की एक-दूसरे का गला काटने की आपसी प्रतिस्पर्धा को खत्म करने और उत्पादन को नियन्त्रित कर केवल वास्तविक आवश्यकताओ के अनुसार ही उत्पादन करने पर जोर देती थी। इसमे यह भी व्यवस्था थी कि जो कारखाने इस कानून के अन्तर्गत निर्धारित आचार-नियमो को पालन करना स्वीकार करेगे, उनके मजदूरो को सरकार एक निश्चित न्यूनतम मजदूरी की गारटी देगी। इस कानून के खड 7-ए मे पहली बार मजदूरो को अपना सगठन बनाने और मालिक के साथ सामूहिक सौदेबाजी करने के अधिकार की गारटी दी गई थी। यह खड इसलिए रखा गया था ताकि मजदूरो का भी इस कानून के लिए समर्थन प्राप्त हो जाय।

उत्पादको ने देश भर मे लोगो की क्रय शक्ति बढने की सम्भावना से उत्पादन बढाना प्रारम्भ कर दिया और उसका परिणाम यह हुआ कि कारखानो मे अधिकाधिक लोगो को रोजगार मिलने लगा। जून, 1933 मे कारखानो मे रोजगार का सूचक अक 71 6 था, जो इसी वर्ष सितम्बर मे 85 0 पर पहुँच गया (सूचक अक का आधार 1923-25=100)। किन्तु सब मिलाकर देखा जाय तो राष्ट्रीय औद्योगिक पुनरुद्वार कानून देश की अर्थ-व्यवस्था मे कोई नई क्रय शक्ति नही पैदा कर सका। सन् 1935 मे उच्चतम न्यायालय ने इस कानून को असाविधानिक ठहरा दिया।

सन् 1934 के प्रारम्भ मे राष्ट्रपति रूजवेल्ट के तमाम भाषणो मे एक ही बात पर जोर दिया जाता था, जिसका सार यह था कि सरकार देश के सभी बडे हितो मे एकता, सामजस्य और समायोजन करने वाली सस्था है और वह स्वय (रूजवेल्ट) एक विशाल और विविधतापूर्ण देश के बहुविध हितो के बीच सम्पर्क कायम करने वाला प्रमुख दलाल है।

किन्तु सन् 1934 मे नई नीति के स्वरूप मे परिवर्तन हुआ। पहले जहाँ सरकार वस्तुओ का कृत्रिम अभाव पैदा करके अर्थ-व्यवस्था का पुनरुद्धार करने और विभिन्न हितो के बीच सम्पर्क और सामजस्य के लिए दलाल के रूप मे काम करने की नीति पर चल रही थी, वहाँ उसने अब व्यापक जन-कल्याण के लिए सघीय कानून पास कराने की नीति अपना ली। यह नीति-परिवर्तन क्यो हुआ, यह पूरी तरह से कहना मुश्किल है। सन् 1934 मे डेमोक्रेटिक पार्टी ने काग्रेस पर भारी बहुमत से अधिकार कर लिया था, किन्तु यही इस नीति-परिवर्तन का पर्याप्त कारण नही कहा जा सकता। दूसरी ओर राष्ट्रीय औद्योगिक पुनरुद्धार कानून और कृषि समजन कानून अपने उद्देश्य मे असफल हो गए थे, लेकिन यह असफलता भी नीति मे इस परिवर्तन की पूर्णत व्याख्या नही कर सकती। इसलिए नई नीति का दूसरा काल प्रारम्भ होने के कारण कुछ अन्य ही थे।

नई नीति के शुरू के नाजुक महीनो मे उद्योगपति, श्रमिक, किसान और सरकार—इन सबने मिलकर आपस मे एक अनौपचारिक गठबन्धन कर लिया था। लेकिन यह गठबन्धन जल्दी ही टूटने लगा, और पाँच साल की अनवरत मन्दी के बाद अन्त मे वह बिलकुल ही छिन्न-भिन्न हो गया।

अगस्त, 1934 मे नई नीति का प्रवल विरोध करनेवाली एक सस्था 'अमेरिकन लिवर्टी लीग' उठ खडी हुई, और वित्तीय और औद्योगिक समाज के शक्तिशाली वर्गो और अखवारो ने उसका समर्थन प्रारम्भ कर दिया।

अत्यधिक आर्थिक सकट और कठिनाई ने सुधारको और आन्दोलन-कारियो के लिए उपजाऊ जमीन तैयार कर दी। ह्युई लॉग ने राष्ट्र की सम्पत्ति का समुचित वितरण करने की सब्जवाग दिखाने वाली योजना पेश की, फ्रासिस टाउनसैंड ने वेरोजगार और अन्य सकटग्रस्त लोगो को पेन्शन देने की अव्यावहारिक योजना वनाई और फादर चार्ल्स कफलिन ने भी अभावग्रस्त लोगो के साथ विशेप व्यवहार की अपीले की। इन सवने ही नही और भी अनेक वर्गो ने रूजवेल्ट के प्रशासन पर कडी चोटे की। ये आलोचनाएँ नई नीति के सचालको के, जो पहले से ही परेशान थे, शरीर मे काँटे की तरह गड रही थी।

नई नीति के अन्तर्गत निर्मित महत्वपूर्ण कानून

(1) **कृषि समजन कानून** (1933) इस कानून के द्वारा कृपि जिन्सो के उत्पादन को नियन्त्रित कर उनके मूल्यो पर अकुश लगाया गया। किसानो ने कुछ फसलो की खेती कम कर दी, और सरकार ने उन्हे इसके लिए मुआवजा दिया। यद्यपि 1936 मे यह कानून अवैधानिक घोपित कर दिया गया, तो भी उसकी मुख्य-मुख्य वाते 1938 मे दूसरे कृपि-समजन कानून मे शामिल कर ली गई, जिसे उच्चतम न्यायालय ने सविधान के अनुकूल स्वीकार कर लिया।

(2) **टैनेसी घाटी प्रशासन** (1933) काग्रेस ने टैनेसी नदी की घाटी के साधनो का विकास करने के लिए इस प्रशासन के रूप मे एक सरकारी निगम की स्थापना की। इसे टैनेसी और उसकी सहायक नदियो पर वॉध वनाने, उनमे नौकानयन को सुधारने, वाढ-नियन्त्रण करने, भूमि-क्षरण को रोकने और पन-विजली पैदा करने के अधिकार प्रदान किये गए।

(3) **राष्ट्रीय औद्योगिक पुनरुद्धार कानून** (1933) नई नीति के

प्रारम्भिक काल मे बनाये गए इस कानून मे हर उद्योग के लिए उचित प्रतिस्पर्धा के कुछ आचार सम्बन्धी नियम निर्धारित कर अर्थ-व्यवस्था मे जान फूंकने की व्यवस्था की गई थी। इसमे उद्योगो के लिए मजदूरियाँ और उत्पादनो के मूल्य भी निर्धारित किये गए थे। इसमे श्रमिको को मालिको के साथ सामूहिक सौदेबाजी का अधिकार भी प्रदान किया गया था। यह कानून 1935 मे उच्चतम न्यायालय द्वारा अवैधानिक घोषित कर दिया गया।

(4) **बैंकिंग कानून (1933)** इस कानून मे व्यावसायिक बैंको को पूंजी-निवेश का कारबार करने से रोका गया था। इसके द्वारा बैंको के खातो का बीमा करने के लिए एक संघीय खाता बीमा निगम की भी स्थापना की गई। यह कानून ग्लास-स्टीगल एक्ट के नाम से भी प्रसिद्ध है।

(5) **सिक्योरिटी एक्सचेंज कानून (1934)** इस कानून के अन्तर्गत एक सिक्योरिटी एव एक्सचेंज कमीशन की स्थापना की गई, जिसका प्रयोजन स्टाक एक्सचेंजो (शेयर बाजारो) को नियन्त्रित करना और शेयरो मे पूंजी-निवेश करने वालो को जाली शेयर जारी करने वालो से बचाना था। इसमे संघीय आरक्षित निधि बोर्ड को शेयरो की खरीद के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले उधार (मार्जिन) को नियन्त्रित और विनियमित करने का भी अधिकार दिया गया।

(6) **सामाजिक सुरक्षा कानून (1935)** इस कानून द्वारा वृद्धावस्था मे मजदूरो को या मृत्यु हो जाने पर उनके परिवारो को धन देने के लिए एक कर्मचारी बीमा योजना प्रारम्भ की गई, जिसमे मजदूर और मालिक दोनो बराबर-बराबर अंशदान करते है। इसने बेरोजगारी के समय मजदूरो को मुआवजा देने की एक प्रणाली भी स्थापित की जिसका संचालन राज्य करते है। इसके अतिरिक्त इसमे कठिनाई मे पडे बूढो उनके आश्रित बच्चो और अन्धे व्यक्तियो की सहायता की

वाद यह् कानून पास किया गया। इसमे मजदूरो को मालिको के साथ मामूहिक सौदेवाजी करने के अधिकार की गारटी दी गई और इस कानून का सचालन करने के लिए एक राष्ट्रीय श्रम सम्वन्धी वोर्ड की स्थापना की गई। आम तौर पर यह कानून वैगनर एक्ट के नाम से मशहूर है।

(8) **उचित श्रम स्तर कानून (1938)** इस कानून मे अन्तर्राज्यीय व्यापार मे लगे अधिकतर कर्मचारियो के लिए 30 सेंट प्रति घटे की न्यूनतम मजदूरी निर्धारित की गई। इस मजदूरी मे अब तक कई वार वृद्धि की जा चुकी है। घटो के हिसाव से काम करने वाले श्रमिको के लिए इसमे एक सप्ताह मे 40 घटे से अधिक काम लेने पर फालतू ममय के लिए डेढ गुनी ओवर टाइम की भी व्यवस्था की गई।

रूजवेल्ट ने राजनीतिक स्थिति मे आए उबाल को ठण्डा करने के लिए नई कार्रवाई करने का निश्चय किया। सन् 1934 के उत्तरार्द्ध और 1935 मे उसने जो कार्यक्रम प्रारम्भ किया था, उसका उद्देश्य स्पष्टत नागरिको की विशाल सख्या को सुरक्षा और अच्छा रहन-सहन का स्तर प्रदान करना था।

रुजवेल्ट ने 1935 मे काग्रेस को दिए वार्षिक सन्देश मे अपना यह नया कार्यक्रम स्पष्ट कर दिया। उन्होने कहा "आज हम अपने देश की जनता को पुरानी असमानताओ से पीडित पा रहे हैं। इससे पूर्व इन असमानताओ को दूर करने के लिए जो छुटपुट इलाज किये जाते रहे हैं, उनसे स्थिति मे कोई परिवर्तन नही हुआ। हमारे प्रयत्नो और वातो के वावजूद, उचित से अधिक विशेषाधिकार-प्राप्त व्यक्तियो को उखाड फेकने और शोषितो को ऊँचा उठाने मे हमे कामयावी नही मिली।"

इस प्रकार रुजवेल्ट ने अपनी नीति मे जो परिवर्तन किया, वह 1935 मे पास किये गए कानूनो मे स्पष्ट परिलक्षित होता था। ये कानून अमेरिकन इतिहास मे सामाजिक और आर्थिक सुधार कार्यक्रम के सवसे अधिक दूरगामी कानून कहे जाते है। वैगनर श्रम सम्वन्धी कानून और सामाजिक सुरक्षा कानून जैसे वडे सुधार कानूनो मे सरकार की यह परिवर्तित भूमिका स्पष्ट दृष्टिगोचर होती थी, भले ही उसकी व्याख्या किसी भी रूप मे की

जाय। वैगनर कानून मे श्रमिको को अपनी मनपसन्द यूनियन बनाने और उसकी मार्फत मालिको के साथ सामूहिक सौदेबाजी का अधिकार दिया गया था। सामाजिक सुरक्षा कानून एक न्यूनतम आर्थिक स्तर निर्धारित करने के लिए बडी आशाओ के साथ बनाया गया कानून था। इस कानून मे श्रमिको को वृद्धावस्था मे पेन्शन देने के लिए एक बीमा योजना बनाई गई थी, जिसमे कर्मचारी अपने वेतन मे से कुछ अश देते थे और उतना ही अश मालिक भी डालते थे। इस योजना का प्रशासन सरकार के हाथ मे था। इसी कानून मे श्रमिको को बेरोजगारी के समय मुआवजा देने की भी व्यवस्था थी और उसका सचालन राज्य सरकारो के हाथ मे रखा गया था। इसके अलावा, कानून ने अभावग्रस्त बूढो, उनके आश्रित बच्चो, विधवाओ और अन्धो के लिए भी सहायता की व्यवस्था की थी।

रूजवेल्ट के पुन राष्ट्रपति चुने जाने पर उनके द्वितीय शासनकाल मे भी इसी प्रकार के सामाजिक सुरक्षा कानून बनाये गए। यद्यपि उच्चतम न्यायालय मे 'सुधार' करने के प्रयत्नो के परिणामस्वरूप स्वय रूजवेल्ट की डेमोक्रेटिक पार्टी दो खडो मे विभक्त हो गई और उसमे रूजवेल्ट के कडे विरोधी पैदा हो गए तो भी इन वर्षो मे सरकार को कुछ महत्त्वपूर्ण सामाजिक कानून पास कराने मे सफलता मिल गई। इनमे उचित श्रम स्तर कानून भी शामिल था। इस कानून मे अन्तर्राज्यीय व्यापार-व्यवसायो मे लगे कर्मचारियो के लिए मजदूरी का एक न्यूनतम स्तर 30 सेट प्रतिघटा नियत किया और साथ ही एक सप्ताह मे 40 घटे से अधिक काम लेने पर अतिरिक्त समय के लिए ड्योढी मजदूरी देने की भी व्यवस्था की गई।

इन वर्षो मे सुधार कानूनो के परिवर्तित स्वरूप को स्पष्ट करते हुए रिचर्ड होफस्टेटर ने लिखा है "सन् 1937 तक यह स्पष्ट हो गया था कि सुधारवाद के सामाजिक आधार मे कुछ नया तत्त्व समाविष्ट कर दिया गया है। श्रमिको द्वारा देश मे एक बडे और शक्तिशाली श्रमिक आन्दोलन के जरिये की जा रही मॉगो और बेरोजगार लोगो के हितो को दृष्टि मे रखकर बाद की नई नीति को एक नया सामाजिक-लोकतन्त्रीय रग मिल गया। यह रग अमेरिका की सुधारवादी राजनीति मे पहले कभी नही था।"[1]

1 'एज ऑफ रिफार्म', न्यूयार्क एल्फ्रेड ए नोफ, इन्कार्पो 1958।

जिस समय रूजवेल्ट की सरकार सामाजिक कानूनो के निर्माण मे व्यस्त थी, 1937-38 की जबर्दस्त आकस्मिक मन्दी मुँह बाये उसके सामने आ खडी हुई और उसके सामने यह स्पष्ट हो गया कि इसकी नई नीति के अन्तर्गत अपनाई गई आर्थिक नीतियाँ इस मन्दी का सामना करने मे समर्थ नही है। इस मन्दी का एक कारण यह था कि 1936 मे सरकार की जिन नीतियो ने आर्थिक दृष्टि से देश का कुछ उद्धार किया था, वे उलट दी गई थी। ये नीतियाँ थी—सकट-ग्रस्त लोगो को सहायता देने, सार्वजनिक निर्माण कार्य कराने, कृषको को ऋण देने और भूतपूर्व सैनिको को बोनस देने की।

यह ठीक है कि आर्थिक पुनरुद्धार की इन नीतियो पर अमल करने के लिए सरकार को जो धन खर्च करना पडा, उससे राष्ट्रीय ऋण (सरकार के ऋण) मे तेजी से वृद्धि हो गई। इस स्थिति मे सरकार ने, जो अभी तक पुरानी वित्तीय नीतियो पर चल रही थी, बजट को सन्तुलित करने का प्रयत्न किया। इसका परिणाम यह हुआ कि सघीय आरक्षित निधि बोर्ड ने ऋण देने मे सख्ती कर दी। इसके लिए उसने बैको पर यह पाबन्दी लगा दी कि उन्हे अपनी जमा-खातो की कुल रकम का जितना भाग पहले आरक्षित निधि मे रखना पडता था, अब उससे 50 प्रतिशत अधिक रखना पडेगा। सरकार ने भी बजट का सन्तुलित करने के लिए अपने सार्वजनिक निर्माण कार्यों पर खर्च आधा कर दिया। इस प्रकार पुरानी नीतियो को उलट देने से मन्दी का नया ज़बर्दस्त झल्ला आ गया।

इसका परिणाम यह हुआ कि कुल राष्ट्रीय आय मे सरकार जो योग दे रही थी, उसमे 3 अरब डालर की कमी हो गई। औद्योगिक उत्पादन का सूचक अक अगस्त, 1937 के 119 के स्तर से गिरकर मई, 1938 मे 81 पर आ गया (आधार 1935-39=100) और बेरोजगारो की सख्या मे 40 लाख की वृद्धि हो गई।

सन् 1937 की मन्दी की तीव्रता ने प्रशासन को अपनी पुराने ढग की वित्तीय नीतियो का परित्याग कर घाटे की वित्त-व्यवस्था का सहारा लेने के लिए मजबूर कर दिया। उसने सार्वजनिक निर्माण आदि पर सघीय सरकार के खर्च मे फिर वृद्धि कर दी और उसका औचित्य सिद्ध करते हुए अप्रैल, 1938 मे घोषणा की कि "आज की लोगो की क्रय-शक्ति इतनी नही है कि

वह आर्थिक प्रणाली को अधिक तेज गति से सक्रिय कर सके। शासन के उत्तरदायित्व का हमसे यह तकाजा है कि हम सामान्य आर्थिक प्रक्रियाओ को अधिक वेग प्रदान करे और यह देखे कि आर्थिक गतिविधि मे होने वाली नई वृद्धि पर्याप्त हो।" देश के कुछ प्रभावशाली वर्गो ने इस नीति का जोरदार विरोध किया। ये वर्ग अब भी पुरानी दकियानूसी वित्तीय नीतियो से ही चिपटे रहना चाहते थे।

मन्दी के दिनो मे सरकार द्वारा सहायता के लिए व्यय किये जाने का विचार आज अमेरिकन राजनीति मे विवाद का महत्त्वपूर्ण विषय नही रहा है। यह हो सकता है कि किसी खास व्यय कार्यक्रम की विस्तृत बारीकियो के बारे मे कुछ मतभेद हो और यह भी सम्भव है कि किसी कार्यक्रम के समय या उस पर व्यय की मात्रा के बारे मे मतैक्य न हो, तो भी सब मिलाकर दोनो बडे राजनीतिक दलो ने यह बात स्वीकार कर ली है कि मुद्रास्फीति को रोकने के लिए सरकार द्वारा अधिक धन व्यय किया जाना अत्यावश्यक है।

वाल्टन हैमिल्टन ने अपनी 'दि पॉलिटिक्स ऑफ इडस्ट्री' नामक पुस्तक मे नई नीति को सार रूप मे इन शब्दो मे व्यक्त किया है "इसके अन्तर्गत निर्धारित की गई नीतियाँ तात्कालिक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए अपनाई गई सामाजिक नीतियाँ थी। इन नीतियो के साधन के रूप मे जो एजेन्सियाँ, कमीशन, बोर्ड या अथारिटियाँ स्थापित की गई, वे अधिकतर अस्थायी थी। नई नीति के नाम से जो अनेक कानून बनाये गए और कदम उठाये गए, वे कुछ हद तक एक दूसरे के साथ पूर्णत सगत नही थे, उनसे यह प्रतीत होता था कि सरकार अपनी विचारधारा मे बार-बार परिवर्तन कर रही है और वे सख्या और स्वरूप मे इतने विविध प्रकार के थे कि उन्हे किसी एक अखड और सुगठित ढाँचे मे नही बैठाया जा सकता था। इन सब कानूनो और कार्यो मे अपनाई गई तकनीके राजनीतिक कला के आविष्कार मात्र थी। राज्य और अर्थ तन्त्र के बीच जो पृथक्त्व चला आ रहा था, वह खत्म हो गया था।"[1]

---

1 न्यूयार्क एल्फ्रेड ए क्नॉफ, इन्कापा, 1957।

दूसरे विश्व-युद्ध-काल की अर्थ-व्यवस्था

नई नीति अपने समस्त आशापूर्ण प्रयत्नो के बावजूद अमेरिकन पूँजी-वाद की शक्तिशालिता मे लोगो का फिर से पूरा विश्वास नही जमा सकी। लेकिन द्वितीय विश्व-युद्ध के दिनो मे सयुक्त राज्य ने जो असाधारण आर्थिक करिश्मा कर दिखाया उसने अमेरिकन पूँजीवाद के बारे मे रहे-सहे सन्देहो की निवृत्ति कर दी।

जापान द्वारा पर्ल हार्बर पर 7 दिसम्बर, 1941 को आक्रमण किये जाने से काफी पहले ही विश्व-युद्ध ने सयुक्त राज्य की अर्थ-व्यवस्था को उभारना शुरू कर दिया था। सन् 1939 के पतझड मे ज्यो ही यूरोप एक विशाल रणक्षेत्र बना, नाजी आक्रमण की गम्भीरता के प्रति अमेरिकन जनता अत्यधिक सजग हो उठी और कुछ क्षेत्रो मे पृथक्त्ववाद की पुरानी भावना मौजूद रहने पर भी यह नई चेतना पृथक्त्ववाद पर हावी हो गई। युद्ध छिडते ही सयुक्त राज्य की सरकार ने जो प्रकट रूप मे तटस्थ थी, मित्र राष्ट्रो को नकद मूल्य लेकर युद्ध सामग्री देनी प्रारम्भ कर दी। इसी 'तटस्थ' सरकार ने अपने विमान उनकी निर्माता कम्पनियो को वापस कर दिये, ताकि वे मित्र राष्ट्रो को उनका 'पुनर्विक्रय' कर सके। इसके अलावा 1940 के पतझड मे अमेरिका ने ब्रिटिश वेस्ट इडीज और बरमूडा के नौसैनिक अड्डो के उपयोग के लिए अधिकार प्राप्त कर उनके बदले मे ब्रिटेन को 50 'पुराने' विध्वसक जहाज भी दिये। काग्रेस ने शान्ति काल मे (क्योकि सयुक्त राज्य ने अभी युद्ध घोषणा नही की थी) पहली बार अमेरिका मे सैनिक भर्ती का कानून पास किया और दोनो महासभाएँ (प्रशान्त और अटलाटिक) मे नोसेना को सुदृढ बनाने के लिए 18 अरब डालर का कार्यक्रम स्वीकार किया। सैनिक सगठन के लिए अनेक सगठनो की स्थापना की गई।

सन् 1941 मे बड़े पैमाने पर मित्र राष्ट्रो को उधार पट्टे पर युद्ध

सामग्री देना प्रारम्भ हो गया। उस वित्तीय वर्ष मे कुल सैनिक व्यय 7 अरब डालर था, जो युद्ध से पूर्व के वर्षो के सघीय सरकार के कुछ औसत वार्षिक बजट के बराबर था। दिसम्बर, 1941 तक सैनिक साधन-सामग्री पर व्यय 2 अरब डालर मासिक पर पहुँच गया। बेरोजगारी घटकर 1930 के बाद के निम्नतम स्तर पर उतर आई, हालाँकि 55 लाख से अधिक आदमी उस समय भी काम की तलाश मे थे।

सयुक्त राज्य के अधिकृत रूप मे युद्ध मे पड जाने के बाद एक नये युद्ध उत्पादन बोर्ड की स्थापना की गई, जिसे युद्ध के लिए आवश्यक सामग्री के उत्पादन और उपलब्धि को समन्वित और समायोजित करने के लिए अभूतपूर्व अधिकार प्रदान किये गए। युद्ध-कालीन जन-शक्ति कमीशन को सैनिक कर्मचारियो और अधिकतर असैनिक कर्मचारियो पर उसी तरह के अभूतपूर्व अधिकार दिये गए। मूल्यो मे स्थिरता कायम रखने के लिए एक मूल्य प्रशासन कार्यालय स्थापित किया गया। इस कार्यालय को प्रथम विश्व-युद्ध के वर्षो की भाँति मुद्रा-स्फीति को असाधारण रूप से बढने से रोकने का काम भी सौपा गया।

सैनिक, असैनिक और निर्यात क्षेत्रो मे युद्ध की निरन्तर बदलती आवश्यकताओ को देखकर ही सारा आर्थिक आयोजन किया जाता था। उपलब्ध साधनो का यथासम्भव उन आवश्यकताओ के अनुकूल उपयोग किया जाता था। उद्योगो पर अनेक नियन्त्रण स्थापित किये गए, परन्तु प्रारम्भिक परीक्षण के बाद उनमे से बहुत-से नियन्त्रण हटा भी लिये गए। कुछ नियन्त्रणो को अमल मे लाने की आवश्यकता ही नही पडी। तरीका चाहे कोई भी बरता जाय, आवश्यकता इस बात की अनुभव की जाती थी कि जहाँ भी स्वतन्त्र व्यापार को अत्यन्त मन्द, अक्षम और सकट-कालीन जरूरतो को पूरा करने के लिए अपर्याप्त समझा जाय, वही समुचित आर्थिक आयोजन किया जाय।

उत्पादन क्षमता को बढाने का एक तरीका यह था कि प्राइवेट उद्योगो को अपने कारखानो का विस्तार करने या उनमे उत्पादन वृद्धि के लिए समुचित परिवर्तन करने के लिए प्रोत्साहन दिया जाय। इसके लिए सरकार ने उन्हे ऋण या उधार दिये अथवा बैको के ऋण की गारटियाँ दी।

उसने उद्योगो को टैक्स मे मूल्यह्रास की छूट के रूप मे अरबो डालर का लाभ दिया और दुर्लभ कच्चे माल के उत्पादको को, उनके घाटे की पूर्ति के लिए काफी अनुपूर्तियाँ दी।

किन्तु इतने प्रोत्साहन मिलने पर भी उत्पादको ने उत्पादन मे काफी वृद्धि नही की। उनकी इस अनिच्छा का कारण सम्भवत यह था कि युद्ध काल मे बहुत-सी खास किस्म की मशीनरी की आवश्यकता होती है, परन्तु युद्ध समाप्त हो जाने के बाद कभी-कभी उसकी कोई जरूरत नही रहती।

इस पर सरकार युद्धकालीन सयन्त्रो का निर्माण स्वय करने लगी। इसके लिए उसने 16 अरब डालर व्यय किये। यह राशि नये युद्धकालीन सयन्त्रो पर खर्च की गई राशि का लगभग 83 प्रतिशत थी। कृत्रिम रबड, मैगनेशियम, समुद्री जहाजो और विमानो का 90 प्रतिशत, एल्युमीनियम के सामान का 70 प्रतिशत और मशीनी औजारो का 50 प्रतिशत उत्पादन सरकार के हाथ मे था। इसके अलावा दो बडी तेल की पाइप लाइने भी सरकार द्वारा ही स्थापित की गई। यद्यपि इन मे से अधिकतर कारखाने चलाने के लिए सरकार ने दूसरो को पट्टे पर दे दिये, तो भी कुछ कारखाने ऐसे थे जिनका सचालन उसने स्वय किया।

सरकार द्वारा सीधा नियन्त्रण किये जाने का परिणाम यह हुआ कि युद्ध के लिए जिन वस्तुओ की आवश्यकता नही थी, जैसे असैनिक मोटरकार आदि, उनका उत्पादन सीमित हो गया। अत्यधिक आवश्यक वस्तुओ के उत्पादन को प्राथमिकता देने के लिए एक प्राथमिकता-क्रम निर्धारित किया गया। इसके अलावा उत्पादन के लिए आवश्यक वस्तुओ के नियन्त्रण, अधिग्रहण, उत्पादन सूचियो के निर्माण और वितरण के लिए आवश्यक निर्देश आदि के तरीके भी अपनाये गए, जिससे जरूरी वस्तुओ का उत्पादन अनावश्यक वस्तुओ के उत्पादन से पहले हो और सरकार को समुचित मात्रा मे उनकी उपलब्धि हो सके। सरकार ने एक 'नियन्त्रित सामग्री योजना' तैयार की जिसका प्रयोजन इस्पात, ताँबा और एल्युमीनियम आदि कुछ अत्यावश्यक वस्तुओ के उत्पादन और उपलब्धि को नियन्त्रित करना था। लेकिन यह योजना बहुत प्रभावकारी ढग से लागू नही की जा सकी, क्योकि

श्रक कुल 22 प्रतिशत बढा।

मुद्रा स्फीति को श्रौर महँगाई को बढने से रोकने वाला मुख्य कारण मूल्य प्रशासन कार्यालय द्वारा मूल्यो पर सरकारी नियन्त्रण था। इन नियन्त्रणो का लाभ यह था कि वे वस्तुश्रो की उपलब्धि कम श्रौर मॉग श्रधिक होने से सम्भावित मूल्य वृद्धि को रोके रखते थे। लेकिन मूल्यो पर नियन्त्रण के दूसरे दुष्परिणाम श्रवश्य हुए। सामान श्रौर सेवाश्रो की किस्म गिर गई श्रौर श्रनेक क्षेत्रो मे काला वाजार चल निकला। इसके श्रलावा मूल्य प्रशासन कार्यालय की तरह-तरह से श्रालोचनाएँ की जाने लगी।

इन सब मानवीय, कानूनी श्रौर सास्थानिक कमजोरियो के वावजूद सयुक्त राज्य के विशाल मानवीय श्रौर श्रौद्योगिक साधनो के सगठन के फलस्वरूप मित्र राष्ट्रो की कुल युद्ध सामग्री का दो तिहाई भाग श्रकेला श्रमेरिका ही मुहैया कर सका। इस सगठन का परिणाम यह हुश्रा कि 1940 श्रौर 1945 के वीच सयुक्त राज्य का श्रौद्योगिक उत्पादन 75 प्रतिशत वढा श्रौर राष्ट्र की कुल श्राय (डालरो के स्थिर मूल्यो मे) इसी श्रवधि मे 48 प्रतिशत से भी श्रधिक वढ गई।

किन्तु सयुक्त राज्य के युद्ध प्रयत्नो को 'पूर्ण युद्ध' के प्रयत्न नही कहा जा सकता। जिस समय ये युद्ध प्रयत्न श्रपनी चरम सीमा पर थे, उस समय भी देश की 6 करोड 60 लाख की कुल जन-शक्ति मे से सिर्फ 1 करोड 10 लाख व्यक्ति ही सेना मे थे। सन् 1944 मे राष्ट्र की कुल श्राय 2 खरब 11 श्ररब डालर थी जिसमे से कुल 44 प्रतिशत राष्ट्रीय सुरक्षा पर खर्च की गई श्रौर उसके वाद तो उसमे श्रौर भी कमी हो गई, हालॉकि लडाई उस समय भी जारी थी। एक वात श्रौर भी हुई कि सयुक्त राज्य ने इतना युद्ध-प्रयत्न जारी रखने पर भी श्रपने देशवासियो के श्रसैनिक उपभोग को 20 प्रतिशत बढा दिया।

उपभोग्य वस्तुश्रो का राशन कर दिये जाने पर भी श्रमेरिकन नागरिको को युद्ध प्रयत्नो के लिए श्रपेक्षाकृत कम बलिदान करना पडा। यह ठीक है कि श्रमेरिकनो को कुछ चीजो की खरीद के लिए कतारो मे खडे होकर इन्तजार करना पडता था, उन्हे चीनी, कॉफी, मास श्रौर चिकनाई वाली चीजो की कुछ कमी महसूस हुई, उनके मोटरो के उपयोग मे कमी

कर दी गई, कुछ घरेलू मशीनो की खरीद उन्हे स्थगित करनी पडी, और जूते और डिब्बा बन्द खाद्य पदार्थों के उपयोग मे उन्हे कुछ अधिक सावधानी बरतनी पडी। यह भी ठीक है कि नौकरो, विक्रेताओ, बेयरो और नर्सो की कमी के कारण उन्हे कुछ असन्तोष था, परन्तु इसका कारण मजदूरी और वेतन मे अन्तर पड जाना था, सरकार इसके लिए किमी भी तरह जिम्मेदार नही थी। सब मिलाकर सरकार द्वारा उत्पादन और उपभोग पर लागू किये गए नियन्त्रणो के बावजूद अमेरिकन नागरिक किसी भी अन्य युद्धरत राष्ट्र के नागरिको से अधिक स्वतन्त्र थे।

सघीय सरकार की टैक्सो से होने वाली आय मे वृद्धि 1940-46
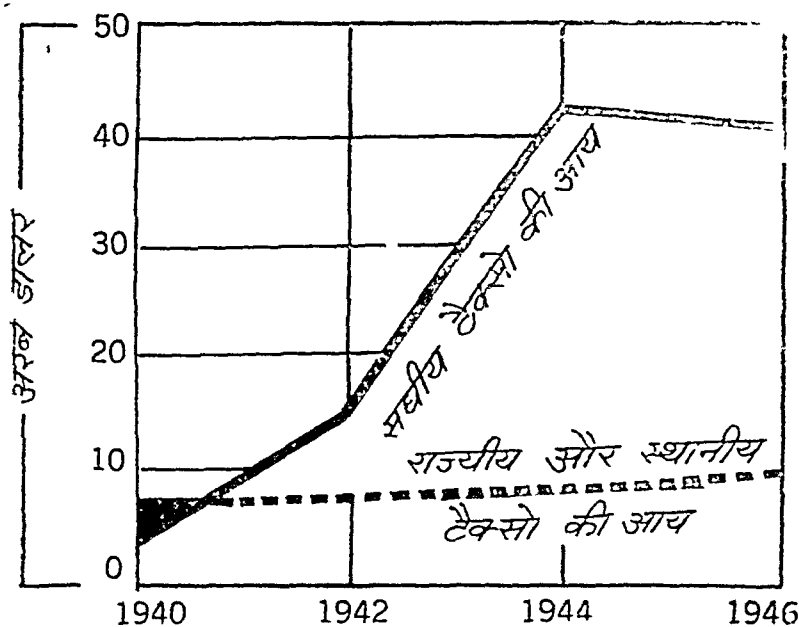
युद्ध ने सघीय, राज्यीय और स्थानीय प्रशासनो के कर-सग्रह के कार्यो को एकदम उलटा कर दिया। युद्ध से पूर्व सघीय प्रशासन की करो की आय राष्ट्रीय और स्थानीय प्रशासनो की आय से कम थी पर युद्ध के बाद यह स्थिति उलटी हो गई। शीत युद्ध मे भी अब यही परिवर्तित स्थिति जारी है।

इसमे सन्देह नही कि एक विश्वयुद्ध—चाहे वह परम्परागत हथियारो

से लडा जाने वाला पुराने ढग का युद्ध ही हो, मानव के लिए बहुत बडा सकट होता है। किन्तु मानवीय प्राणो के रूप मे उसकी जो कीमत चुकानी पडती है, उसे यदि छोड भी दिया जाय तो भी आर्थिक दृष्टि से भी उसकी बहुत बडी कीमत चुकानी पडती है। सयुक्त राज्य को आर्थिक दृष्टि से दूसरे विश्व-युद्ध की जो कीमत चुकानी पडी, उसका मूल्याकन बहुत दिलचस्प होगा। सेना ने विश्व-युद्ध मे जो सेवाएँ प्रदान की उनका डालरो मे हिसाब लगाना अवश्य कठिन होगा। किन्तु जहाँ तक युद्ध सामग्री के उत्पादन का सम्बन्ध है, युद्ध उत्पादन बोर्ड के अनुसार जुलाई, 1940 से जुलाई, 1945 तक सयुक्त राज्य ने चालू मूल्यो के हिसाब से 1 खरब 86 अरब डालर की कुल युद्ध सामग्री तैयार की। इसमे से 36 अरब डालर की सामग्री मित्र राष्ट्रो को उधार-पट्टे पर दी गई। सयुक्त राज्य के कुल राष्ट्रीय ऋण मे भी भारी वृद्धि हो गई। नई नीति के द्वितीय काल मे युद्ध से पूर्व सयुक्त राज्य का राष्ट्रीय ऋण 42 अरब डालर था, किन्तु युद्ध समाप्त होने पर वह बढकर 2 खरब 58 अरब डालर हो गया।

यद्यपि राष्ट्रपति ने यह प्रस्ताव किया कि किसी भी व्यक्ति को 25,000 डालर से अधिक वेतन न दिया जाय, तो भी युद्ध-कालीन वित्त-व्यवस्था के लिए स्पष्ट रूप से कभी भी आय के समुचित पुर्नवितरण का लक्ष्य नही रखा गया। इसके विपरीत, यह आशा की गई कि टैक्स की दर बढा देने और अधिक लोगो पर टैक्स लगाने से और साथ ही युद्धकालीन नियन्त्रणो और विनियमो से मुनाफाखोरी और शोषण को रोका जा सकेगा।

युद्ध पर वास्तव मे जो भारी खर्च हुआ वह बहुत हद तक लोगो की नजर मे नही आया, क्योकि युद्ध-जन्य समृद्धि का उपभोग प्राय सभी व्यक्ति कर रहे थे। मुनाफे के आँकडो से आम तौर पर यह बात जाहिर नही हो पाती कि कम्पनियो के मुनाफे अन्य मुनाफो की अपेक्षा कम थे। सन् 1939 और 1944 के बीच कम्पनियो के मुनाफे (टैक्स काटने से पूर्व) बढकर साढे तीन गुने से भी अधिक हो गए थे। किन्तु टैक्स काटने के बाद कम्पनियो के शुद्ध मुनाफे पहले की अपेक्षा केवल दुगुने ही थे, जबकि कुल राष्ट्रीय आय डालर के चालू मूल्य के अनुसार, 2 33 गुने के लगभग हो गई थी।

इसमे सन्देह नही कि मोटे तौर पर आँकडो की यही तसवीर थी किन्तु

फिर भी कुछ उद्योग-व्यवसाय ऐसे थे, जो इससे कही अधिक समृद्ध हो गए। उदाहरण के लिए सरकार की तत्कालीन रिपोर्ट के अनुसार गढे हुए धातु के ढॉचो के उद्योग मे युद्ध-पूर्व की अपेक्षा 26 गुना मुनाफा (टैक्स काटने के वाद) था। छोटी फर्मों के मुनाफे सबसे अधिक थे। इसका एक कारण सभवत. यह था कि उनके लिए कठोर नियन्त्रणो से बचने की गुजायश वडे उद्योगो

सघीय सरकार की वित्तीय स्थिति

1940

9 अरब डालर
वार्षिक व्यय

1945

युद्ध के वर्षो मे संघीय सरकार के वार्षिक व्यय के साथ-साथ उसके ऋणो मे भी भारी वृद्धि हुई। सन् 1960 मे सघीय सरकार पर 286 अरब डालर से अधिक का ऋण था जिस पर उसे 9 अरब डालर व्याज देना था।

की अपेक्षा अधिक थी।

मजदूर यूनियने युद्धकालीन मे हडताल न करने का वचन दे चुकी थी, इसलिए मूल्य वढने पर वेतनो मे तदनुसार वृद्धि के लिए वे सरकार की ओर आशा भरी नजरो से देखती थी। जुलाई, 1942 मे सरकार ने वेतनो मे 15 प्रतिशत वृद्धि के लिए एक फार्मूला निकाला, जिसका उद्देश्य उस समय

तक मूल्यो मे हुई वृद्धि को वेतन-वृद्धि से सन्तुलित करना था। इसके अलावा श्रमिको की आर्थिक स्थिति मे और भी सुधार हुआ क्योकि कम्पनियो ने उनके लिए पेन्शन और डाक्टरी देख-भाल आदि की योजनाएँ लागू कर दी थी। स्त्रियो और नवोदित तरुणो के भी रोजगार पर लग जाने से परिवारो की आमदनियाँ वढ गई। कर्मचारियो के वेतनो मे से कुछ रकम काटकर उसके वदले मे उन्हे वाड दिए जाते थे और वाजारो मे चीजो की उपलव्धि कम होने से लोग स्वय भी कुछ वचत कर लेते थे। इन दोनो का लाभ यह था कि अनिरुद्ध परिसम्पत्ति (लिक्विड एसेट) की उपलव्धि की सम्भावना काफी वढ जाती थी।

युद्ध के दिनो मे किसानो की हालत भी अच्छी थी, क्योकि सरकार ने सिर्फ उत्पादन वृद्धि को ही प्रोत्साहन नही दिया, वल्कि विदेशो को भेजने के लिए उनसे कृषि-उत्पादन अधिकाधिक मात्रा मे खरीदे भी। युद्धकाल मे करीव 50 लाख व्यक्ति कृषि से हटकर दूसरे कामो मे लगे, फिर भी कृषि की उत्पादकता वढ गई। इस प्रकार कृषि-जन्य आय कुछ लोगो के लिए उचित स्तर से नीची होने पर भी काफी वढ गई। सन् 1939 मे प्रति व्यक्ति आय 249 डालर थी, परन्तु युद्ध समाप्त होने तक वह वढकर 700 डालर हो गई।

द्वितीय विश्व-युद्ध मे जो अनुभव और परिवर्तन हुए उन्होने सयुक्त राज्य की युद्धोत्तर कालीन नीतियो को प्रभावित किया। युद्ध-काल मे पूर्ण रोजगार की स्थिति स्थापित हो जाने से लोगो के मन मे यह आम धारणा पैदा हो गई थी कि शान्ति काल मे भी यह स्थिति कायम हो सकती है। यह मान लिया गया कि अर्थ-व्यवस्था मे सरकार का थोडा-वहुत हस्तक्षेप आवश्यक ही है। तव से सघीय सरकार का वजट गिरकर राष्ट्रीय आय के 15 प्रतिशत से भी कम हो गया है और सैनिक वजट इस वजट का कम-से-कम आधा रहता है।

युद्ध समाप्त होने पर सयुक्त राज्य के सामने राष्ट्र के भीतर वहुत-सा अधूरा काम पडा था। प्राय सभी स्तरो (सघीय, राज्यीय और नागरिक) पर सरकार के युद्ध-प्रयत्नो मे व्यस्त रहने के कारण सार्वजनिक सेवाएँ वहुत पिछड गई थी। युद्ध-काल मे अधिकाधिक लोगो के श्रमिक वन जाने से सामाजिक दृष्टि से भी देश को कुछ क्षति पहुँची थी। लोगो के लिए आवास

शान्ति और उसका परिणाम

सयुक्त राज्य ने द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद के युग के लिए तैयारी करते हुए उन आर्थिक भूलो के अनुभव और सबक को ध्यान मे रखा, जो उसने प्रथम विश्व-युद्ध की समाप्ति के तत्काल बाद की थी। किन्तु इन पुरानी गलतियो से सीखे गए सबक मूल्यवान् होने पर भी नई चुनौतियो का सामना करने के लिए पर्याप्त सिद्ध नही हुए। कई पुरानी बडी भूलें फिर से दुहरा दी गई और कुछ नई भूले भी हो गई। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे अनेक अनिश्चितताएँ थी, देश के बहुत-से आन्तरिक विग्रहो का समाधान नही हुआ, बल्कि वे कुछ समय के लिए स्थगित हो गए और बहुत-सी घटनाएँ बडी जटिल हो गई और उनमे तेजी से परिवर्तन हुए। लेकिन इस सबके बावजूद सयुक्त राज्य ने अपने-आपको पहले विश्व-युद्ध के बाद की अपेक्षा दूसरे विश्व-युद्ध के बाद अधिक अच्छे ढग से परिस्थितियो के साथ समन्वित किया।

युद्ध समाप्त होने से काफी पहले ही शान्तिकालीन अर्थ-व्यवस्था के लिए योजनाएँ तैयार की जाने लगी थीं। जून, 1944 मे ही युद्ध सामग्री उत्पादन बोर्ड ने सामरिक उद्योगो को शान्तिकालीन उद्योगो मे परिवर्तन की तैयारी कर ली थी। युद्ध के लिए औद्योगिक सगठन धीरे-धीरे खत्म किया जा रहा था और कुछ नियन्त्रण ढीले कर दिये गए थे। सैन्य-विघटन की प्रेरणा इतनी प्रबल थी कि मई, 1945 मे यूरोप मे युद्ध समाप्त होते ही कुछ नियन्त्रण समय से पूर्व ही हटा लिये गए, जिसका परिणाम यह हुआ कि अगस्त मे जापान की आखिरी पराजय तक के लिए उन्हे फिर आशिक रूप मे लागू करना पडा।

सन् 1945 की ग्रीष्म ऋतु मे राष्ट्रपति ट्रूमन के एक आदेश मे कहा गया था कि "हमारा लक्ष्य मूल्यो, मजदूरियो, सामग्रियो और सुविधाओ पर लगाये गए युद्धकालीन नियन्त्रणो को धीरे-धीरे व्यवस्थित ढग से बदलना है और इस सक्रान्ति काल मे राष्ट्र की अर्थ-व्यवस्था को स्थिर बनाए रखना

है।" कुछ महीनो के भीतर ही जन-शक्ति और व्यापारिक वाहनो के उपयोग पर से नियन्त्रण उठा लिये गए, चीनी को छोडकर शेष सभी उपभोग्य वस्तुओ पर से राशन खत्म कर दिया गया और बहुत-से मूल्य-नियन्त्रण हटा लिये गए। अतिरिक्त लाभ-कर भी खत्म कर दिया गया और जिन युद्धकालीन उद्योगो को शान्तिकालीन उद्योगो मे परिणत किया गया, उन्हे टैक्सो मे राहत दी गई। कच्चे माल, आवास-व्यवस्था और निर्यात पर कुछ प्राथमिकताएँ कायम रखी गई और उनके लिए राशियाँ निर्धारित करने के बारे मे कुछ नियन्त्रण भी बरकरार रखे गए। इन युद्धकालीन नियन्त्रणो मे से कुछ अभी तक लागू है।

आम तौर पर सरकार की इन कार्यवाहियो के फलस्वरूप राष्ट्र के साधनो को युद्धकालीन उपयोगो से हटाकर शान्तिकालीन उपयोगो मे लगाने का काम शान्तिपूर्वक और व्यवस्थित ढग से सम्पन्न हो गया। जो लोग मूल्य प्रशासन कार्यालय को विघटित करने के समर्थक थे, उन्होने उसके पक्ष मे यह दलील दी कि उद्योग-व्यवसाय को प्रोत्साहन देने के लिए ऐसा करना आवश्यक है। उनका कहना था कि युद्धकालीन अर्थ-व्यवस्था को शान्ति-कालीन व्यवस्था के अनुकूल परिवर्तित करने और उपभोक्ताओ की बहुत समय से चली आ रही अपूर्ण आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए यह जरूरी है कि व्यापार को मुक्त और स्वतन्त्र रूप मे चलने दिया जाय। दूसरी ओर ऐसे लोग भी थे जो व्यापार को यह स्वल्पकालिक लाभ देने के पक्षपाती नही थे। उनका कहना था कि सरकार को दूरदृष्टि से सोचना चाहिए और मूल्य-वृद्धि को नियन्त्रणो के जरिये रोककर सामूहिक तौर पर जनता की क्रय-शक्ति को बनाए रखना और मुद्रास्फीति को बढने से रोकना चाहिए।

जो हो, जनता नियन्त्रणो से तग आ गई थी और वह वास्तविक प्रश्नो और समस्याओ को नही समझती थी। मजदूर मजदूरी के नियन्त्रण से चिढे हुए थे और उद्योगपति एव व्यापारी मूल्य और ऋण नियन्त्रण से बिगडे हुए थे। इसलिए जनता के इस बढते हुए विरोध के कारण, मूल्य-नियन्त्रण धीरे-धीरे हटा लिये गए और 1946 के पतझड मे उनका पूर्णत अन्त हो गया।

यह नियन्त्रण हटते ही मजदूरी और कीमत, दोनो मे तत्काल वृद्धि हो गई। थोक मूल्यो का सूचक अक, जो लडाई के दौरान मे कभी भी 14 प्रतिशत से अधिक ऊँचा नही गया, 1946 के 9 महीनो मे 33 प्रतिशत ऊँचा हो गया। इसी अवधि मे खुदरा मूल्य भी 17 प्रतिशत बढे। सौभाग्य से, यह मूल्य-वृद्धि, जो लडाई के वर्षो मे लोगो की माँगे दबी रहने के कारण रुकी हुई थी और अब लोगो को खुलकर खरीदने का अवसर मिलते ही बहुत तेजी से बढ गई थी, कुछ समय बाद धीमी पड गई। इसके बाद कोरिया की लडाई शुरू होने तक अमेरिका की अर्थ-व्यवस्था मे बहुत धीरे-धीरे मन्दगति से स्फीति आती रही।

मुद्रास्फीति और मूल्य वृद्धि की समस्या के अलावा युद्ध के बाद दूसरी मुख्य समस्या थी उत्पादक और रोजगार को यथासम्भव उच्चतम स्तर पर रखना। इस समस्या की चुनौती को 1946 के रोजगार कानून मे स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया था। इस कानून मे कहा गया था कि सघीय सरकार की नीति "ऐसी परिस्थितियाँ पैदा करना है जिनमे उन सब लोगो को लाभकारी रोजगार के अवसर प्रदान किये जा सके, जो काम करने मे समर्थ है, काम करना चाहते है और काम की तलाश मे है। रोजगार के इन अवसरो मे अपना निजका धन्धा भी शामिल है। सरकार की नीति का उद्देश्य अधिकतम रोजगार, अधिकतम उत्पादन और अधिकतम क्रय-शक्ति को समुन्नत करना भी है।"

इस कानून मे ये व्यवस्थाएँ भी की गई थी—(1) राष्ट्रपति प्रति वर्ष आर्थिक स्थिति की एक रिपोर्ट प्रस्तुत करे, (2) उनकी सहायता के लिए एक आर्थिक सलाहकार परिषद् स्थापित की जाय, और (3) इन वार्षिक रिपोर्टो के अध्ययन के लिए काग्रेस के दोनो सदनो की एक सयुक्त समिति स्थापित की जाय। रोजगार कानून वास्तव मे पूर्ण रोजगार को कायम रखने के लिए आवश्यक नीतियो को स्वीकार करने के सरकार के नैतिक उत्तरदायित्व की एक उद्घोषणा था। इसलिए दोनो मुख्य राजनीतिक दलो के सदस्यो ने उसका समर्थन किया। अनुदार और उदार दोनो प्रकार के विचारो के सदस्यो की राय मे अमेरिकन जनता को यह विश्वास दिलाने की जिम्मेदारी सरकार पर थी कि उन्हे भविष्य मे फिर कभी भी 1930 के

दशक की-सी आर्थिक कठिनाइयो का सामना नही करना पडेगा।

यह एक विचित्र विडम्बना है कि सरकार के पूर्ण रोजगार का उत्तर-दायित्व अपने ऊपर लेने का अर्थ विभिन्न वर्गो ने यह समझ लिया कि वे लागत-वृद्धि के नाम पर, और दण्ड मे की गई कमी का लाभ उठाकर, अपने आर्थिक स्वार्थो की खुलकर पूर्ति कर सकते है। उदाहरण के लिए बडी औद्योगिक कम्पनियो ने अपनी बाजार मे खडे होने और व्यापार मे टिकने की अधिक शक्ति देखकर मजदूर यूनियनो की वेतन-वृद्धि की माँग के कारण उत्पादन की लागत मे हुई वृद्धि को अपनी जेब से भरने के बजाय उप-भोक्ताओ पर डालना प्रारम्भ कर दिया। दूसरी ओर मजदूर यूनियनो ने भी उपलब्ध श्रम-शक्ति पर अपना काफी नियन्त्रण होने के कारण मजदूरी बढाने के लिए माँगे पेश करना और उन्हे मनवाने के लिए जोर डालना शुरू किया। इस लागत-वृद्धि और उससे उत्पन्न महँगाई का तात्कालिक नुकसान बेचारे बँधी आमदनी वाले वर्गो को उठाना पडता था। इन वर्गो मे रिटायर्ड पेन्शनयापता अथवा ऐसे लोग थे जो बाडो और बन्धक सम्पत्ति (मॉर्टगेज) की बधी आमदनी से निर्वाह करते थे।

मन्दी का मुकाबला करने के लिए जो वित्तीय और मुद्रा सम्बन्धी उपाय कारगार समझे जाते थे, महगाई और मुद्रा-स्फीति का मुकाबला करने के लिए उनका उलटा उपयोग करने से आसानी से काम नही चल सकता था। महगाई और मुद्रास्फीति को रोकने के लिए अनुपूरक वित्तीय नीति के रूप मे टैक्सो मे वृद्धि की जा सकती थी, किन्तु शान्तिकाल मे इस उपाय का सहारा लेने के परिणाम राजनीतिक दृष्टि से प्रतिकूल हो सकते थे। अनेक क्षेत्रो मे सघीय सरकार द्वारा किये जा रहे व्यय को सीमित करने का प्रयत्न किया गया, खास कर जन-कल्याण और सार्वजनिक निर्माण के क्षेत्रो मे, किन्तु इसका लाभ कुछ नही हुआ, क्योकि कुछ नए दबाव और नई परिस्थितियाँ ऐसी पैदा हो गई जिन्होने सघीय सरकार के कुल बजट को बढाकर फिर उतना ही कर दिया। सरकार की मुद्रा नीति मे भी परि-वर्तन नही किया जा सकता था, क्योकि वह ब्याज की दरें नीची रखना चाहती थी और साथ ही यह भी चाहती थी कि अवशिष्ट सरकारी बॉडो की कीमते स्थिर रहे। अधिक-से-अधिक सरकार यही कर सकती थी कि

बैंको के पास सघीय सरकार के जो ऋण-पत्र हो, उनका वह बजट के अधिशेष (बचत) के अनुसार भुगतान कर दे और खास-खास कामो के लिए ऋण देने पर नियन्त्रण लगा दे।

सन् 1940 के दशक के युद्धोत्तरकालीन वर्षो मे सयुक्त राज्य के अन्तर्राष्ट्रीय मामलो मे उलझने के कारण मुद्रास्फीति की प्रवृत्ति और भी बढ गई। दूसरे विश्व-युद्ध की समाप्ति से काफी पहले ही सरकार ने युद्धोत्तरकालीन अर्थ-व्यवस्था के लिए योजनाएँ बनाना और वार्ताएँ करना प्रारम्भ कर दिया था। सन् 1943 के प्रारम्भ मे खाद्य और कृषि की युद्धोत्तरकालीन समस्याओ पर विचार करने के लिए एक सयुक्त राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया गया। उसी वर्ष के अन्त तक सयुक्त राष्ट्र सघ के तत्वावधान मे एक सहायता एव पुनर्वास सघ भी काम करने लगा था। सन् 1944 मे अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा निधि (इटरनेशनल मॉनिटरी फड) और अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण एव विकास बैंक की, जो विश्व बैंक के नाम से अधिक प्रख्यात है, स्थापना के भी प्रस्ताव किये गए।

युद्ध के तत्काल बाद युद्ध कालीन व्यवस्था से शान्तिकालीन व्यवस्था की ओर सक्रान्ति अत्यधिक आसानी और निर्विघ्नता से हो गई थी, इसलिए अनेक प्रेक्षको ने यह निष्कर्ष निकाला कि युद्ध समाप्त होने से पूर्व ही बुद्धिमत्तापूर्वक दूरदर्शिता से आयोजन प्रारम्भ कर देने के कारण ही यह युद्धोत्तरकालीन पुनर्निर्माण सम्भव हुआ है। यूरोपियन देशो मे कई उद्योग एक वर्ष के भीतर ही युद्ध-पूर्व के स्तर पर उत्पादन करने लग गए, जबकि प्रथम विश्वयुद्ध के बाद उन्हे युद्धपूर्व के स्तर पर आने मे छ वर्ष लग गए थे। किन्तु 1947 के बाद के तीव्र घटनाचक्र ने सामान्य स्थिति के पुन शीघ्र स्थापित होने की सारी आशाएँ धूल मे मिला दी। इस घटनाचक्र के फलस्वरूप द्रुत पुनर्निर्माण के बजाय अन्तर्राष्ट्रीय सकटो की बार-बार पुनरावृत्ति होती रही।

सयुक्त राज्य यह आशा नही कर सकता था कि वह अपनी घरेलू समस्याओ की निजी दुनिया मे लौटकर इन सकटो से बच जाएगा। नैतिक, राजनीतिक या आर्थिक, किसी भी दृष्टि से अमेरिका के लिए फिर से पृथक्त्ववाद को अपनाना सम्भव नही था। युद्ध के बाद स्थिति यह थी कि

ससार-भर मे उद्योग व्यवसाय मे जितनी पूँजी लगी हुई थी, उसका तीन-चौथाई भाग अमेरिका का, और इसी तरह ससार के कुल सस्थापित उद्योगो का दो-तिहाई भाग भी अमेरिका का था। इस पर मजा यह कि सयुक्त राज्य की आबादी ससार की कुल आबादी का सिर्फ सोलहवाँ भाग थी। यह जाहिर था कि ससार-भर के अल्पविकसित क्षेत्रो मे उन्नति की उभरती हुई आकाक्षाओ की जो क्रान्ति उठ रही थी, उसके सामने यह एकतरफा 'शक्ति सन्तुलन' कायम नही रह सकता था। इसके अलावा राजनीतिक जगत् मे अराजकता की स्थिति से बचने के लिए पश्चिमी यूरोप की युद्ध-ध्वस्त अर्थ-व्यवस्थाओ का युद्ध से पूर्व की स्थिति मे फिर से शीघ्र लौट आना भी आवश्यक था।

युद्ध की समाप्ति के बाद शुरू-शुरू मे सयुक्त राज्य मे जो वैदेशिक आर्थिक नीतियाँ अपनाई वे मोटे तौर पर अपने आप मे उत्तरदायित्वपूर्ण और सर्वथा उपयुक्त थी। सयुक्त राज्य के अन्य देशो को तत्काल राहत देने और उद्योग-व्यापार के लिए उधार की सुविधा प्रदान करने की जो नीति अपनाई थी, वह एक सुविचारित नीति थी। इसके अतिरिक्त विश्व, बैक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा निधि की मार्फत सहायता देकर विश्व की अर्थ-व्यवस्था को फिर से सभालने और ऊपर उठाने के लिए दीर्घकालीन योजनाएँ भी बनाई गई थी। इस प्रकार तात्कालिक और दीर्घकालीन सहायताओ की योजनाएँ तो बना ली गई, किन्तु मध्यवर्ती काल के लिए दर्म्यानी योजनाओ का निर्माण अपेक्षाकृत उपेक्षित रहा।

सयुक्त राज्य के बाहर पश्चिमी यूरोप ही सबसे बडा व्यापारिक और औद्योगिक क्षेत्र था और यह आवश्यक था कि विश्व के उत्पादन और व्यापार का पुनरुद्धार करने के लिए उसे पहले उबारा जाय। सन् 1946 मे वहाँ जो उत्साहवर्धक आर्थिक पुनरुद्धार दिखाई दिया था वह दर-असल एक भ्रममात्र था। इस भ्रम का कारण यह था कि वित्तीय और अन्य प्राकृतिक साधनो की वहाँ एकाएक कमी हो गई और लोगो ने इससे उत्पन्न अवस्फीति का अर्थ यह समझा कि आर्थिक स्थिति सभलने लगी है। इस भ्रम का निवारण होने पर बहुत बडी सख्या मे लोग पूर्ण रोजगार की गारटियाँ माँगने लगे और जन-कल्याण सम्बन्धी उन कार्यक्रमो को

पूरा करने के लिए आन्दोलन करने लगे, जिनकी बहुत-समय पहले ही पूर्ति हो जानी चाहिए थी। इन माँगो की पूर्ति के लिए सरकारो ने अपना खर्च बढाने की जो वित्तीय नीतियाँ अपनाई, उनने मुद्रा-स्फीति और बढ गई। सयुक्त राज्य और लैटिन अमेरिकन देशो की मुद्रास्फीति और महँगाई ने यूरोप के पुनरुद्धार के लिए आवश्यक कच्चे माल और मशीनरी आदि का मूल्य बहुत बढा दिया। युद्ध मे जो जहाज ध्वस्त होने से बच गए, वे भी खस्ता हालत मे थे। इसके अलावा यूरोपियन देशो ने अपने उपनिवेशो मे जो पूँजी लगाई हुई थी और उससे जो मुनाफा आ रहा था, वे दोनो ही धीरे-धीरे उनके हाथो से खिसकते जा रहे थे।

शीत-युद्ध के प्रारम्भिक गर्जन ने स्थिति को और भी उलझा दिया। अग्रेजो को समुद्र-पार के देशो से अपने जगह-जगह फैले और महँगे सैनिक सस्थानो और जिम्मेदारियो को छोडना पडा। अग्रेजो के ग्रीस और टर्की से सेनाएँ हटाने पर वहाँ जो रिक्तता आई, उसे भरने के लिए सयुक्त राज्य को उसका स्थान लेना पडा। उसे सोवियत रूस के आर्थिक और राजनीतिक दबाव का सामना करने के लिए ईरान को भी मजबूत बनाना पडा। सन् 1947 मे दो व्यापक वैदेशिक सहायता कार्यक्रम प्रस्तुत किये गए। इनमे से एक कार्यक्रम था ट्रूमन सिद्धान्त, जिसका उद्देश्य था ग्रीस और टर्की को सैनिक और आर्थिक सहायता देना और दूसरा कार्यक्रम था मार्शल योजना, जो उससे अधिक व्यापक था और जिसका प्रयोजन यूरोप को फिर से अपने पाँवो पर खडा करना था। इन कार्यक्रमो के द्वारा सयुक्त राज्य ने मध्यम अवधि की आर्थिक सहायता को वैदेशिक नीति के साधन के रूप मे अपनाया। सब मिलाकर इन कार्यक्रमो के द्वारा सयुक्त राज्य ने 1948 से 1952 तक चार वर्ष की अवधि मे यूरोप को 12 अरब डालर की आर्थिक सहायता देना स्वीकार किया।

इतिहास मे इतनी बडी और व्यापक सहायता इससे पूर्व पहले कभी नही दी गई थी। पश्चिमी यूरोप मे सयुक्त राज्य की सहायता स्पष्टत आर्थिक और राजनीतिक उफान को रोकने और यूरोप को फिर से अपने पाँवो पर खडा करने के लिए बहुत उपयोगी थी। इसके लिए जो वास्तविक कार्यविधि अपनाई गई वह बडी पेचीदा थी। इसके लिए 1948-49 की विश्वव्यापी

मन्दी के दिनो मे मुद्रा का अवमूल्यन किया गया और कुछ अन्य कदम भी उठाये गए। इसके साथ ही दीर्घकाल से चली आ रही अन्य मुद्रास्फीति और महगाई की प्रवृत्तियो पर भी नियन्त्रण करना पडा। लेकिन यह स्पष्ट नजर आने लगा कि पश्चिमी यूरोप का पूर्णत आर्थिक उद्धार हो जाएगा। दुर्भाग्य से शीत-युद्ध जन्य सन्देहो के कारण सोवियत रूस के पिछलग्गू पूर्वी यूरोपीय देशो ने मार्शल-योजना के कार्यक्रम मे शामिल होने से इन्कार कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि यूरोपियन महाद्वीप का व्यापार और विकास कम-से-कम भविष्य मे काफी समय के लिए विभक्त हो गया।

मार्शल-योजना मे इस बात पर बल दिया गया था कि पश्चिमी यूरोप के किसी एक देश का नही, बल्कि समग्र रूप से सारे पश्चिमी यूरोप का पुनरुद्धार हो। इसके लिए पश्चिमी यूरोप के देशो मे आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रो मे अधिक सहयोग की आवश्यकता थी। सयुक्त राज्य ने यह शर्त लगा दी थी कि सभी देश मिलकर अपनी आवश्यकताओ का हिसाब लगाएँ। इसका लाभ यह हुआ कि यूरोपियन आर्थिक सहयोग सगठन के जरिये सयुक्त रूप से पारस्परिक सहयोग से मिलकर यूरोप के देश कार्यक्रम बनाने लगे।

जॉर्ज सी० मार्शल
मार्शल-योजना के निर्माता

पश्चिमी यूरोप के इस प्रादेशिक सगठन और एकीकरण के आन्दोलन के बाद यूरोपियन कोयला एव इस्पात सघ और बेनीलक्स सीमाकर सघ की स्थापना से और भी बल मिला। उत्तरी अटलाटिक सधि सगठन के जरिये पश्चिमी

यूरोप के देशो और अमेरिका मे जो सैनिक सहयोग स्थापित हुआ उसने पारस्परिक सन्देहो को दूर कर इन राष्ट्रो मे और भी मजबूत आर्थिक सम्बन्ध स्थापित किये। अमेरिका के अनुभवो से लाभ उठाकर यूरोप मे भी उत्पादकता वृद्धि और बडे पैमाने पर बिक्री के लिए प्रयत्न किये गए और उससे यूरोपियन पूँजीवादी प्रणाली मे परम्परा से चली आ रही उत्पादको के गुट बनाकर बाजार पर अधिकार स्थापित करने की प्रवृत्ति धीरे-धीरे छिन्न-भिन्न होने लगी।

इस अवधि मे अल्पविकसित देशो को सयुक्त राज्य से अपेक्षाकृत कम आर्थिक सहायता मिली। वे सयुक्त राज्य की प्राइवेट पूँजी को भी, जो उनकी अर्थ-व्यवस्था मे जान डाल सकती थी, अधिक आकृष्ट नही कर सके। सिर्फ तेल और कुछ अन्य सामरिक महत्त्व की वस्तुओ के उद्योगो के लिए ही इन देशो मे प्राइवेट अमेरिकन पूँजी गई। राष्ट्रपति ट्रूमन ने 1949 मे राष्ट्रपति पद ग्रहण करते हुए अपने भाषण मे जिस प्रसिद्ध चतुर्थ सूत्र (प्वायट फोर) का उल्लेख किया था। उसने गरीबी, अशिक्षा और बीमारी के खिलाफ एक नये साहसपूर्ण कार्यक्रम की आशाएँ पैदा कर दी। किन्तु इस कार्यक्रम के लिए काग्रेस ने धन बहुत आहिस्ता-आहिस्ता दिया और साथ ही उसमे बडे पैमाने पर विकास के लिए पूँजी देने के बजाय तकनीकी सहायता पर अधिक जोर दिया जाने लगा। लेकिन इसमे सन्देह है कि यदि बडे पैमाने पर पूँजी दी भी जाती तो भी अनेक अल्पविकसित देश उसका लाभकारी ढग से उपयोग कर पाते। जो भी हो, इस दिशा मे यदि पूँजी-निवेश की कोई सम्भावना थी भी तो वह 1950 मे कोरिया की लडाई छिडने पर पश्चिमी देशो का पुन शस्त्रीकरण का बोझ बढ जाने पर खत्म हो गई।

अमेरिका द्वारा एक अनिश्चित भविष्य के लिए अन्तर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्व स्वीकार किये जाने से सयुक्त राज्य की आन्तरिक अर्थ-व्यवस्था की कुछ समस्याएँ उभरकर सामने आ गई। यह आवश्यक था कि राष्ट्रीय सुरक्षा पर काफी राशि खर्च की जाय, इसलिए सघीय सरकार राष्ट्रीय सुरक्षा और अन्तर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्व दोनो को निभाने की आवश्यकता के कारण अपने बजट को कम नही कर सकती थी और न ही महँगाई और मुद्रास्फीति के दबाव को घटा सकती थी।

इसके अलावा देश की आबादी भी बढ रही थी, इसलिए उसकी आवश्यकताएँ भी तेजी से बढ रही थी, जबकि सरकार उनको उतनी रफ्तार से पूरा नही कर पा रही.थी। इन आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए सबसे अधिक दूरगामी कार्यक्रम था सैनिक अधिकार विधेयक, जो युद्ध की समाप्ति के आसपास पास किया गया। इस विधेयक मे भूतपूर्व सैनिको को सरकारी व्यय से शिक्षा देने और गृह-निर्माण और छोटे-मोटे व्यापार के लिए सरकारी गारटी से युक्त ऋण देने की व्यवस्था थी।

किन्तु सार्वजनिक निर्माण-कार्य के क्षेत्र मे सरकार बुरी तरह पिछड गई। सन् 1950 मे कुल सार्वजनिक निर्माण-कार्यों (सघीय, राज्यीय और नागरिक तीनो) का खर्च 1940 के खर्च से कुछ ही अधिक था। लेकिन इन दस वर्षो मे निर्माण कार्यो की लागते बहुत ऊँची हो गई थी, इसलिए इसका अर्थ यह हुआ कि 1950 मे वास्तविक निर्माण-कार्य 1940 की तुलना मे कम हुआ।

आर्थिक जीवन और भी अधिक सास्थानिक हो गया, क्योकि समृद्धि मे जो वृद्धि हो रही थी, उसका अधिक भाग बडी कम्पनियो को प्राप्त हो रहा था। जिन बडी कम्पनियो के पास हिस्सेदारो मे वितरित न किये गए भारी मुनाफे जमा हो गए थे उन्होने अपने निज के जन-कल्याण कार्यक्रम प्रारम्भ कर दिए और साथ ही वे अपनी ही आन्तरिक पूँजी से अपना विस्तार करने लगी। ट्रेड यूनियने भी विशाल दैत्याकार सगठन बन गई, जिनके पास पेशन और श्रमिक कल्याण कोष के रूप मे अरबो डालर जमा थे। ये ट्रेड यूनियने अपने इस धन को पूँजी के रूप मे उद्योग-व्यवसाय मे निवेश करने लगी और पूंजी-निवेश के मामले मे बीमा कम्पनी, बैंक और निवेश-ट्रस्ट जैसी परम्परागत पूँजी-निवेशक सस्थाओ से होड लेने लगी।

बाजारो मे परम्परा से चली आ रही पुरानी प्रतिस्पर्धात्मक ताकतो का ह्रास हो जाने पर अनेक महत्त्वपूर्ण उद्योगो मे छोटे व्यवसायो का महत्त्व घट गया। बडी फर्मो का बडी यूनियनो के साथ मुकाबला होता था और बडी सरकार ही उनके मामलो मे पच-निर्णय करती थी। कम शक्तिशाली वर्गो का अपने हितो को समुन्नत करने का अपना अलग ही तरीका था। उदाहरण के लिए किसान अब भी सरकारी सहायता के कार्यक्रमो पर निर्भर रहते थे।

उपभोक्ता और छोटे व्यापारी नियन्त्रक और नियामक सरकारी सगठनो से सरक्षण प्राप्त करने का प्रयत्न करते थे।

जन-हित की रक्षा के लिए आर्थिक दवाव डालने वाले वडे शक्तिशाली वर्गों के वीच पच-निर्णय की यह समस्या युद्धोत्तर काल की एक वडी और अत्यधिक परेशान करने वाली समस्या वन गई। किन्तु जून, 1950 मे दक्षिणी कोरिया पर कम्युनिस्टो के आक्रमण से इस समस्या मे ही नही, इसी प्रकार की अन्य आर्थिक समस्याओ मे भी सरकार का सिर खपाना और जनता का चिन्तित होना एकाएक रुक गया। अमेरिकन अर्थ व्यवस्था के वडे सगठनो के हाथो मे अधिकाधिक चले जाने की समस्या पर जनता ने उस समय तक दुवारा कोई चिन्ता नही की, जवतक कि आइसनहोवर का प्रशासन-काल आधा नही गुजर गया।

आइसनहोवर काल

सन् 1952 मे ड्वाइट डी० आइसनहोवर की विजय से संयुक्त राज्य के आर्थिक इतिहास मे एक नये युग का आरम्भ हुआ। सन् 1920 के 'स्वर्णिम दशक' और भारी मन्दी के प्रारम्भिक वर्षो के बाद रिपब्लिकन पार्टी के हाथ मे कोई खास राष्ट्रीय राजनीतिक शक्ति नही रह गई थी। इन बीस वर्षो मे दुनिया मे भारी बुनियादी परिवर्तन हुए थे। इन नई वास्तविकताओ के प्रति अनुक्रिया ही आइसनहोवर युग के दीर्घकालीन महत्त्व को समझने की कुंजी है।

आइसनहोवर

ऐसा लगता था जैसे अन्तर्राष्ट्रीय रंगमंच पर एक पीढी नही, बल्कि एक पूरा मन्वन्तर गुजर गया हो। संयुक्त राज्य के सामने सोवियत संघ की सैनिक और आर्थिक चुनौती और विश्व कम्युनिज्म की आदर्शवाद की चुनौती मुँह बाये खडी थी। साथ-ही-साथ उन्नीसवी शताब्दी के साम्राज्यो की ढलती साँझ और एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका मे आधुनिक राष्ट्रवाद और सामाजिक क्रान्ति के उगते प्रभात ने नई समस्याएं खडी कर दी थी और नये क्षेत्रो के द्वार प्रगति के लिए खोल दिये थे।

सयुक्त राज्य के आन्तरिक रगमच पर भी कूलिज हूवर युग के बाद कितने ही दूरगामी परिवर्तन हो चुके थे। मन्दी और युद्ध, रूजवेल्ट की नई नीति और ट्रुमन के न्याय-व्यवहार ने मिलकर देश की अर्थ-व्यवस्था के ढाँचे और आर्थिक क्षेत्र मे सरकार के कर्तृत्व मे गम्भीर परिवर्नन कर दिये थे। सघीय सरकार ने जन-कल्याण सम्बन्धी कार्यों के लिए नई ज़िम्मेदारियाँ अपने कन्धे पर ले ली थी। अर्थ-व्यवस्था का नियन्त्रण करने वाले सरकारी सगठनो की सख्या बहुत बढ गई थी और वे अधिक शक्तिशाली हो गए थे। सबसे अधिक महत्त्व की बात यह है कि सरकार ने कानूनी तौर पर देश मे पूर्ण रोजगार का दायित्व अपने ऊपर ले लिया था।

चुनाव आन्दोलन से समय डेमोक्रेटिक पार्टी ने यह आरोप लगाया था कि रिपब्लिकन पार्टी की विजय से शासन फिर से प्राइवेट 'स्वार्थी' हितो की कठपुतली बन जाएगा, लेकिन रिपब्लिकन पार्टी ने अपने चुनाव आन्दोलन मे जिस आदर्श का प्रचार किया, वह 'राष्ट्रीय समाजवाद के ध्येय' से बहुत भिन्न था। उसने डेमोक्रेटिक पार्टी पर यह आरोप भी लगाया कि वह अपने 'राजनीतिक उद्देश्यो की सिद्धि के लिए वर्ग-विद्वेष पैदा कर रही है।' रिपब्लिकन पार्टी यह चाहती थी कि सघीय सरकार जन-कल्याण कार्यक्रमो के-लिए जो बडी राशियाँ खर्च कर रही है, उन्हे वह घटा दे और टैक्सो मे भी कमी कर दे। इसके विपरीत प्राइवेट पूंजी के विनियोग के लिए अधिक अनुकूल परिस्थितियाँ पैदा की जाएँ। मोटे तौर पर रिपब्लिकन पार्टी का कहना था कि सघीय सरकार राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था मे कम भाग अदा करे, उसका बजट सन्तुलित हो, राष्ट्रीय ऋण धीरे-धीरे चुका दिया जाय और मुद्रा और वित्त सम्बन्धी नीतियाँ ऐसी हो, जो मूल्य-स्तर को स्थिर रख सके।

राष्ट्रपति आइसनहोवर ने अपने प्रशासन के पहले वर्ष कहा था, "पिछले बीस वर्षों मे समाजवाद धीरे-धीरे सयुक्त राज्य की अर्थ-व्यवस्था पर आक्रमण करता रहा है।" उन्होने आगे कहा कि "नए रिपब्लिकन प्रशासन ने अपने जमाने के सघीय शासन मे एक तरह की क्रान्ति कर दी है। वह देश की अर्थ-व्यवस्था मे सरकार के कर्तृत्व को बढाने के बजाय छोटा करने का प्रयत्न करता रहा है, और उसे नए काम सौपने के बजाय

उसके ऐसे काम तलाश करता रहा है, जिन्हे करने से उसे रोका जा सकता है।"

अनेक विवादग्रस्त प्रश्नो पर आइसनहोवर प्रशासन ने जो नीति संबंधी निश्चय किये, वे इस बात के द्योतक थे कि वह अबन्ध नीति अर्थात् सरकारी हस्तक्षेप को खत्म कर व्यापार-व्यवसाय को स्वतन्त्रता प्रदान करने की नीति का समर्थक था। उदाहरण के लिए उसके कुछ निश्चय और कार्य इस प्रकार थे

● कोरिया की लडाई के दिनो मे गम्भीर मुद्रा स्फीति और महगाई को रोकने के लिए लागू किये गए मूल्य और वेतन सम्बन्धी अनेक नियन्त्रण हटा दिये गए।

● पुनर्निर्माण वित्त निगम को खत्म कर दिया गया।

● प्रशासन मे व्यवसायी वर्ग के लोगो को अथवा उनमे सहानुभूति रखने वालो को महत्त्वपूर्ण स्थान दिये गए।

● सन् 1954 मे टैक्सो मे इस प्रकार के परिवर्तन किये गए, जिससे निजी पूंजी-निवेश को प्रोत्साहन मिले।

● कुछ नए वर्गों मे सामाजिक सुरक्षा कानून के प्रसार के सिवाय और सभी जन-कल्याण सम्बन्धी सरकारी खर्चों मे वृद्धि रोक दी गई। कानून मे संशोधन कर स्त्रियो को 62 वर्ष की आयु मे अवकाश ग्रहण करने की सुविधा प्रदान की गई। संघीय सरकार का जन-कल्याण सम्बन्धी प्रति-व्यक्ति व्यय 1958 मे 1918 की अपेक्षा कम था, लेकिन इसका एक कारण सम्भवत यह था कि भारी विश्वव्यापी मन्दी के दिनो मे पीडित लोगो को राहत देने के लिए जन-कल्याण सम्बन्धी जो कार्यक्रम प्रारम्भ किये गए थे। उनमे से कुछ की 1950 के समृद्ध दशक मे कोई आवश्यकता नही रह गई थी।

● कृषि-जिन्सो के मूल्यो को स्थिर रखने के लिए दी जाने वाली सरकारी सहायता कम कर दी गई और साथ ही उसमे कुछ लचकीलेपन का समावेश भी किया गया।

● प्राइवेट उद्योग-व्यवसाय को प्रोत्साहन देने के लिए अनेक कदम उठाए गए। उदाहरण के लिए तटवर्ती नगरो मे संघीय सरकार ने जो तेल-भडार

सग्रह किये हुए थे, वे राज्यो को सौप दिए गये, हैल की कैनियन बिजली परियोजना आदि अनेक सरकारी व्यवसाय प्राइवेट कम्पनियो को बेच दिये गए और 1946 के प्रमाणु शक्ति कानून मे सशोधन कर गैरसरकारी व्यावसायिक सस्थानो के लिए भी परमाणु शक्ति के विकास के द्वार खोल दिये गए।

किन्तु आइसनहोवर के अनुदार प्रशासन ने 1946 के रोज़गार कानून को अस्वीकार नही किया, जिसके द्वारा सरकार ने पूर्ण रोजगार की व्यवस्था का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिया था। साथ ही उसने उस वित्तीय और मुद्रा-सम्बन्धी नीति को भी अस्वीकार नही किया जिनका प्रयोजन मन्दी के दिनो मे सघीय सरकार के खर्च को बढाकर उत्पादन और रोजगार मे वृद्धि को प्रोत्साहन देना था।

इस प्रकार आइसनहोवर प्रशासन की अनुदार वित्तीय नीतियाँ पिछली पीढियो की अनुदार नीतियो से बहुत भिन्न थी। यद्यपि राष्ट्रपति आइसन-होवर की 1954 की आर्थिक रिपोर्ट मे कहा गया था कि "सरकार के व्यय और हस्तक्षेप को कम करना वाछनीय है," तथापि उसी रिपोर्ट मे आगे चलकर यह भी कहा गया था कि "हमारा समाज इतना जटिल और पेचीदा हो गया है कि प्रतिरक्षा की निरन्तर और भारी आवश्यकताओ का वहन तो सरकार को करना ही पडता है, साथ ही उसे ऐसे भी अनेक उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेने पडते है जिन्हे हम पिछली पीढियो मे जानते भी नही थे।"

सन् 1955 की आर्थिक रिपोर्ट मे कहा गया था कि "यदि सरकार वक्त रहते बुद्धिमत्तापूर्ण कार्रवाई करे तो वह बाद मे आने वाली गम्भीर कठिनाइयो को टाल सकती है।" और 1956 की रिपोर्ट मे कहा गया था कि "सरकार हमारी अर्थ-व्यवस्था मे एक प्रधान तत्त्व के रूप मे हावी हुए बिना आर्थिक उतार-चढाव को हल्का कर सकती है।"

यह ठीक है कि आइसनहोवर प्रशासन द्वारा मन्दी और स्फीति का मुकाबला करने के लिए उठाये गए कुछ वित्तीय और मुद्रा सम्बन्धी कदमो की खासी आलोचना हुई, किन्तु तो भी आर्थिक नियन्त्रण के इन साधनो के काफी व्यापक उपयोग मे यह साबित होता है कि डेमोक्रेटिक पार्टी के प्रशासन मे सरकार ने पूर्ण रोजगार की व्यवस्था का जो उत्तरदायित्व अपने

ऊपर लिया था, उसका रिपब्लिकन सरकार ने भी अपनी नीतियो से दृढता से समर्थन किया। नए प्रशासन द्वारा मन्दी और महँगाई की बार-बार पैदा होने वाली समस्याओ का सामना करने के लिए नए प्रशासन द्वारा उठाये गए कदमो पर सक्षेप से विचार कर इस तथ्य को भली-भाँति समझा जा सकता है।

आइसनहोवर प्रशासन को दो मदियो का सामना करना पडा—1953-54 की और 1957-58 की। सन् 1953-54 के सकट का कारण यह था कि कोरिया की लडाई खत्म होने पर सरकार ने अपने भारी खर्चो को एकदम कम कर दिया था (1953 की दूसरी तिमाही मे जहाँ सघीय सरकार का व्यय 53 2 अरब डालर था वहाँ 1954 की चौथी तिमाही मे वह घटकर 40 5 अरब डालर रह गया)। चार वर्ष बाद 1957-58 मे कठिनाई होने का कारण भी ऐसा ही था। उस समय देश का निर्यात बहुत गिर गया और सैनिक सामग्री के आर्डर भी बहुत कम हो गए जिससे मशीनरी आदि के खर्चो मे बहुत कमी हो गई। इन दोनो सकटो के समय बेरोजगारी बढी। सन् 1958 की दूसरी तिमाही मे देश की सात प्रतिशत श्रम-शक्ति बेकार पडी हुई थी।

हर सकट मे सामाजिक सुरक्षा सुविधाएँ, कृषि-जिन्सो के मूल्यो के स्थिरीकरण के लिए सहायता, बेरोजगारी का भत्ता और टैक्सो मे स्वत- कमी आदि अस्थिरता निवारक उपायो ने सकट के प्रभाव की भयकरता को कुछ कम किया। इनके परिणामस्वरूप व्यक्तिगत स्वायत्त आय मे उतनी कमी नही हुई, जितनी कि राष्ट्रीय आय मे हुई। राष्ट्रीय आय की तुलना मे व्यक्तिगत स्वायत्त आय कुल 4 9 प्रतिशत ही घटी। उपभोक्ताओ को अर्थ-व्यवस्था की स्थिरता मे अब भी इतना भरोसा था कि लोगो का व्यक्तिगत उपभोग व्यय 1954 और 1958 के मन्दी से पूर्व के उच्चतम स्तर से कुल एक ही प्रतिशत घटा।

इसके साथ ही प्रशासन की नीतियो ने व्यापार-उद्योग की हर मन्दी के प्रभाव को हल्का करने की कोशिश की। सन् 1953-54 की मन्दी मे एक ओर सघीय आरक्षित निधि बोर्ड ने ऋण और उधार की नीति को अधिक उदार बनाकर निवेश को प्रोत्साहन दिया और दूसरी ओर टैक्सो ने पहले
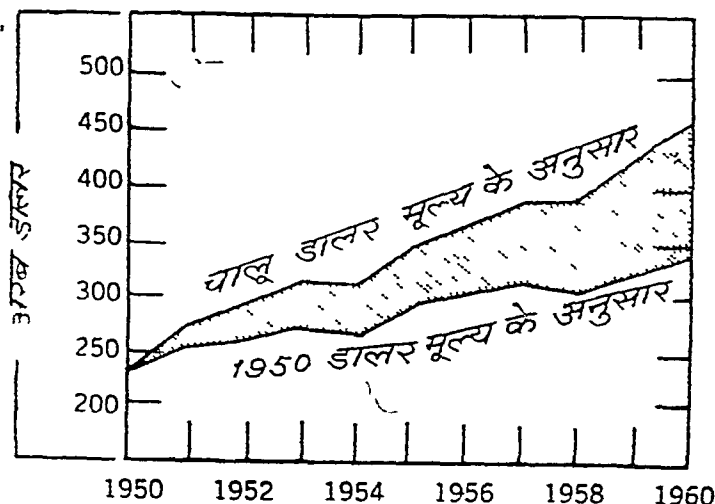
कुल राष्ट्रीय आय का अभिप्राय देश मे उत्पादित तमाम वस्तुओ और सेवाओ का मूल्य है। यह स्पष्ट है कि 1950 और 1960 के बीच राष्ट्रीय आय मे 76 8 प्रतिशत की वृद्धि हुई। किंतु इस वृद्धि का कुछ अश भ्रामक है, क्योकि डालर की क्रय-शक्ति मे इस अवधि मे ह्रास हो गया। इसलिए डालर के स्थिर मूल्यो के अनुसार राष्ट्रीय आय मे वास्तविक वृद्धि कुल 36 8 प्रतिशत हुई, परन्तु यह भी काफी बडी वृद्धि है।

से ही सुयोजित कटौती ने अर्थ व्यवस्था मे नई क्रय-शक्ति भर दी।

सन् 1957-58 की मन्दी के समय सरकार ने उसका मुकाबला करने के लिए कुछ भिन्न किस्म की नीति अपनाई। प्रशासन ने टैक्सो मे और भी अधिक कमी करने की व्यापक माँग का दृढता से सामना किया। किन्तु टैक्सो मे कमी न करते हुए भी सरकार ने स्थानीय और राज्यीय ऋणो और पूंजी-निवेश के लिए प्रोत्साहन दिया।

इनके अलावा सरकार ने आर्थिक पुनरुद्धार के लिए कुछ और उपाय भी बरते। उदाहरण के लिए उद्योगो को प्रोत्साहन देने की दृष्टि से उसने

1958 के पूर्वार्द्ध मे 1957 के उत्तरार्द्ध की अपेक्षा सैनिक सामग्री के दुगुने आर्डर दिए। सरकार के अन्य व्यय-कार्यक्रमो ने भी लोगो की आय बढाने और माँग को गिरने से बचाने मे योग दिया। सघीय सरकार ने जून, 1957 मे समाप्त वित्तीय वर्ष मे 80 अरब डालर खर्च किया था, किन्तु जून, 1959 मे समाप्त वर्ष मे उसका व्यय बढकर 94 अरब डालर हो गया। सघीय ऋण की सीमा मे भी वृद्धि हो गई। सन् 1959 के वित्तीय वर्ष मे सघीय बजट मे 12·5 अरब डालर का घाटा था, जो राष्ट्र के इतिहास मे शान्ति काल का सबसे अधिक घाटा था।

यद्यपि हर बार मन्दी से राष्ट्र की अर्थ-व्यवस्था बहुत जल्दी उभर आई और कुल राष्ट्रीय आय भी मन्दी से पहले के स्तर से 4 प्रतिशत से अधिक नीचे नही गई, तो भी इन मन्दियो की राजनीतिक प्रतिक्रियाएँ अवश्य हुई। इन प्रतिक्रियाओ का ही यह परिणाम था कि 1954 और 1958 के काग्रेस के चुनावो मे डेमोक्रेटिक पार्टी ने विजय प्राप्त की। मन्दी से ग्रस्त इलाको मे जनता ने सरकार से असन्तुष्ट होकर डेमोक्रेटिक पार्टी को जो वोट दिए, वे यह सिद्ध करते थे कि जनता पूर्ण रोज़गार से कम की स्थिति को स्वीकार करने के लिए किसी भी तरह राजी नही थी।

अर्थ-व्यवस्था को पूर्ण रोजगार की स्थिति के अनुकूल बनने के प्रयत्न 1950 के दशक के आर्थिक इतिहास का सिर्फ एक पहलू है। इसका एक पहलू और भी है। वह पहलू है इस स्थिति को कायम रखने के प्रयत्नो से उत्पन्न स्फीति और महँगाई की सम्भावनाओ को रोकने की प्रशासन की कोशिश। सन् 1950 के दशक के मध्य मे महँगाई को रोकने की यह समस्या और भी स्पष्ट रूप मे सामने आई। सन् 1952 के मध्य तक कोरिया की लडाई से उत्पन्न स्फीति और महँगाई का जोर घट गया और अगले चार वर्षो मे देश मे काफी हद तक मूल्य स्थिर रहे। किन्तु इसके बाद मार्च, 1956 से मार्च, 1958 तक दो वर्षो मे उपभोग्य वस्तुओ का सूचक अक फिर 7·5 प्रतिशत बढ गया।

स्फीति और महँगाई के कारणो के बारे मे अर्थ-शास्त्रियो मे बहुत मत-भेद रहा। कुछ लोग इसका कारण पुरानी परम्परागत दलील के अनुसार बताते थे। उनका कहना था कि वस्तुओ की उपलब्धि कम है और माँग

अधिक। दूसरे लोगो का कहना था कि महँगाई वढने का कारण वस्तुओ के उत्पादन की लागत वढ जाना है। दूसरे शब्दो मे इसका अर्थ यह था कि देश की उपलब्ध श्रम-शक्ति पर अनेक औद्योगिक ट्रेड यूनियनो ने पूर्ण अधिकार स्थापित किया हुआ था और इसका लाभ उठाकर वे वाजार की स्थिति को ध्यान मे रखे विना मनमानी वेतन-वृद्धि माँगती थी जिससे वस्तुओ का उत्पादन-व्यय वढ जाता था। इसी तरह कुछ कम्पनियो की वाजार मे एकाधिकार की-सी स्थिति थी, जिससे वे अपने उत्पादनो का मनमाना मूल्य रख सकती थी, दरअसल, उद्योगो के सचालको की ओर से अक्सर यह तर्क दिया जाता था कि मजदूरी और वेतनो के वढ जाने के कारण उनका अपने माल की ऊँची कीमत रखना अत्यन्त आवश्यक है। जो भी हो, यह सही है कि मजदूरी और अन्य चीजो की लागत के; वाजार की स्थिति की परवाह किए विना वढते जाने के कारण कीमते ऊँची हो गई थी।

महँगाई और स्फीति का कारण चाहे जो हो, प्रशासन ने उसे रोकने के लिए तत्काल कदम उठाए। सन् 1955 और 1958 के वीच सघीय आरक्षित निधि वोर्ड की नीति 1920 के दशक की अपेक्षा कही अधिक कठोर और मुट्ठी-भीच थी। सघीय सरकार ने अपने खर्च मे कमी कर दी। इस कटौती ने मुद्रा-स्फीति को कुछ हद तक रोका अवश्य, किन्तु 1950 के दशक के मध्य मे मूल्य-वृद्धि ने मुद्रा और वित्त सम्वन्धी नियन्त्रणो और मितव्ययिता की प्रभावकारिता के वारे मे गम्भीर सन्देह पैदा कर दिए।

अनुदार विचारधारा के लोग जब स्फीति की गम्भीर समस्या का मुकावला कर रहे थे, तब कुछ वस्तु-स्थितियाँ उनके सामने स्पष्ट होकर खडी हो गई। यह जाहिर हो गया कि सन्तुलित वजट वनाना सरकार के निश्चयो पर उतना अवलम्वित नही है, जितना कि अर्थ-व्यवस्था की वास्तविक स्थिति पर। कारण, सरकार अगर अपने खर्च मे कमी करना भी चाहे, तो अनेक सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक वाधाएँ उसके मार्ग मे खडी हो जाती है।

पहली वात यह कि स्वय स्फीति का अस्तित्व ही सरकार की खर्च की योजनाओ मे कटौती करना कठिन वना देता है। इसके अलावा कृषि-जिन्सो के मूल्यो को स्थिर रखने के लिए सहायता देने के कार्यक्रमो भूतपूर्व सैनिको

की पेन्शनो और स्टाक जमा करने के लिए सामान की खरीद के दायित्वो को भी सरकार को पूरा करना पडता है। इसी तरह श्रमिको को बुढापे की पेन्शन और बेरोजगारी का मुआवजा आदि देने के लिए ट्रस्ट निधियो मे भी उसके लिए धन डालना अनिवार्य होता है। इसके अतिरिक्त हवाई यातायात नियन्त्रण, राष्ट्रीय मार्गों का निर्माण और चिकित्सा अनुसन्धान आदि अन्य अनिवार्य कार्यक्रम भी सरकार के खर्च मे वृद्धि करते है।

किन्तु बजट मे सबसे बडी खर्च की मदे थी प्रतिरक्षा और वैदेशिक सहायता की। रिपब्लिकन प्रशासन प्रतिरक्षा के भार को अधिक घटाने मे समर्थ नही था, और न वह उसके लिए तैयार ही था, क्योकि सैनिक टैक-नोलॉजी मे भारी क्रान्ति हो रही थी और उसके लिए अधिक व्यय करना आवश्यक था। उसके अलावा राष्ट्रपति ने मित्र राष्ट्रो और अल्प विकसित देशो को सैनिक और आर्थिक सहायता देने के काफी बडे वायदे किये हुए थे।

सयुक्त राज्य के 1960 के दशक मे प्रवेश के समय अमेरिकन प्रशासन के सम्मुख सबसे प्रधान प्रश्न यह था "क्या वर्तमान परिस्थितियो मे, जब कि शीत-युद्ध जोरो पर है, सरकार ने मूल्य-स्थिरीकरण और सैनिक पेन्शन आदि के उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिये हुए है, राष्ट्रीय ऋण काफी बढे हुए है और बैंकिंग प्रणाली भी काफी उदारता से ऋण दे रही है, यह सम्भव है कि प्रशासन व्यापारिक उत्कर्ष को एकदम खण्ड-खण्ड करके गिरा देने वाला मन्दी का चक्कर आने से पूर्व ही मूल्यो की वृद्धि को रोक सके ? यदि यह मान लिया जाए कि आज की परिस्थितियो मे, जब कि मजदूर वर्ग और उद्योग-व्यवसाय, दोनो ही बहुत बडे हो गए है, पुराने तरीको से काम चल सकता है, तो यह प्रश्न उठता है कि क्या सरकार इन पुराने तरीको से महँगाई और स्फीति की समस्या को हल कर सकेगी ?"[1]

युद्धोत्तर काल की समीक्षा

सयुक्त राज्य आज अधिकतम रोज़गार, अधिकतम उन्नति और अधिकतम मूल्य-स्थिरता, तीनो लक्ष्यो की प्राप्ति के अधिक निकट प्रतीत होता है। किन्तु दूसरे विश्वयुद्ध के बाद अमेरिका मे आई तीन मन्दियाँ और निरन्तर चली आ रही हल्की स्फीति इस बात के सकेत है कि अमेरिका की अर्थ-व्यवस्था ऐसी स्थिति मे नही पहुँची, जहाँ वह सकटो मे पूर्णत मुक्त हो।

युद्ध के वर्षो मे अनेक अत्यधिक आदरणीय अर्थशास्त्री, खास कर हार्वर्ड विश्वविद्यालय के एल्विन एच० हैन्सन, यह दलील देते थे कि सयुक्त राज्य की अर्थ-व्यवस्था ऐसी परिपक्व 'निश्चल' अवस्था मे पहुँच गई है, जहाँ उसके लिए आर्थिक अभिवृद्धि का ऐसा स्तर कायम रखना, जो अधिकतम रोजगार के अनुकूल हो, अधिकाधिक कठिन होगा। हैन्सन ने यह आशका प्रकट की थी कि जनसख्या मे वृद्धि की गति का मन्द होना, प्राकृतिक साधन-सम्पदा का धीरे-धीरे क्षीण और विलुप्त होते जाना और बडी कम्पनियो मे अपने लाभ को पुन व्यवसाय मे लगाने के बजाय बचाए रखने की प्रवृत्ति का बढना—इन सबके परिणाम बहुत गम्भीर और विनाशकारी होगे।

लेकिन इन सब आशकाओ के बावजूद सयुक्त राज्य की युद्धोत्तर-कालीन अर्थ-व्यवस्था बहुत सफलता से अग्रसर होती रही। सन् 1959 मे प्रचलित डालर मूल्य के हिसाब से 1946 मे सयुक्त राज्य की राष्ट्रीय आय 3 खरब 19 अरब 50 करोड डालर थी, किन्तु 1960 मे वह बढकर 5 खरब डालर हो गई। यह वृद्धि 56 प्रतिशत से भी अधिक है। इसी प्रकार इसी अवधि मे व्यक्तिगत स्वायत आय (डिस्पोजेबल इन्कम) भी 36 प्रतिशत से अधिक बढी।

इस वृद्धि को समझने मे निम्न कारण सहायक सिद्ध हो सकते है

● **श्रमिको की उत्पादकता मे वृद्धि** राष्ट्रीय आर्थिक अनुसन्धान ब्यूरो (नेशनल ब्यूरो ऑफ इकनॉमिक रिसर्च) की 1959 की रिपोर्ट के अनुसार प्रति

मानव-घण्टा उत्पादन, जो दूसरे विश्वयुद्ध से पूर्व हर दशक मे औसत 29 प्रतिशत बढता था, इस युद्ध के बाद 35 से 40 प्रतिशत तक प्रति दशक के हिसाब से बढा। यह उत्पादकता वृद्धि अधिकाशत स्वचालित यन्त्रो और नये टैकनोलॉजिकल और वैज्ञानिक अनुसन्धानो और आविष्कारो का परिणाम थी।

● **आबादी मे वृद्धि** सन् 1930 के दशक मे विशेषज्ञो की भविष्यवाणी थी कि 1970 तक सयुक्त राज्य की आबादी 14 करोड हो जाएगी। किन्तु वास्तव मे जनसख्या-वृद्धि इससे कही अधिक तेज गति से हुई और 1950 के मध्य मे ही वह 17 करोड हो गई और 1960 मे वह और भी अधिक बढकर 18 करोड तक पहुँच गई।

● **उधार ऋण की सुविधाओ का साधारण विस्तार** सन् 1946 मे स्वल्प और मध्यम अवधि के ऋण, खासकर लोगो को किस्तो पर उधार सामान खरीदने के लिए दिये गए ऋण 8 4 अरब डालर थे, किन्तु 1959 मे वही बढकर 50 अरब डालर हो गए। इसी अवधि मे कृषि-भिन्न बन्धक ऋण (सम्पत्ति गिरवी रखकर लिया गया ऋण) 23 अरब डालर से बढकर 1 खरब 31 अरब डालर तक पहुँच गया। बन्धक ऋण मे हुई इस वृद्धि का लाभ यह हुआ कि कृषकेतर परिवारो मे से 60 प्रतिशत के 1960 तक अपने मकान हो गए। यह ऋण अधिकतर सरकार ने ही सस्ती ब्याज दरो पर दिए। सन् 1959 मे दिये गए बन्धक ऋणो का लगभग आधा भाग या तो सघीय सरकार के आवास विभाग ने दिया था या भूतपूर्व सैनिक विभाग ने।

● **सरकार की कार्यवाहियो मे वृद्धि** मन्दी के चक्रो का मुकाबला करने के लिए सरकार द्वारा अपनाई गई मुद्रा और वित्त सम्बन्धी नीतियो ने सकट के समय राष्ट्र की अर्थ-व्यवस्था को सकट से उबारा। इन मुद्रा सम्बन्धी और वित्तीय नीतियो को बेरोजगारी मुआवजा और सामाजिक सुरक्षा आदि कार्यक्रमो ने भी बल दिया, जो मन्दी को रोककर स्वत अर्थ-व्यवस्था को स्थिरता प्रदान करते है। इन कार्यक्रमो ने मन्दी के समय देश की अर्थ-व्यवस्था मे नई आय के द्वार खोले। इसीलिए 1949, 1954 और 1956 की मन्दियो के दौरान मे उत्पादन और रोजगार मे होने पर भी लोगो की व्यक्तिगत स्वायत आय खासे ऊँचे स्तर पर बनी रही।

सरकार के कर्तृत्व मे वृद्धि का दूसरा पहलू था सरकारी व्यय मे वृद्धि। सन् 1929 मे जहाँ सघीय,राज्यीय और नागरिक सरकारो ने सब मिलाकर कुल राष्ट्रीय आय का 11 प्रतिशत खर्च किया था, वहाँ 1959 मे उन्होने 20 प्रतिशत व्यय किया। दूसरे विश्व-युद्ध की समाप्ति के बाद के बारह वर्षो मे अकेले प्रतिरक्षा सम्बन्धी कार्यो के लिए ही सरकार ने 4 खरब डालर खर्च किये।

युद्धोत्तरकाल मे कुछ दीर्घकालिक प्रवृत्तियाँ, जो अमेरिकन समाज रचना मे महत्त्वपूर्ण परिवर्तनो को प्रतिबिम्बित करती थी, अधिक स्पष्ट हो उठी।

इनमे से एक प्रवृत्ति थी, एक नये मध्य वर्ग की अभिवृद्धि। सन् 1870 से 1940 तक सफेद पोश मध्यवर्ग (वेतन भोगी दफ्तर कर्मचारी आदि) ही आबादी की दृष्टि मे सबसे अधिक बढा। दूसरे विश्व-युद्ध के बाद इस वर्ग की अभिवृद्धि का रुझान और भी स्पष्ट और प्रखर हो उठा।

इससे भी अधिक नाटकीय परिवर्तन यह था कि लोग अब निर्माण-कार्य से हटकर दूसरे कामो मे रोजगार पर जा रहे थे। आज सयुक्त राज्य ही एक मात्र ऐसा देश है, जहाँ सामान के उत्पादन की अपेक्षा उसके वितरण और सेवाओ मे अधिक लोग लगे हुए है। इसका एक महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि निर्माण-उद्योगो मे उत्पादकता बहुत बढ गई है (खासतौर से स्वचालित यन्त्रो के प्रयोग से) और दूसरे विश्व-युद्ध के बाद तो यह वृद्धि का रुझान और भी तीव्र हो गया है। सन् 1947 के बाद निर्माण-उद्योगो मे उत्पादन का काम करने वाले श्रमिको की सख्या लगभग दस लाख कम हो गई है, फिर भी उत्पादन 50 प्रतिशत बढा है। निर्माण-उद्योगो मे कर्मचारियो की सख्या मे वृद्धि सिर्फ ऐसे ही वर्गो मे हुई है, जो उत्पादन नही करते—उदाहरण के लिए दफ्तरो के कर्मचारी और विक्रय विशेषज्ञ आदि। वास्तव मे युद्धोत्तरकाल मे नये रोजगार के अवसर अधिकतर देश की अर्थ-व्यवस्था के सेवा सम्बन्धी क्षेत्र मे ही पैदा हुए है, निर्माण उद्योगो के क्षेत्र मे नही।

सामाजिक रचना मे दूसरा दीर्घकालीन परिवर्तन था बडे आर्थिक वर्गो द्वारा राजनीतिक और आर्थिक सत्ता की अधिक प्राप्ति। युद्धोत्तर काल मे विशाल कम्पनियो की आर्थिक अभिवृद्धि के साथ ही विशाल राष्ट्रीय श्रमिक

सघो की शक्ति मे भी भारी वृद्धि हुई। इसका परिणाम यह हुआ कि मूल्यो और वेतनो का निर्धारण बाजार मे होने के बजाय कम्पनियो के सम्मेलन कक्षो मे मेज के चारो ओर बैठकर सम्बद्ध पक्षो की आपसी सौदेबाजी से होने लगा। इसके बावजूद मूल्य अन्तत अब भी उपभोक्ताओ की मॉग मे घट-बढ से काफी हद तक प्रभावित होते है, हालॉकि प्रारम्भ मे कुछ समय तक उनमे काफी स्थिरता रहती है। लेकिन सब मिलाकर यह कहा जा सकता है कि मूल्यो मे कमी नही हो रही, निरन्तर वृद्धि ही हो रही है और यही कारण है कि युद्धोत्तर अमेरिकन अर्थ-व्यवस्था मे धीरे-धीरे महँगाई और स्फीति बढ रही है।

कृषि पर टैकनोलॉजी के दीर्घकालीन प्रभावो ने खेती की पुरानी समस्या को फिर उभार कर सामने ला खडा किया। दूसरे विश्वयुद्ध मे और उसके बाद कोरिया की लडाई मे भी समुद्र पार के बाजारो मे अमेरिका की कृषि-जिन्सो की बहुत मॉग रही। लेकिन 1953 के बाद फालतू कृषि उत्पादनो की समस्या ने फिर उग्र रूप धारण कर लिया। कृषि मे उत्पादकता 1946 और 1959 के बीच बढकर लगभग दुगुनी हो चुकी थी, इसीलिए खेती मे लगे लोगो की सख्या इस अवधि मे 31 प्रतिशत कम हो जाने पर कृषि उत्पादन 25 प्रतिशत बढ गया। स्पष्टत इसका कारण यह था कि कृषि-टैकनोलॉजी देश की कृषि-उत्पादनो को खपाने की गति की अपेक्षा अधिक तीव्र गति से बढ रही थी। अभी तक इस समस्या के समाधान की दिशा मे बहुत कम प्रयत्न किया गया है।

टैकनोलॉजी की उन्नति ने अमेरिकन अर्थ-व्यवस्था की एक और दीर्घ-कालीन समस्या को उग्र से उग्रतर कर दिया है और वह समस्या है देश की सामान्य खुशहाली और समृद्धि के बीचोबीच गरीबी के कुछ अवशेषो का अस्तित्व। देश के कुछ इलाको मे जो मन्दी और उद्योग-व्यापार की शिथिलता के हमेशा शिकार रहते है, टैकनोलॉजी की उन्नति ने गरीबी को और बढा दिया है और रहन-सहन का स्तर गिरा दिया है, क्योकि स्वयचालित यन्त्रो और टैकनोलॉजी के अन्य अभिनव आविष्कारो के उपयोग ने वहॉ खेती, खानो और निर्माण-उद्योगो मे कर्मचारियो की छटनी से बेरोजगारी बढा दी है। पश्चिमी वर्जीनिया के कोयला खान क्षेत्र इसका एक ज्वलन्त उदाहरण

है। सयुक्त राज्य मे आय के असमान वितरण से सम्बद्ध इन तथा अन्य समस्याओ के समाधान के लिए सरकारी और गैर-सरकारी दोनो स्तरो पर गम्भीर और व्यापक प्रयत्न करने की आवश्यकता है।

पारिवारिक आय का विभाजन (वार्षिक आय के विभिन्न वर्गो का प्रतिशत हिसाब)
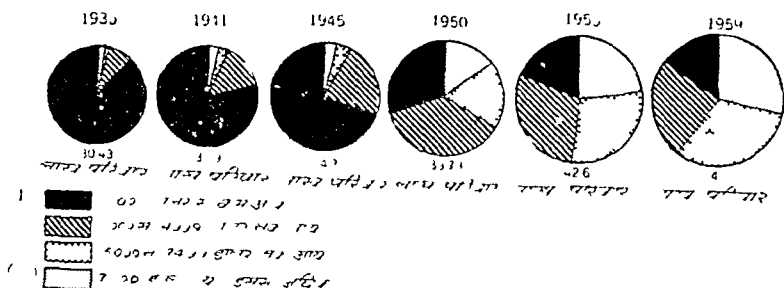
सन् 1930 के दशक की भारी मन्दी के बाद सयुक्त राज्य मे लोगो की पारिवारिक आय मे भारी वृद्धि हुई है, जैसा कि इस चार्ट से स्पष्ट है।

ये समस्याएँ अमेरिकन अर्थ-व्यवस्था के दीर्घकालीन रुझानो का परिणाम है। लेकिन युद्धोतरकालीन वर्षो मे राष्ट्र के सामने कुछ और नई समस्याएँ भी आ खडी हुई। शायद इनमे सबसे महत्त्वपूर्ण समस्या थी आर्थिक अभिवृद्धि की प्रक्रिया की। अर्थशास्त्री और राजनीतिज्ञ, दोनो ही आज राष्ट्र की आर्थिक प्रगति की मात्रा और स्वरूप को लेकर बहस-मुबाहसे मे पडे हुए है।

पिछले चालीस वर्षो मे सयुक्त राज्य की आर्थिक अभिवृद्धि पर यदि दृष्टिपात किया जाय तो, कम से-कम जहाँ तक इस अभिवृद्धि की मात्रा और विस्तार का सम्बन्ध है, चिन्ता का कोई कारण नजर नही आएगा। सन् 1919 और 1959 के बीच राष्ट्र की कुल राष्ट्रीय आय मे औसत 2 9 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हुई है लेकिन इस बात के प्रमाण है कि द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद आर्थिक वृद्धि की गति मन्द होने लगी। सन् 1947 और 1958

के बीच कुल राष्ट्रीय आय मे वार्षिक वृद्धि का औसत 1.6 प्रतिशत था। इस अवधि मे मन्दी से रहित वर्षो की औसत वार्षिक वृद्धि 3 5 प्रतिशत थी, इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि मन्दी के वर्षो मे वृद्धि बिलकुल नगण्य थी। इससे यह भी प्रतीत होती है कि एक हल्की-सी मन्दी भी सयुक्त राज्य के आर्थिक विकास की गति को शिथिल कर सकती है।

अन्य देशो की आर्थिक अभिवृद्धि के साथ तुलना करने पर मालूम होगा कि सयुक्त राज्य की अभिवृद्धि वैसी प्रभावोत्पादक नही है। यद्यपि विभिन्न देशो की कुल राष्ट्रीय आयो की तुलना पर भरोसा नही किया जा सकता, तो भी इस बात के प्रमाण है कि सयुक्त राज्य की आर्थिक अभिवृद्धि की गति पश्चिमी यूरोप के अनेक देशो की अभिवृद्धि की गति से धीमी है। किन्तु यह तुलना करते हुए इस बात को ध्यान मे रखना आवश्यक है कि युद्ध के बाद ससार के अनेक राष्ट्र सयुक्त राज्य की अपेक्षा विकास के कही नीचे स्तर पर थे। यदि अभिवृद्धि को प्रतिशतकता के हिसाब से नापा जाय तो स्वभावत जो राष्ट्र विकास के नीचे स्तर से प्रारम्भ करेगा, उसकी प्रतिशत अभिवृद्धि पहले से ही ऊँचे स्तर पर विद्यमान राष्ट्रो से अधिक सिद्ध होगी। फिर भी सयुक्त राज्य मे लोग अब इस बात पर बल देने लगे है कि वार्षिक अभिवृद्धि की गति को और भी बढाया जाना चाहिए।

हमारी आर्थिक समृद्धि का दूसरा विवादग्रस्त पहलू उसका स्वरूप रहा है। सन् 1950 के दशक मे इस विवाद मे अनेक अलोचको ने यह कहा है कि राष्ट्र के धन और साधनो का समुचित वितरण नही हो रहा। उनका कहना था कि श्रम और पूँजी दोनो का जितना उपयोग उपभोक्ताओ के काम की टिकाऊ वस्तुओ के निर्माण मे हो रहा है, उसकी तुलना मे स्वास्थ्य, शिक्षा, नगर-सुधार आदि आधारभूत सामाजिक सेवाओ और सुविधाओ मे उनका उपयोग बहुत ही कम मात्रा मे हो रहा है।

सरकारी और गैर सरकारी दोनो क्षेत्रो मे ऐसा प्रतीत होना है कि आधारभूत सामाजिक सेवाओ की बहुत उपेक्षा होती रही है। उदाहरण के लिए प्राइवेट विश्वविद्यालयो को शिक्षा-शुल्क मे काफी वृद्धि कर देने पर भी भारी आर्थिक कठिनाई का सामना करना पडा है। सरकारी क्षेत्र मे भी, जहाँ आलोचको को सबसे अधिक कमियाँ और त्रुटियाँ दिखाई देती है, स्कूलो

की देशा अच्छी नही रही। अधिकतर स्कूलो मे छात्रो की सख्या उससे कही अधिक रही, जितनी सख्या को भली-भाँति शिक्षा दी जा सकती थी। विशेषज्ञो का कहना है कि 1945 के वाद सयुक्त राज्य के सरकारी स्कूलो मे 1,80,000 नये कक्षा भवनो का निर्माण किया गया है, फिर भी 1959 मे सारे राष्ट्र मे 1,30,000 कक्षा-भवनो की कमी थी। अस्पताल की सुविधाओ मे भी वहुत अधिक कमी रही है। अनेक शहरो मे भीड-भाड इस कदर रही है कि उनमे मोटरो और वसो का चलाना प्राय असम्भव रहा है। स्थिति इतनी गम्भीर हो गई कि राष्ट्रपति के सार्वजनिक निर्माण कार्यो के विशेष सहकारी मेजर-जनरल जे० एस० ब्रैगडन ने 1959 मे अपनी रिपोर्ट मे कहा कि "क्या अस्पताल और क्या स्कूल या नागरिक मनोरजन केन्द्र—सभी सार्वजनिक निर्माण-कार्यो मे हमे कमी नजर आ रही है और यह कमी अपवाद नही, नियम वन गई है।"

उपभोक्ता भी इसके लिए कम दोषी नही है। कुछ अर्थशास्त्रियो का कहना है कि यद्यपि अमेरिकन लोग ससार के अन्य सभी देशो से अधिक सामाजिक सेवाओ का उपभोग कर रहे है, फिर भी उनमे घरेलू मशीनो और घरो मे काम आने वाली अन्य टिकाऊ वस्तुओ पर वहुत अधिक खर्च करने की ओर शिक्षा और स्वास्थ्य आदि पर वहुत कम खर्च करने की प्रवृत्ति है।

फिर भी सयुक्त राज्य के लिए यह गौरव की वात है कि 1950 के दशक मे इन त्रुटियो के वावजूद सयुक्त राज्य जिस समृद्धि का उपयोग कर रहा था, वह ससार के सभी देशो के लिए, यहाँ तक कि सोवियत सघ के लिए भी, ईर्ष्या और स्पृहा की वस्तु था। कारण यह कि 1950 के दशक मे सयुक्त राज्य को जिन समस्याओ का सामना करना पड रहा था, एक समझदार आलोचक के शब्दो मे, वे समृद्धि और वाहुल्य से उत्पन्न समस्याएँ थी। यदि अमेरिकन लोग यह अनुभव करने लगे थे कि उपभोग और सामान्य भौतिक सुख-सुविधाओ का ऊँचा स्तर ही मानवीय सुख मे वृद्धि करने के लिए पर्याप्त नही है, तो उनका इस वात पर वल देना भी सही था कि समृद्धि और वाहुल्य की समस्याओ को मनुष्य अभाव और गरीवी की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह सहन कर सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि वहुत से अन्य देश भी स्वय वाहुल्य की ही समस्याओ के समाधान के लिए

चिन्तित और व्याकुल थे।

युद्धोत्तर काल मे अमेरिकन अर्थ-व्यवस्था के सामने सबसे बडी चुनौती पूर्ण रोजगार, मूल्यो की स्थिरता और आर्थिक अभिवृद्धि को कायम रखने के लिए साधन खोजने की थी। उपलब्धियो के किसी भी पैमाने से नापने पर यह बात नि शक होकर कही जा सकती है कि अमेरिकन जनता ने 1950 के दशक का उपयोग इन चुनौतियो का प्रभावकारी ढग से सामना करने के लिए किया। फिर भी जो काम अधूरे रह गए, उन्हे भविष्य मे पूर्ति के लिए छोडा जा सकता है।

नये युग की चुनौती

उपसंहार

सयुक्त राज्य की जनता को आज राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दोनो क्षेत्रों मे नये युग की यथार्थताओ और समस्याओ का सामना करना पड रहा है। यह कोई मामूली बात नही है, क्योकि कुछ थोडे से चुने हुए विशेषज्ञो या मत-निर्धारको का वक्त की आवश्यकताओ को पहचानना एक बात है और सारे समाज का अपने अतीत के कार्यो का सिहावलोकन करना, अपनी वर्तमान कमजोरियो और ताकतो का मूल्याकन करना और भविष्य की आवश्यकताओ को पहले से ही अनुमान कर उनके अनुरूप अपनी मनोवृत्ति बनाना बिलकुल दूसरी ही बात है।

जॉन एफ० कैनेडी

एक अपेक्षाकृत स्वतन्त्र समाज मे, जहाँ विविध प्रकार की सम्मतियो, रुचियो और यहाँ तक कि पूर्वग्रहो को भी अभिव्यक्त करने की गुजायश है और उन्हे अभिव्यक्त किया भी जाता है, वहाँ न तो जन-कल्याण की सहज मे ठीक-ठीक व्याख्या ही की जा सकती है और न उसे आसानी से हीन रूप

मे प्रस्तुत कर उपेक्षित ही किया जा सकता है। आठ नवम्बर, 1960 का आम चुनाव ऐसे वक्त आया जब कि संयुक्त राज्य के भविष्य के बारे मे विचारो को काफी स्पष्ट रूप दिया जा चुका था, और उन्हे क्रियान्वित करने या न करने के प्रश्न को सार्वजनिक विवाद का विषय बनाया जा सकता था। जनता ने राष्ट्रपति पद के लिए दो उम्मीदवारो मे से, जिन्होने अमेरिकन समाज के सामान्यत स्वीकृत लक्ष्यो की पूर्ति के लिए अपनी-अपनी दृष्टि से आवश्यक और उपयुक्त कार्यक्रम पेश किए, एक को चुन लिया।

आज हम फिर एक नई सीमा पर खडे है, चाहे, हम उसे पसद करें या न करे। इस सीमा के पार जाकर हमे विज्ञान और अतरिक्ष के अज्ञात प्रदेशो की खोज करनी है, शान्ति और युद्ध की अनसुलझी समस्याएँ सुलझानी है, अज्ञान और पूर्वग्रह के अविजित स्थलो को जीतना है और गरीबी और इफरात के अनुत्तरित प्रश्नो का उत्तर खोजना है।

—जॉन एफ० कैनेडी

15 जुलाई, 1960 को राष्ट्रपति-पद के चुनाव मे डेमोक्रेटिक पार्टी की उम्मीदवारी स्वीकार करते हुए।

जॉन एफ० कैनेडी की विजय बहुत कम मतो के अन्तर से हुई, इसका अर्थ यह नहीं समझा जाना चाहिए कि सिद्धान्तो के मामले मे देश मे पूर्ण ऐक्य नहीं था। इसीलिए नये प्रशासन को न गलियो मे किसी उपद्रव का सामना करना पडा और न ही ससद् ने उसके मार्ग को अवरुद्ध किया। चुनाव आन्दोलन मे सब दलो ने अपने-अपने पक्ष मे प्रचार किया और मतदाताओ से अपीले की, किन्तु जहा एक बार चुनाव सम्पन्न होने पर यह आन्दोलन अतीत की वस्तु बन। कि सारे राष्ट्र ने दलगत भेदभाव भुलाकर सत्ता के सुव्यवस्थित और निर्विघ्न हस्तान्तरण का स्वागत किया और वह भविष्य की समस्याओ और अवसरो का सामना करने के लिए उत्सुक हो उठा। कारण, देश का अत्यन्त जाहिल और काहिल नागरिक भी यह अनुभव कर

हुआ था कि 1960 के दशक की नई आवश्यकताओ और चुनौतियो का सामना करने के लिए निपुणता, सामजस्य-कौशल और अनुक्रियाशीलता के एक विशिष्ट मिश्रण की जरूरत होगी। युद्धोत्तर काल अव समाप्त हो चुका था। इसलिए स्वभावत' देशवाशियो के लिए अभिनव क्षेत्रो मे प्रवेश का वक्त आ गया था।

अमेरिका के आर्थिक इतिहास को किसी भी अन्य राजनीतिक स्थिरता वाले समाज की भाँति उतार-चढाव के न्यूनाधिक नियमित चक्रो मे बाँटा जा सकता है। खास तौर से गृह-युद्ध की समाप्ति के बाद, जब कि आज के उद्योग-व्यापार सम्पन्न सयुक्त राज्य का वास्तविक उदय प्रारम्भ हुआ, हमे ये उतार-चढाव स्पप्ट नजर आते है। इन चक्राकार उतार-चढावो मे हम एक वार अनुदार प्रशासन को सत्तारूढ देखते है तो दूसरी वार उदार प्रशासन को, एक वार आर्थिक क्षेत्र मे हस्तक्षेप-रहित अवन्ध नीति का बोलवाला देखते है तो दूसरी वार सरकारी नियन्त्रणो और प्रतिवन्धो का, एक वार तीव्र गति से आर्थिक अभिवृद्धि का युग देखते है तो दूसरी वार मन्दी और ह्रास का एव राप्ट्र के अपने-आपको तदनुकूल वनाने के प्रयत्नो का। ये उतार-चढाव अमेरिकन समाज मे पाई जाने वाली एक 'अपूर्णता' के परिणाम है, किन्तु यह अपूर्णता भी लाभकारी है, क्योकि वह विचारो की विविधता को भी एक युग मे परिणत कर देती है और लोगो के व्यक्तिगत निश्चयो और आकाक्षाओ के भीतर से एक राप्ट्रीय लक्ष्य को निकालकर देश के सामने रख देती है। सयुक्त राज्य की आर्थिक प्रणाली निर्विघ्न भाव से विना किसी विच्छेद के चली आ रही है, यह अमेरिकन जनता के आत्म-विश्वास का वहुत वडा प्रमाण है। और यह प्रणाली भविष्य मे भी इसी तरह चलती रह सकती है, क्योकि अमेरिकन जनता मे स्वशासन की विशेप प्रतिभा और क्षमता है।

किन्तु एक अपूर्ण समाज की उपज होने के कारण, (और पूर्ण समाज है ही कहाँ ?), अमेरिकन अर्थ-व्यवस्था की भी कुछ अपनी विशिष्ट समस्याएँ है, जिन्हे 1960 के दशक मे देश को हल करना है। ये समस्याएँ एक सुविकसित अर्थतन्त्र की समस्याएँ है, जिसमे जीवन की आवश्यकताओ को पूरा करने का काम उतना नही है, जितना कि जीवन की पूर्णता को पूर्णतर

बनाने का काम है, जहाँ वस्तुओ की अपर्याप्तता उतनी बडी समस्या नही है, जितनी बडी समस्या उनका अत्यधिक बाहुल्य है।

द्वितीय विश्व-युद्ध की समाप्ति के बाद एक दशक से भी अधिक समय तक अमेरिकन जनता अपने जीवन-स्तर मे आई उस गिरावट को पूरा करने मे व्यस्त रही, जो इस विश्वव्यापी युद्ध के कारण आ गई थी। इस अवधि मे उपभोग्य वस्तुओ की खरीद मे इतनी तेजी से वृद्धि हुई कि देश की अर्थ-व्यवस्था एक नये ऊँचे स्तर पर पहुँच गई। सन् 1959 तक अमेरिका मे तीन-चौथाई परिवारो के पास अपनी निज की मोटर कारे थी। 90 प्रतिशत अमेरिकन घरो मे टेलीविजन सेट और कपडे धोने की मशीने थी। और ऐसा तो शायद एक भी घर नही होगा जहाँ रेडियो न हो और रेफ्रिजरेटर भी प्राय हर घर मे पाया जाता था।

टिकाऊ उपभोग्य सामग्रियो का इतने बडे पैमाने पर अमेरिकन जनता द्वारा उपयोग स्पष्टत यह सिद्ध करता है कि अमेरिकन समाज के एक विशाल भाग को जीवन की भौतिक सुख-सुविधाएँ पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध हैं। सन् 1970 के लिए अर्थ-व्यवस्था की उन्नति के जो लक्ष्य निर्धारित किये गए है, वे भी किसी तरह निरुत्साहित करने वाले नही है। यदि एक दशक के भीतर जनसख्या मे 20 प्रतिशत भी वृद्धि हो जाय तो भी एक दशक के भीतर राष्ट्रीय आय को 7 खरब 90 अरब डालर तक पहुँचाने का लक्ष्य पूरा हो जाने पर प्रतिव्यक्ति उपलब्ध वस्तुओ और सेवाओ मे मूल्य की दृष्टि से 36 प्रतिशत वृद्धि हो जाएगी। इसलिए जब हम अमेरिकन अर्थ-व्यवस्था की 'समस्याओ' का उल्लेख करते है तो हमारा-अभिप्राय समस्या के सामान्य अर्थ से नही होता।

आज अमेरिकन जनता के मन मे जिस आर्थिक स्तर की आकाक्षा है, वह नि सन्देह बहुत ऊँचा है। कारण युद्धोत्तर काल के समाप्त हो जाने के बाद अमेरिका की स्थिति मे एकाएक नाटकीय परिवर्तन हो गया है और अन्तर्राष्ट्रीय बाजार मे उसके अनेक प्रतिद्वन्द्वी पैदा हो गए है। इस नई स्थिति ने अमेरिका की आन्तरिक अर्थ-व्यवस्था पर सूक्ष्म, किन्तु गम्भीर प्रभाव डाला है, जिससे अमेरिकनो के लिए अपने मन के अनुकूल भावी समाज के निर्माण मे अनेक बाधाएँ पैदा हो गई है।

[illegible]न जनता आज जिन ऊँचे लक्ष्यो को पाना चाहती है, उनमे [illegible] पह[illegible] यह है कि उसे आय की अबसे अधिक सुरक्षा और सुनिश्चितता [illegible]ाप्त हो। आर्थिक दृष्टि से मन्दी के शिकार रहने वाले इलाको मे, या बडे पैमाने पर सामूहिक रूप से सामान तैयार करने वाले उन उद्योगो मे, जो अपनी युद्धोत्तरकालीन अभिवृद्धि की तीव्र गति को कायम नही रख सके है, बेरोजगारी अधिक होने के कारण देश की कुल असैनिक श्रम-शक्ति का कम-से कम पाँच प्रतिशत भाग 1959 से बेरोजगार चला आ रहा है। यद्यपि देश के वेतनोपजीवी लोगो की एक विशाल सख्या की आय अन्य देशो की तुलना मे काफी ऊँची है, फिर भी टैकनोलॉजिकल आविष्कारो और नवीन विधियो एव बाजार की माँग मे तेजी से होने वाले परिवर्तनो ने करीब 27,00,000 व्यक्तियो को न्यूनाधिक बेरोजगार बना दिया है। इसके साथ ही समय-समय पर आने वाले व्यापारिक मन्दी के चक्करो, बूढे लोगो की लम्बी बीमारी के खर्च को वहन करने की असमर्थता, बडी व्यापारिक कम्पनियो और सगठनो एव मजदूर यूनियनो के बीच आपसी समझौते से हुए निश्चयो के सार्वजनिक प्रभाव, स्फीति और महँगाई मे धीरे-धीरे किन्तु सतत रूप से हो रही वृद्धि और आगामी दशको के अत्यन्त आवश्यक कामो के लिए प्रशिक्षण पा रहे युवको की गलत शिक्षा से इन समस्याओ और कठिनाइयो मे और भी वृद्धि हो रही है।

आज जब अमेरिकन जनता अपने समाज के सामने फैले नये विस्तृत सीमान्त की ओर नजर डालती है तब उसे ये और इसी तरह की दूसरी समस्याएँ मुँह बाये खडी दिखाई देती है। यदि ये समस्याएँ स्वय अमेरिकनो की ही पैदा की हुई हो तो वे समाधान की प्रक्रिया मे हिस्सा लेकर उनकी कीमत चुकाने को तैयार है। युद्धोत्तरकाल की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना शायद यह है कि आज लोगो ने उपभोक्ताओ, प्राइवेट व्यवसायियो और सरकार तीनो के बीच समन्वय की अनिवार्यता को भली भाँति महसूस कर लिया है। उन्होने यह सत्य भी अच्छी तरह हृदयगम कर लिया है कि समाज के इन तीनो वर्गो की अपनी विशिष्ट शक्तियाँ और क्षमताएँ है, जिनसे वे आर्थिक व्यवस्था मे शेष दोनो के योग की कमी पूरी कर सकते है।

नये क्षेत्रो मे प्रवेश एक ऐसा साहसपूर्ण अभियान है जिसमे हर अमेरिकन

अपनी योग्यता के अनुसार भाग लेगा। जब ससार मे सभी जगह जनता भौतिक प्रगति की ओर जमकर पग बढाने लगेगी, तब इतिहासकार शायद यह कहेगे कि विश्व की इस प्रगति मे अमेरिकन जनता ने एक विशिष्ट योगदान किया और वह योगदान यह है कि उसने व्यक्तिगत उद्यम और अभिक्रम को तुलनात्मक दृष्टि से अन्य प्रणालियो से अधिक मूल्यवान सिद्ध कर दिया।

यह है प्रगति की सतत और अनवरत दौड मे उठने वाली नित्य नूतन समस्याओ का सामना करने की अमेरिकन पद्धति की अतीत, वर्तमान और भविष्य की रोमाचक कहानी।